विश्व चितन सीरीज

प्लेटो—सवाद	प्रस्तुति—बद्रीनाथ कौल
नीत्शे—जरथुष्ट्र ने कहा	प्रस्तुति—मुद्राराक्षस
मकियावली—शासक	प्रस्तुति—शशिप्रभु
शख सादी—गुलिस्तान	प्रस्तुति—रामकिशोर सक्सेना

सम्पादन डॉ० नीलिमा सिंह



सरस्वती विहार



सार्त्र

शब्दों का मसीहा

प्रभा खेतान

सार्त्र शब्दों का मसीहा
(चिंतन)

संपादन
डॉ० नीलिमा सिंह

प्रथम संस्करण 1985
द्वितीय संस्करण १९८७

प्रकाशक
सरस्वती विहार
जी० टी० रोड शाहदरा
दिल्ली 110032

मुद्रक
सोनी आफसेट प्रिंटर्स
शाहदरा दिल्ली 110 032

मूल्य पैंतीस रुपये

SARTRE SHABDON KA MASIHA Second Edition 1987
Dr PRABHA KHAITAN Price 35-00

क्रम

अपनी बात.

सार्त्र को मसीहा बनने की चाह नहीं थी। वे पूरी आक्रामकता से पहले और आखिरी आदमी बनकर रहना चाहते थे—अपनी समग्रता और एकीकरण में हर आदमी के जीवन का हिस्सा बनकर। वे धरती के करीब रहना चाहते थे, ताकि धूल के कण को पहचान सकें। उन्हें विश्वास था कि जीवन गर्दिश में पनपता है और निराशा के अंतिम कगार पर खड़े होकर आदमी फिर से जीना शुरू कर देता है।

विश्व साहित्य में इतनी बेबाक ईमानदारी, प्रामाणिकता की ऐसी गहरी चाह साहित्यकारों में कम ही मिलती है। सार्त्र ने किसी का सहारा नहीं लिया, न किसी पलायन को स्वीकारा। उनके पास न उनका खुदा था न धर्म सिद्धान्त, न अचेतन का अपराधबोध, न जातिगत संस्कृति का बोझ, न पिता, न गुरु—तभी वे कह सके "आदमी बिल्कुल अकेला है और पूरी तरह स्वतंत्र, चूंकि वह स्वतंत्र है, अपनी सारी संभावनाओं के साथ वह कोई भी निर्णय ले सकता है और हर लिए हुए निर्णय के साथ प्रतिबद्धता उसकी अपनी है।"

सार्त्र एक लेखक दार्शनिक, राजनीतिक, सामाजिक अभिकर्त्ता, मानव मुक्ति के पैगम्बर, शब्दों के मसीहा—एक अद्भुत मिश्रण थे। उनका जीवन इस पूरी शताब्दी की सबसे महानतम बौद्धिक घटना है। ७० वर्ष तक लेखन धर्म निभाने के बाद एक के बाद एक सीढ़ियां परिवर्तन के घुमावदार मोड़—आरम्भ में कल्पना-लोक में रहने वाले सार्त्र—बाद में जगत में, जागतिक घटनाओं में, पूरी तरह निमज्जित वे मानव स्वातन्त्र्य की आखिरी पुकार थे। उन्होंने आदमी होने के दर्द को झेला जीवन को पूरी दिलेरी से जिया, तभी वे कह सके—"आदमी स्वतन्त्र है किसी भी स्थिति में—वह अपना निर्माता और स्रष्टा स्वयं ही है।" सार्त्र आदमी

बचाना चाहते थे एक आम आदमी की तरह। वे कहते हैं—"आदमी अन्ततोगत्वा केवल आदमी बन सकता है, मटर, बेर, या बिल्ली नहीं।" आदमी के प्रति उनकी यह अडिग आस्था, यह विश्वास, मानव स्वातन्त्र्य के लिए प्रतिबद्धता, उन्हें किसी भी वाद, तन्त्र या व्यवस्था से जुड़ने नहीं देती। व्यवस्था आदमी बनाता है अपने होने के लिए, जीने के लिए और जब यही व्यवस्था आदमी को खाने लगती है, तब उसकी स्वतन्त्र चेतना क्रांति की पुकार करती है।"

व्यक्ति और समाज स्वतन्त्रता और व्यवस्था, व्यक्तिपरकता और वस्तु-परकता आदर्शवाद और यथार्थवाद—सार्त्र इस द्वंद्व में नहीं उलझे। वे जीवन को समग्रतर की ओर जाने की एक महती परियोजना ही मानते रहे। अनुभव से अनुभवातीत की ओर दी हुई परिस्थिति का अतिक्रमण करते हुए अन्योन्याश्रित होते हुए भी व्यक्ति की, समाज और व्यवस्था के दमन से अपने आप को बचा लेने की चेष्टा, संघर्ष में अपने को विनियोजित करना, कहीं कोई पलायन नहीं—कला है, तो जनहित के लिए, बौद्धिकी है, तो वह जन की आवाज बने—यही सार्त्र का चिन्तन था। इसीलिए सार्त्र ने नोबल पुरस्कार नहीं स्वीकारा। नोबल पुरस्कार की इस प्रकार की बुर्जुवाई संवर्द्धनाओं के खिलाफ वे कहते हैं कि यदि कुछ को सर्वोपरि रखा जाये, किसी एक का अभिनन्दन किया जाये, तो अपने-आप में यह क्रमागत विश्लेषण बहुजन का अलगाव लिये हुए होता है। वे उन सामाजिक सम्बन्धों में आमूल परिवर्तन चाहते थे जो अभिजनों का जनक होता है और जन का शोषण करता है। वे प्रतिभाओं के मूल्यांकन यानी 'रेटिंग' तथा अभिजन 'स्टार सिस्टम' के बिल्कुल विरोधी थे।

दरअसल बुर्जुवा वर्ग बुद्धिजीवियों के प्रति हमेशा चिन्तित रहा है, क्योंकि बुद्धिजीवी वह अजीबोगरीब जन्तु है जिसे बुर्जुवा समाज ने पैदा किया है। बुर्जुवा समाज जानता है कि अधिकतर बुद्धिजीवी मध्यम वर्ग में पैदा हुए हैं और मध्यमवर्गीय मूल्यों के बीच पनपते बढ़ते हैं। वे उन्हीं संस्कारों और मूल्यों से संस्कारित और पारित रहते हैं फिर चाहे उसकी सारी जिन्दगी पूर्व संस्कारों से मुक्ति संघर्ष में ही क्यों न बीते। बुर्जुवा अपने-आप को संस्कृति का संरक्षक मानता है और स्थापित संस्कृति को ज्यों का त्यों आन

वाली पीढी को सौंप देना अपना परम धम समझता है। यही कारण है कि व्यावहारिक काल के ये ठेकेदार सस्कृति की पहरेदारी म लगे रहते हैं। इस पहरेदारी के लिए बुर्जुवा इनाम समय समय पर घोषित किये जाते है। इ'ही पहरेदारो को सस्था और मच पर बैठाया जाता है, ताकि वे व्यवस्था की रक्षा कर सकें। ऐसा भी होता है कि कुछ बुद्धिजीवी यथास्थिति की बात नही करते। उनकी सोच का पहलू व्यवस्था के खिलाफ होता है। पर बुजुवा समाज बडी सतकता से इनकी तहकीकात करता है कि अमुक बुद्धिजीवी कहा तक विध्वसक हो सकता है? इस बात का पता लगाया जाता है और तब एक सुनियोजित ढग से, बडी सूक्ष्मता के साथ इस 'इलीट' बुद्धिजीवी वग को, उसके वातावरण को, नियन्त्रित किया जाता है। व्यवस्था के खिलाफ भौकनेवाला बुद्धिजीवी अप्रत्यक्ष रूप से पालतू बना लिया जाता है। वह 'इलीट' बुद्धिजीवी सोचता है कि उसके लेखन से समाज के मूल्य बदल रहे हैं, लेकिन यह एक भ्रम है। बुर्जुवा समाज मूल्यो को उसी सीमा तक बदलने की इजाजत देता है जिस सीमा तक इसकी जरूरत है। यदि बुद्धिजीवी का कोई मुहावरा उसके अपने हित मे हो, वग स्वाथ की कोई मुश्किल उससे आसान होती हो, तो बुर्जुवा उसका फायदा उठान स नही चूकता।

ये 'इलीट' बुद्धिजीवी सत्ता के खिलाफ बोलते हुए भी सत्ता की भाषा मे बोलत हैं। इनकी पीठ थपथपाई जाती है। विनयपूवक इ'हे पुरस्कार दिय जात हैं। किसी सास्कृतिक अकादमी के पद पर इ'हे आसीन भी करा दिया जाता है। यही बुजुवा 'स्टार सिस्टम' है जिसकी नरम बाहो म कद 'इलीट बुद्धिजीवी चाहे फिर कितना भी छटपटाए, ध्रुवतारा होन की चाह से मुक्ति नही पा सकता। विशिष्टता का मोह उसे सत्ता का साझेदार बना देता है और वह समुदाय को महज एक भीड कहन लगता है।

सवाल यह उठता है कि सात्र अपने-आप को किस वग का बुद्धिजीवी कहत हैं? बुजुवा तो वह भी हैं, उ'ही मध्यमवर्गीय मूल्यो को लेकर बडे हुए हैं, उसी भाषा मे तमाम जिन्दगी बालते भी रहे।

सात्र स्वयं को तीसरे दर्जे का बुद्धिजीवी मानते हैं जो अपने-आप म एक चलता फिरता विरोधाभास है। न वे सत्ता के साथ रह सके, न सर्वहारा

की पुस्तक का जहा तक सवाल है, जो मैं लिख रहा हू, मुझे आप एक बिगडैल बच्चा समझ लीजिए, जिसे बचाने की कोशिश बुर्जुवा वर्ग करेगा। (ये विरोधाभास केवल इस बात की जानकारी देते हैं कि हमारा लेखकीय दायित्व कितना अधिक है। इस विरोधाभास की जडे गहरी है और मेरे जीवन का सबसे बडा मिशन है इन विरोधो को प्रकाश मे लाना, सर्वहारा से सवाद स्थापित करना, उनके अनुभवो का हिस्सा बनना। मै अपने लेखक होने का दावा तभी तक करूगा जब तक मेरा यह प्रयास जारी रहेगा, अन्यथा मैं मौन रहूगा।)

सार्त्र की सबसे बडी लेखकीय अपील, जो हर प्रबुद्ध पाठक को भी भीतर से आन्दोलित करती है, वह उनके इस कथन की ईमानदारी है। पढने लिखने वाला आदमी चाहे किसी भी वर्ग या सम्प्रदाय का हो, इस ईमानदारी से प्रभावित होता है। सार्त्र एक दार्शनिक लेखक थे और एक ईमानदार दार्शनिक की तरह वे हमेशा जीवन के विरोधाभासो के प्रति सचेत रहे। द्वद्वो का अतिक्रमण वे कर सके या नही, यह एक अलग बात है, लेकिन द्वद्वो और विरोधाभासो के प्रति सजग रहना और अपने शब्दो मे उन्हे पूरी तरह व्यक्त करना, बुद्धिजीवी जगत की एक मौलिक ईमानदारी है, जो हम सार्त्र मे पाते है।

'शब्दो के मसीहा' का दर्द बस इतना ही है। इसे अभिव्यक्ति देने के लिए मैं काफ्का के शब्दो का सहारा लूगी

"यह दर्द ईसा मसीह के कलेजे का बहता हुआ घाव है, जो रोज धोया जाता है और फिर से रोज बहने लगता है। सार्त्र इस दर्द को भोगते रहे। जिनके लिए उन्होने आवाज उठाई, वे सर्वहारा भी उन्हें नही समझ पाये। चूकि वे बुर्जुवा भाषा मे बोल रहे थे, इसलिए सदेह की दृष्टि से देखे गये। वे सत्ता के भागीदार मान गये जो वे कभी नही रहे।"

और उनकी सम्पूर्ण जीवन-यात्रा एक अकेली यात्रा बनकर रह गई—शब्द से शब्द तक। बस इतना ही।

२ अक्तूबर, १९८५
४, लिटल रस्सल स्ट्रीट, कलकत्ता

शरद जोशी

१४ सार्त्र शब्दों का मसीहा

हुए जिनमें वादलेयर (१९४६) ज्यां जेने और नफरत मुद्दे मार्टीयर' (१९६४) तथा निराशाग्रस्त क्रमांक जिनके पृष्ठ ... दो खण्ड ... तक प्रकाशित न पाये। उनकी विचार ... जनावट का जायजा ... करीब २ ५०० पृष्ठ ... हैं। ... तीन खण्ड प्रकाशित हुए। ... थे। अभी भी उनके ... रही हैं।

अपनी आत्मकथा ... जीवन गाथा सिमोन द बाउआर ... के जीवन की प्रारम्भिक घटनाओं में ही हम ... अपना आत्म है। चूंकि विशिष्टता की ... भांति ... आत्मकथा है कथा का ... हुए जीवित ... की भांति ... सामने रखा है लेकिन इस महान् लेखक की यह विचित्र आत्मकथा है जिसमें क्रमागत रूप से वहीं भी जीवन की घटनाओं का वर्णन नहीं मिलता। जीवन को कालक्रम में रखने की चाह का ... बुर्जुआजी चाह-भर मानते रहे हैं। बुर्जुआजी विशिष्टता की चाह में सितारों के आकाश में अपना नाम टांक देते हैं या फिर किसी म्यूजियम की दीवारों पर लटकना पसन्द करते हैं—सार्त्र की नजर में यह हमेशा ही उपहासास्पद रहा।

आप कल्पना कीजिए तीन वर्षीय सार्त्र की जो अपनी युवा विधवा मां के साथ पेरिस के अपने छठी मंजिल के मकान में रहते हैं। मां का लाड़ला बेटा, अपने नाना-नानी की स्वीकृति तथा प्रशंसा की वस्तु। प्रशंसा और जयघोष की कमी नहीं थी वह जतायी जाती। बुर्जुआ उनका प्रलाप सुनते या कहीं और व्यस्त होते तब भी उनके चेहरों पर इस पितृविहीन बच्चे के लिए एक ममतामयी मुस्कान रहती।

सार्त्र के नाना चार्ल्स श्वाईत्जर जर्मनी के लिए फ्रांसीसी संस्कृति और फ्रांसीसियों के लिए जर्मन संस्कृति का आदान प्रदान करते थे। प्रतिवर्ष वे अपने जर्मन रीडर का पुनस्सम्पादन करते थे। पूरा परिवार प्रूफ के इन्तजार में रहता और जब नाना जी प्रेसवालों को भला-बुरा कहते तब बालक सार्त्र उनसे सहानुभूति दर्शाता। फ्रांसीसी और जर्मन प्रयोग से भरा नाना का कक्ष एक सांस्कृतिक स्मारक था तथा सार्त्र उनकी एक सांस्कृतिक

परिसंपत्ति। संस्कृति उनमे प्रवेश करती है। उसे आत्मसात करके सार्त्र को उसका पुनस्सृजन करना था। सार्त्र ने एक जगह लिखा भी है कि

'किताबों के बीच ही मेरी जिन्दगी शुरू हुई और इसमे संदेह नही कि उसका अन्त भी इन्ही के बीच होगा।"

अपने नाना के अध्ययन कक्ष के बारे म वे कहते हैं

'चारो तरफ किताबें थी। अक्टूबर की शुरुआत से पहले साल म एक बार उन्हें झाडा पोंछा जाता था। हालांकि तब तक मुझे पढना नही आता था लेकिन उन उभरे हुए पत्थरो की कीमत करना मैं सीख गया था। अलमारियो मे इटो की तरह मटी हुई या एक कतार की तरह फली हुई रहती थी ये पुस्तकें। मुझे लगता, मेरे परिवार की समद्धि इन्ही पर निर्भर है।"

नानी की लडिंग लाइब्रेरी एकदम अलग थी। ज्या पाल सार्त्र की मा उन किताबो मे से कहानिया पढकर नन्हे सार्त्र को सुनाया करती। सार्त्र को आश्चर्य होता, ये किताबें कैसे बोलती हैं। उन्हे भी तो इसी जादुई जगत मे जीना था। तीन साल की उम्र म उन्होंने पढना सीखा।

"अपने पालने मे, मैं हक्टर मार्लो की नो फैमिली लेकर चढ जाता। वह मुझे कठस्थ हो गयी थी। आधा सस्वर और आधा गूढ वाचन' (डिसाइफर) करके मैं हर पृष्ठ पढता। एक दिन इसी प्रकार आखिरी पन्ना पलटते-पलटते मैं पढ़ना सीख गया। अब मेरी खुशी का ठिकाना नही था। उन नन्ही जडी-बूटियो की आवाजें जिन्हें मेरे नाना एक दृष्टि म जीवित कर देते, अब मेरी थी। मैं उन्हें सुनने वाला था उन प्रवचनो से अपने-आप को भर लेने वाला था, सब कुछ जान लेने वाला था।'

पेरिस के हर मध्यवर्गीय बच्चे की तरह सार्त्र भी छुट्टी बिताने गाव जाया करते, लेकिन उनका यथार्थ रू द गाफ म सार्त्र के घर की छठी मजिल पर पुस्तको के बीच था। उन्होंने लिखा है

"अपने बचपन की यादो मे अपनी मीठी बेवकूफियो की तलाश करता हू। वे कही भी नही मिलती। मैं कभी मिट्टी से नही खेला न कभी पेड़ पौधे इकट्ठे किये, न मैंने घोसले ढूंढे और न चिडिया पर पत्थर पुस्तकें, मेरी चिडिया, मेरे घोसले, मेरे पालतू जानवर, मेरे खेत--

सब कुछ थी।"

छ वष की आयु मे सात्र ने लिखना सीखा और नौ वष की आयु तक वह अपना लेखक होना स्थापित कर चुके थे। शब्दो ने सात्र की रचना की तथा शब्दो द्वारा ही उस रचनाकार और जादूगर ने वस्तुओ का नामकरण किया शब्दो के सहारे जागतिक रहस्यो को अनावृत किया।

'प्रत्येक जागतिक वस्तु एक नाम के लिए मुझ से याचना करती। किसी वस्तु को नाम देने का अथ था उसका निरावरण करना, फिर से उसकी रचना करना उसे ग्रहण करना तथा उस आत्मसात् करना।"

इस आधारभूत भ्रम के बिना वे कभी नही लिखते थे। सात्र चा₂ जितना भी बदले हो किन्तु स्रष्टा होने का यह भ्रम उनके साथ सदा बना रहा। यह उनका भ्रम नही बल्कि एक निजी सत्य था। व वाक्या के जाल मे जीवित वस्तुआ को पकडना चाहते और शब्दा के द्वारा उन्ह प्रभावी रखने का प्रयास करते।

सात्र लिखते हैं कि ' मुझ वस्तुआ की अपेक्षा विचार अधिक वास्तविक लग क्योकि विचार मुझम पहले आते थ और मुझम वे वस्तुरूप म प्रकट होते थे। मैंने किताबा के बीच जगत को पाया—सग्रहीत वर्गीकृत नामांकित किन्तु फिर भी वे प्रभावी थे और मैंने ही इन किताबा के माध्यम से अपनी अनुभविता को समझा। अत अपने इस प्रत्ययवाद (आइडियलिज्म) से छुटकारा पान मे मुझे ३० साल लगे। (वड स ज्या पाल सात्र, पृ० ३४)

वे फिर लिखते है ' मुझे मेरा भ्रम मिल गया था। एक पुस्तक से अधिक और कुछ भी मेरे लिए महत्व नही रखता था। लाइब्रेरी ही मेरा मन्दिर थी और मैं धमगुरु का नाती जो दुनिया की छत पर रहता था।" (वड स ज्या पॉल सात्र)।

' प्रत्येक व्यक्ति का एक अपना स्थान होता है। यह नही कि अहकार वश कोई ऊचाइयो पर स्थित होता है। यह वचपन है जो उसके भविष्य का निर्णायक होता है। मेरा स्थान पेरिस की छठी मजिल पर था, जहा मे मैं सबकी छतो को देख सकता था। (वड स ज्या पाल सात्र)।

सात्र हमेशा अकेले रहे। कोई सगी साथी नही। बालक सात्र शुरू से बौद्धिक थे।



"लक्जमबग की एक बेंच पर अपनी मा के साथ बैठा नन्ही भैंगी आखो वाला वह बच्चा अपनी बदसूरती पर खुद से नफरत कर रहा है (वह आप ने सवाल करता, आखिर यही चेहरा रोज दपण मे क्यो देखना पडता है ?) इस स्नेहिल जोडे 'मा-बेटे' के आसपास कई लडके खेल रहे हैं

"उनके साथ खेलोगे नही ?" एन मेरी पूछती हैं।

"नही।" ज्या पॉल उत्तर देता है।

"मैं उनकी माताओ से पूछू कि अपने बच्चो के साथ तुम्हे खेलने दें।"

"नही, नही "

दश्य बडा विध्वसक है, लेकिन इस बच्चे का अपना एक जगत है। रू द गाफ' की छठी मजिल पर जहा वह शासक और सजक दोनो हैं, जहा वह किताबे पढता है और रोमास लिखता है।

शब्दा के सहारे किताबा की दुनिया मे रहने वाले क्या यही सात्र थे, जो आगे चलकर एक सक्रिय बौद्धिक बने और प्रत्येक जन-आदोलन मे शामिल हुए ? उनके 'अतिरिक्त रूप से' लेखक होने की इस नियति के बारे म स्वय सिमौन द बोउआर भी लिखती हैं कि जब १६२६ मे वे पहली बार सात्र से मिलती है, तब उहे सबसे बडा आश्चय इस युवक की एकाग्र चिन्तन शक्ति पर होता है। मानो एक शात, किन्तु उमत्त पागलपन मे वे अपनी पुस्तक लिखने की तैयारी कर रहे थे।

अपने 'मेमोरीज आफ ए ब्यूटिफुल डौटर'—डायरी (प्रथम खड) म सिमौन द बोउआर लिखती है

' मैं खुद भी तो एक लेखक बनना चाह रही थी, किन्तु सात्र तो मानो लिखने के लिए ही पैदा हुए थे। वे क्या लिखेंगे इसका महत्त्व नही था और न ही उनके जेहन म इसकी कोई अनुभव पूव भूमिका ही थी। वे तो बस सभी चीजो मे रुचि रखते थे। प्रत्येक बात की परीक्षा किया करते थे। किसी पूवानुमानित सत्य के लिए उनकी स्वीकृति नही थी। उन्होने अपनी जो नोट बुक लिखी थी और हमसे जो बातें की, उनमे एक ऐसी स्पष्ट वैचारिक व्यवस्था की झलक थी, जिससे हम सब दोस्त स्तभित थे और, इसके साथ ही इस दाशनिक परियोजना के समानार्थी उनकी प्रतिबद्धता साहित्य एव कला के प्रति भी थी। हालाकि उन्होने खुलकर कभी नहीं कहा,

प्राय होने वाली बहसो के दौरान इतना समझ मे आने लगा था कि सार्त्र साहित्य को जगत का एक निरपेक्ष उद्देश्य जरूर मानते थे।'

सार्त्र शुरू से वास्तविक जगत से कितना कटे हुए थे, इसका विवरण सिमोन द बोउआर की डायरी के दूसरे खंड 'द फोर्स आफ सरकमस्टासज' मे मिलता है जिसमे १९३० मे सार्त्र के साथ बिताये हुए समय को याद रखती हुई वे लिखती हैं कि

'उन दिनो हम इतिहास के साक्षी भर थे। हमारे लिए जगत और उसके हादसे हमारी जिन्दगी के मच की पृष्ठभूमि थे तथा हमारी अपनी समस्याए उसकी अग्र भूमि थी।

जर्मनी मे हिटलर की प्रेत छाया के नीचे ये दोनो सैलानी घूमते रहते हैं। लौटकर पेरिस मे—१४ जुलाई १९३५ को पाप्युलर फ्रट' के महान् ऐतिहासिक जुलूस को वे अपने झरोखे से देखते भर रहे। सार्त्र नीचे उतर कर मिछिल (जुलूस) मे शामिल नही हुए। वे दार्शनिक थे जगत से अलग थलग अपनी मानस की दुनिया मे राजहस की मानिंद तैरते हुए। उन दिनो वे सक्रिय कर्मी नही थे क्योकि वे अराजनीतिक थे, इसीलिए पाप्युलर फ्रट' के लिए मतदान भी नही करते थे, हालाकि श्रमिक वर्ग के इन आन्दोलनो को वे मानवीय गरिमा की सबसे बडी अभिव्यक्ति मानते थे। स्वभाव से अराजक और अतिवादी सार्त्र हर यथास्थिति के खिलाफ एक दिली सहानुभूति रखते थे और चाहते थे कि बुर्जुवा वर्ग का पूरी तरह से उन्मूलन हो।

वे जानते थे प्रत्येक समाज मे लेखक और कलाकार एक 'आउटसाइडर' ही रहता है। शुरू से वे किसी पारपरिक जीवन शैली को नही स्वीकारते। विवाह, परिवार, सम्पत्ति या किसी नियमित पेशे मे सलग्न जीवन के प्रति उनमे गहरी उपेक्षा थी। सिमोन द बोउआर से उनका जो घनिष्ठ सम्बन्ध रहा वह बिना किसी पारपरिक बधन के केवल आत्मीयता, पारस्परिक सम्मान तथा दोस्ती पर आधारित रहा। केवल एक बार शुरू के दिनो मे जब सार्त्र पेरिस के ल हाव्र स्कूल मे अध्यापक थे और जब सिमोन का तबादला मार्सेल मे हुआ तब साथ रहने के लिए वे सिमोन के सामने विवाह का सुझाव रखते हैं।

सिमौन अपनी डायरी म लिखती हैं कि

"अब तक हमने शादी जैसे सामाजिक बन्धन के बारे म कभी सोचा भी न था। हम अपनी निजी जिन्दगी जीना चाहते थे और समाज की इस दगल अदानी के लिए कतई तैयार नही थे। हम किसी भी प्रकार के सस्थायन (इन्स्टियूशनलाइजेशन) क खिलाफ थे क्याकि इसे स्वीकारने का अथ था—हमारी अपनी स्वतन्त्रता का खतरा और चूंकि हम सस्था के खिलाफ थे इसीलिए शुरू से बुर्जुवाआ के भी खिलाफ थे जो सस्थाओ के जनक और पोषक होत हैं। हमे यह बात बडी सामान्य लगी कि हम अपनी व्यक्तिगत जिन्दगी के बारे म अपना निजी निणय लें।"

सिमौन पढान मार्सेन चली जाती है और सात्र पेरिस म रह जाते है। सिमौन द बोउआर के अपने शब्दो म

' मानवीय रिश्ता को हमेशा यानी निरन्तर विकसित होना पडता है। रिश्ता का कोई अनुभव निरपक्ष सच नही हुआ करता। यह कभी भी सभव नही।' कम-से-कम पारपरिक मूल्या एव नतिकता को उनके ये शब्द नकारते हैं।

१९३२ से १९३७ के दौरान वे अलग अलग रहे—सप्ताहान्त साथ बितात हुए गर्मी की छुट्टियो म साथ घूमने जाते हुए। १९३७ म जब वे दोनो पेरिस मे व्यवस्थित हुए तब एक ही मकान के दो अलग-अलग माला पर रहते हैं। दोना के लिए अपना अपना स्वतन्त्र विकास ज्यादा अथ रखता है।

व्यवस्था के प्रति अराजक, आवारा, विद्रोही १९३० के सात्र का वणन इन्ही शब्दो म किया जाता है—उनमे था एक बौद्धिकी समग्र परिवतनवाद। यह जो बाद मे उनका अराजनीतिक नजरिया बदलता है जब वे यूरोप के क्षितिज पर 'फासीवाद' के काले बादलो को मडरात हुए देखते हैं। उनके दोस्त पॉल निजा, जो कि एक साम्यवादी लेखक थे, सात्र के ऊपर एक टिप्पणी लिखत हुए इन दो शब्दा को कहते हैं

'युवा दाशनिक अब दशन के महाप्रयाण पर अपना लेख लिख रहा है।'

किन्तु क्या यह अराजक बौद्धिक इतिहास से निर्लिप्त रह -

सिमोन अपनी डायरी मे लिखती हैं

"हम कॉफी हाउस म गय, हमने दो गिलास बियर का आडर दिया, घटन वाली घटनाओ के प्रति पूरी सहानुभूति रखते हुए भी हम अभी अपने लिए जीना था। हमने सोचा कि यदि हम गोदी मजदूर होते, तो हडताल म जरूर हिस्सा लेते, कि तु आज की स्थिति म केवल उनके द्वारा किय गय आन्दोलनो के हम पक्षधर ही हो सकते हैं।"

प्रश्न उठता है कि वयक्तिक स्तर पर सात्र के लेखन का प्रारभ बिन्दु कौन सा था ? वे अपने लेखन के द्वारा किस निर्वाण की खोज कर रहे थे ? सात्र शुरू से ही एक सुरक्षित माहौल म बडे हुए थे, भूख को उ होने कभी महसूस नही किया था किन्तु वभव की ललक भी उनम नही थी। वैसा और महत्त्वाकाक्षा इन दो मुद्दो पर उ होंने अपने जीवन म कभी एक क्षण भी नही सोचा। अत वड स' के बच्चे म हम पाते हैं—लेखन के प्रति एक मौलिक चुनाव। उस लेखक बनना है यही उसकी नियति है।

सात्र स्वय लिखते हैं 'मेरी सबसे बडी जरूरत थी कि मैं खुद को बचा लू। मेरे पास कुछ भी नही था न मेरे हाथ म और न मेरी जेब म, मेरे पास केवल मेरा विश्वास और मेरा काम भर था।"

१६६३ मे सात्र लिखते हैं कि वे अब लम्बे दु स्वप्न से जाग चुके हैं। वास्तविकता के जगत म उ होने पुन प्रवेश किया है। नाद, भ्रम, अपने प्रति मोहासक्ति वैयक्तिक जीवन म व्यामोह है, किन्तु लेखन के द्वारा निर्वाण की ललक भी है। छठी मजिल पर रहन वाला केवल घरो की ऊपरी छत यानी वास्तव की सतह को देखने वाला—जमीन नही वास्तविकता नहीं— यही सार्त्र आग चलकर अपने जीवन का प्रत्येक दिन नव जागरण की तरह लेते हैं। सात्र अपने अस्तित्ववाद को मानववाद की सज्ञा देते हैं।

उनके जीवन की शुरुआत अवास्तव से लबरेज जरूर है, किन्तु उसके बाद उनकी अकेली जिन्दगी दनन्दिन घटनाओ की सक्रिय मागो के जुलूस मे शामिल होती है। वे अपने अतीत के आदशवाद से मुक्त होते हैं उस बच्चे की मागो से परित्राण पाते हैं जो लेखन के द्वारा मानव मुक्ति का सपना देखता है लेकिन क्या सचमुच अपने इस भ्रम से उ हे मुक्ति मिलती है ? जसा वे कहते हैं "मैं अब भी लिखता हू, लिखना मेरी एक आदत है।

आप अपनी किसी मनोग्रंथि से छुटकारा पा सकते हैं, किन्तु अपने-आप से नहीं।"

वे बदल नहीं पाये हैं, किन्तु बदलने की चाह है। अपना यह विरोधाभास वे जानते हैं और इसे जीवन के अन्तिम दिनों में सुधारते भी हैं। लेखक होने का दर्द और घटनाओं का स्वतन्त्र अस्तित्व, वैचारिक चेतना तथा अमोघ वास्तव, इन दो के बीच की दूरी, मानव चिन्तन तथा जागतिक वस्तु के बीच की दरारें । सार्त्र का सारा जीवन इन्हीं दरारों को पाटने में लग गया। आइये, इसी प्रारम्भ बिन्दु से उनकी दार्शनिक, साहित्यिक एवं राजनीतिक कृतियों पर नज़र डालें।

आदमी दुनिया में जन्म लेता है, उसका एक मानस होता है उसकी सोच, उसका चिन्तन, जो कि जगत में, जागतिक वस्तुओं में सम्बन्धित है। शरीर एवं इसकी इन्द्रियाँ वे उपकरण हैं, जिनके द्वारा व्यक्ति जगत में विनियोजित हैं। इस तथ्य के लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं। यह हम सबका सहज अनुभव-गम्य बोध है। दर्शन का केन्द्रीय मुद्दा यह रहता आया है कि पहले कौन अवस्थित है? यानी तात्त्विक विश्लेषण में कौन प्रमुख है?

क्या जगत हेतु है चेतना का? या फिर चेतना जगत का निर्माण करती है? सार्त्र को देकार्ते का बुद्धिवाद विरासत में मिला था। देकार्ते कहते हैं 'मैं सोचता हूं इसीलिए मेरा अस्तित्व है, मैं प्रत्येक जागतिक घटना पर सन्देह कर सकता हूं, किन्तु अपने अस्तित्व पर नहीं जिसके द्वारा मैं यह सब चिन्तन कर रहा हूं। अत मेरी सोचने की प्रक्रिया से मेरे चिन्तन के द्वारा मेरा अस्तित्व आकार ग्रहण करता है।"

सार्त्र भी इसे मानकर चले थे कि मेरा एक 'मैं' है यानी ईगो जो चिन्तन का कार्य करता है, किन्तु यदि हम हुसर्ल का स्थगन का सिद्धान्त मानकर चलें और वाक्यांशों को लघु कोष्ठकों में रखें, तो पीछे लौटते हुए एक ऐसे प्रारम्भ बिन्दु पर पहुंचेंगे जहां से हमारा चिन्तन शुरू होता है। यह प्रारम्भ-बिन्दु हम किसे मानें 'ईगो' को या फिर 'ईगो' किसी शुद्ध चेतना को? मैं सोचता हूं—इसलिए मेरा अस्तित्व है, का वाक्य, व्यक्ति की चेतना के दो विभिन्न स्तरों का वर्णन

सोचता हू, किन्तु अपने इस सोचने की प्रक्रिया के बारे मे भी सोचता हू और फिर इस सोच के बारे मे भी सोच सकता हू। यदि हम अनवस्था के दोष (इन्फिनिट रिग्रेस) के व्यूह म न पडें तथा अपने सहज अनुभव से काम लें तो एक बात जरूर समझ मे आयगी कि हमारी सोचने की इस प्रक्रिया का सदभ हमारे अपने अस्तित्व मे है। चिन्तन का प्रारभ बिंदु अस्तित्व स है—यह मैं हू मेरा अस्तित्व है, जहा से सोचने की प्रक्रिया उद्घाटित होती है।

सात्र देकार्ते तथा काण्ट की उस लम्बी परम्परा को अस्वीकार करते हैं, जो यह कहना चाहती है कि चेतना वास्तव से पहले अवस्थित है। इसका विश्लेषण करने से पहले हमारे लिए यह जरूरी हो जाता है कि हम यह जानें कि चेतना का सार-तत्त्व क्या है। सात्र कहत हैं 'यह अवधारणा अपने-आप म गलत है क्योकि अस्तित्व वास्तव के ज्ञान मे पूव-कल्पित (ए प्रायोरी) रूप से निहित रहता है।

उदाहरणाथ जब हम पेड के अस्तित्व के बारे मे चर्चा करते हैं, तब पेड का होना, न तो उस पेड की चेतना है और न ही उसकी अर्थवत्ता। हम पेड को चाहे जितने भी व्यापक रूप से समझने की चेष्टा करें, किन्तु पेड के अस्तित्व को हमारा यह समझने का प्रयास, पेड के बारे मे एक सम्पूण अभिज्ञान कभी नही हो सकता। अत वस्तु के मूल मे उसका अस्तित्व विद्यमान रहता है। ज्ञान उस अस्तित्व पर आधारित है, जो स्वय अपने आप मे ज्ञान नही है।

सात्र कहते हैं, घटना का अस्तित्व उस घटना मे या उसके ज्ञान मे न्यूनीकृत नही किया जा सकता। ज्ञान का सन्दभ हमेशा ज्ञाता के अस्तित्व से होता है। ज्ञाता का अस्तित्व क्या है ?—यह वह चेतना है, जो ज्ञान प्राप्ति के समय अनुभूत होती है।"

हम यह जानते हैं कि चेतना हमेशा लक्ष्योन्मुख होती है। जब हम प्रश्न करते हैं कि चेतना क्या है ? तो जैसा कि हुसैल का प्रत्युत्तर है, 'विषयापेक्षी चेतना सदव किसी वस्तु की चेतना होती है। उसके अनुसार सभी चेतन क्रियाओ का मूल स्वरूप विषयोन्मुख (आब्जेक्टिव) होने की वजह से प्रत्येक विचार किसी वस्तु का विचार होता है प्रत्यक स्मरण तथा प्रत्यक

देने के सिद्धान्त के विरुद्ध हेडेगर ने विषयी को जगत मे स्थित सत्ता के रूप मे प्रतिपादित किया। सात्र का लक्ष्य चेतना का उस रूप मे अध्ययन करना था, जिसमे कि वह वस्तु जगत मे लीन होती है।

जसा कि हमन पहले लिखा है कि सात्र चेतना से पहले अस्तित्व-सार के अस्तित्व की बात करते हैं। इस सिद्धान्त का सबसे प्रभावशाली वणन सात्र ने अपन मशहूर उपन्यास नौसिया' मे किया है। उपन्यास का नायक रोकवेता, अस्तित्व की वास्तविकता का अपने चारो ओर अनुभव करता है। वह अपने को वस्तुओ के अस्तित्व से घिरा हुआ पाता है। वस्तुए बिना किसी अपेक्षा क उसके विचारो एव भावनाओ से उदासीन, मात्र विद्यमान होती है।

'अभी-अभी मैं म्युनिसिपैलिटी के पाक मे था। पेड की जडें मरे सामन धरती तक फली हुई थी। मुझे यह भी याद नही रहा कि ये जडें हैं। शब्द चुक गय हैं और उनके साथ वस्तुओ के अथ भी। मैं काली गाठ के समूह के साथ वठा हुआ था। कुछ झुका हुआ सिर नीचे किय हुए। वह चीज एकदम स्थूल थी और मुझे भयभीत कर रही थी और तब मुझे अचानक अस्तित्व का आभास हुआ

मेरी सास रुक गयी। अब तक मैंन कभी सोचा भी न था कि मेरे होन का अथ क्या है ? मै अन्य लोगो की भाति था। उन्ही की तरह कहता था कि समुद्र हरा हे और यह सफेद चीज एक समुद्री पक्षी है, किन्तु मैंने यह अनुभव नही किया था कि समुद्री पक्षी एक अस्तित्ववान पक्षी है। अस्तित्व अपने-आप को छिपाता है किन्तु वह हमारे चारो ओर है। वह हमसे है वह ही है। जब मेरा विश्वास था कि मैं उसके बारे म सोच रहा था तो सभवत मैं कुछ नही सोच रहा था। जब मैं वस्तुओ के सबध म सोचता भी तो भी मैं उनस मीलो दूर था। यदि कोई मुझस पूछता कि अस्तित्व क्या है तो मेरा उत्तर होता कि वह कुछ नही है। वह एक रिक्त आकार है जो बाह्य पदार्थो पर बिना उनके स्वरूप को बदले हुए प्रयुक्त होता है और तब तक अकस्मात वह (अस्तित्व) मेरे सम्मुख आ गया—दिन के प्रकाश की भाति सुस्पष्ट, अस्तित्व न यकायक अपना पर्दा हटा दिया। अमूत कोटि के रूप मे इसका निर्दोष आभासी रूप विलुप्त हो गया। यही वस्तुओ का द्रव्य है

जड़ें अस्तित्व से नहायी हुई हैं।"

सार्त्र का कहना है, दर्शन ने अस्तित्व की अवहेलना की है। हमें सार-तत्वों की खोज न करके मानवीय वास्तविकता का अध्ययन करना चाहिए। वे मानव चेतना को ही अस्तित्व व्यंजक घटना-विज्ञान (एक्जिस्टेंशियल फेनोमेनॉलोजी) का प्रमुख विषय मानते हैं। प्रश्न उठता है कि मानव चेतना प्रथमतः क्रियाशील चेतना है या कि एक ज्ञाता-रूप चेतना ? अतः घटना-विज्ञान का प्रमुख विषय मानवीय व्यवहार है ज्ञान नहीं। ज्ञान भी मानव व्यवहार का एक प्रकार ही है।

अस्तित्व है, अस्तित्व अपने-आप में है अस्तित्व जो है वही है। अस्तित्व अपने में इतर किसी अन्य का संकेत नहीं करता बल्कि चेतना निरन्तर अपने से इतर का संकेत करती हुई स्थित होती है। अस्तित्व का यही स्थूल, नग्न और वास्तविक रूप रोकवेता के मन में 'नौसिया' उत्पन्न करता है।

वह कहता है "मैं आश्चर्यचकित नहीं था। मैं यह अच्छी तरह जानता था कि यह जगत है। जगत जो अपनी पूर्ण नग्नता के साथ अचानक मेरे सामने प्रकट हुआ था और जिसकी विशाल बेतुकी सत्ता के सामने मैं अभिभूत था। यह अचानक कहाँ से प्रकट हुआ ? जगत प्रत्येक जगह विद्यमान था, मेरे आगे-पीछे सर्वत्र, किन्तु इसकी कोई अर्थवत्ता नहीं थी। कहीं कुछ भी नहीं था, कुछ भी नहीं। ऐसा कोई क्षण नहीं था जब यह कहीं विद्यमान न हो। मुझे इसी लिए इस बहते हुए लावे से वितृष्णा हो रही थी, जिसके अस्तित्व का कोई कारण नहीं था। अवस्तु की कल्पना करने के लिए पहले जगत में होना आवश्यक था। मैं चीख पड़ता हूँ 'यह कैसी गन्दगी ? और, मैं अपने में चिपकी हुई इस धूल को झाड़ फेंकना चाहता हूँ, किन्तु यह इतनी जोरों से मुझसे चिपका हुआ है और इतना अधिक, ढेर का ढेर यह अस्तित्व, बिल्कुल अपरिमित। मैं इस अन्तहीन बोरियत के बोझ तले दबा हुआ बिल्कुल घुट रहा था।' (उपन्यास नौसिया)

रोकवेता जागतिक वस्तुओं के बीच घिरा हुआ उनसे छु[illegible] चाहता है, लेकिन हर ओर अस्तित्व उसे घेरे हुए है। वह अस्तित्व

का कोई कारण ढूढना चाहता है किन्तु उसे कोई कारण नजर नही आता। एक चिढ और ऊब। उसे मितली आती है। तब क्या रोक्वेंता अपने अस्तित्व का अन्तिम सत्य पा सकेगा ? इसकी अनिवार्यता हासिल कर सकेगा ?

अस्तित्व के विवरण हेतु सार्त्र जिन शब्दों को प्रयुक्त करते हैं, वे तीन वर्गों में हैं (१) आकारहीनता (२) उद्देश्यहीनता, (३) सदिग्धता अथवा अनिश्चितता।

आकारहीनता—वस्तुए यहा बढने गति पकडने, हमारे ऊपर छा जाने की धमकी देती है। वह गीली मिट्टी लेई की तरह है शिथिल और फूली हुई। जैसा कि वितृष्णा या उबकाई के दौरान रोक्वेंता अपनी मन-स्थिति का विवरण प्रस्तुत करता है—वह आकार खो देती है हर तरफ से स्राव डालती है व्यवस्था और निरन्तरता को नकार देती है। नीचे की अव्यवस्था को वह देखता है—पेड की जड पार्क का गेट समुद्र का किनारा घास—वह सब जो गुम हो गया वस्तुओं की विविधता, उनकी वैयक्तिकता केवल आभास बाह्य आकृतिया एक बारीक परत। यह परत पिघल गयी है। एक कोमल विरूप राशि बची है अव्यवस्थित अनावृत, भयावह अश्लील निरावरणता है यह।

अस्तित्व अर्थहीन है अत सतही है। अस्तित्व रखने का कोई कारण नहा किसी का उद्देश्य नही किसी की जरूरत नही। जगत मे सब कुछ अर्थहीन है यदि कोई मानवीय उद्देश्यों का सिलसिला नही जो वस्तु को अर्थ और क्रियाशीलता देता है, तो कोई प्राकृतिक या स्वर्गिक योजना भी नही, जिसमे प्रारभ होकर वस्तुए एक अर्थ पाती हो या जगत म अपना स्थान पाती हो। सार्त्र कहते है

हर अस्तित्वधारी चीज अकारण पैदा होती है दुर्बलतावश घिसटती रहती है और सुविधानुसार मर जाती है।"

अस्तित्व का तीसरा पहलू सदिग्धता अथवा अनिश्चितता है। वस्तुओ को उनकी सक्रियता से अलग करने का अर्थ यह है कि उनकी सक्रियता के पीछे कोई मानवीय प्राकृतिक या नैतिक व्यवस्था नही है। वस्तुए ही अस्तित्व म आ जाती है, कुछ भी हो सकता है। घटनाए एक-दूसरे के बाद यो ही घट जाती हैं।

यह स्पष्ट है कि नौसिया की घटनाएं सार्त्र सार्त्र के मनोवैज्ञानिक लेखन से भिन्न है, फिर भी १९३० के उत्तरकाल के सार्त्र के सारे लेखन की थीम एक ही है। अस्तित्व मूलत बाधक है जगत भिन्न हो या बेतुका, हम इससे पलायन की बात पर प्रलोभित रहते हैं। कल्पना और भ्रमों द्वारा हम इस बेतुकेपन को व्यवस्थित करने की कोशिश करते हैं। अयथार्थ जीवन पर अनिवार्यता और अथमयता का आरोपित खतरा सिर्फ इसीलिए उठा सकते है कि य हमारी खुशफहमी म उदभत है। तब रोकवेता के सामने गूढ़ समस्याएं आती है—किस प्रकार अपनी वितृष्णा नौसिया पर काबू पाये और भ्रमों के बिना जीवन म स्वय को पुनर्स्थापित करे? पुराने विश्वास, पुराने प्यार, पुरानी आदत सब खतम हो गये है। वह कैफे म अकेला सगीत सुन रहा है

" ही म से किसी दिन

तुम मेरी कमी महसूस कराग

'अभी-अभी मेरी वितृष्णा गायब हो गयी है। जब ग्रामोफोन को चीरती हुई सगीत की आवाज मुझे सुनाई पडी, तो मुझे लगा कि मेरा शरीर दृढ हुआ है और अब नौसिया—उबकाई ख म हो गयी। अचानक इतना दृढ, प्रतिभावान बन जाना असहनीय था। उस समय सगीत फैले हुए पानी के सात की तरह उफन रहा था। अपनी धातुमय पारदर्शिता म वह दयनीय गणित समय की दीवारों को रौंदकर कमरे म भर गया है। मैं सगीत मे हूं।"

रोकवेता के सगीत विवरण स पता लगता है कि क्या हो गया है

कोई गीत नहीं स्वर नहीं न है झटको का सिलसिला। नहीं चाहिए। एक कठोर व्यवस्था उन्ह आराम अस्तित्व मे आने का समय दिये बिना ही उन्ह भी करता है। व दौड लगाते है आग बढते है। धप्पड मारते है फिर नष्ट हो जाते हैं।

'कुछ समय म बाहर है भौतिक म परस्पर जुडे और व्यवस्थित होते हुए भी का परिणाम होता है और आन वाले

गायब हो जाता है। एक अस्वाभाविक अनिवार्यता से गीत आकार र
करता है।" रोक्वेता कहता है

इस संगीत की अनिवार्यता इतनी अधिक है कि यह अपरि
लगता है, उसमे कोई बाधा नही डाल सकता। इस काल म ऐसा कुछ
जिसमे जगत बधा है।' रोक्वेता अनुभव करता है

यह अस्तित्वहीन है एक संतापन भी है, अगर मैं उठकर उस रि
को दो हिस्सो मे तोड दू तब भी मैं उस तक पहुच नही पाऊगा। वह
है—किसी वस्तु, आवाज वायलिन के स्वरो से परे है। अस्तित्व की प
दर-परत मे उसने स्वय को बडी ही दृढता से छिपा लिया है और
आप उसे पकडना चाहते है तो आपको अर्थहीन अस्तित्व मिलेगा।
उनके पीछे है मैं ता उसे सुनता भी नही मैं ध्वनिया सुनता हू हवा
व्याप्त इसके स्पन्दनो को जो इसे अनावृत्त करते हैं।

उपन्यास का अन्त अब अवश्यभावी है लगता है कि रोक्वेता
अस्तित्व की अनिवार्यता के लिये कला की ओर उन्मुख होगा, लेकिन
ऐसा नही करता। वह अपने जीवन की अस्पष्टता उसके बेतुकेपन
विजय पाकर कला को अपनी एकमात्र राह नही बना पाता। हम
अपेक्षाए गलत साबित होती हैं क्योकि कला अस्तित्वहीन है। अपनी डा
के बाद के अशो म रोक्वेता कला को राहत के लिए उपयोग करन व
पर व्यग करता है।

'एसे भी मूर्ख है जो कला म राहत पाते है। मेरी आटी बिजुवा
तरह।

व कहती है कि जब मरे अकल स्वर्ग सिधार गये तब शोपें के प्रिल्यू
उनकी मदद को आये। संगीत शालाए ओछेपन स उफनती रहती है। दु
लोग अपनी आखे बन्द करके अपने पीले चेहरे एरियल की तरह टाग
हैं। वे कल्पना करते है कि उनके भीतर ध्वनि का मीठा पोषक प्रवाह
और उनकी पीडाए बथर का संगीत बन गयी है। व सोचते हैं सौंदर्य उन
प्रति संवेदनशील हो गया है। गधे

रोक्वेता का उत्तर स्पष्ट है और दर्दनाक भी। कला वास्तविक न
है। कला क्षणिक रूप से जीवन की समस्याए सुलझाती है किन्तु जीवन

बाहर काल्पनिकता मे। 'नौसिया' का नायक जो वस्तविकता से भागने पर व्यग्य को सैकडा तरीको मे स्पष्ट करता है, वह पलायनवादी समझौता कभी स्वीकार नही करेगा, कोई कितना भी तक करे। अपनी प्रतिक्रिया मे, अपनी प्रणाली म, अपन अस्तित्व म नौसिया' सात्र के प्रारभिक लखन का एक केन्द्रीय और अबूझ तनाव समाहित किये हुए है।

सात्र के लेखन म १९४० के बाद एक नया मोड आता है। इससे पहले की प्रत्येक समस्या व्यक्तिगत थी। 'नौसिया' का रोकेता घोर व्यक्तिवादी है ऐतिहासिकता के प्रति पूरी तरह लापरवाह, लेकिन सात्र स्वय भी महायुद्ध के प्रभाव स कहा वचित रह पाये! अबतक कभी सात्र ने वोट नही दिया था और न किसी आन्दोलन म भाग लिया था और न ही किसी जुलूस म शामिल होकर उन्हान नारबाजी की थी। अबतक वे मानत रहे थे कि साहित्य अपन-आप म पूण है और साहित्यकार समाज से दूर रहकर भी आत्मसम्मान की जिन्दगी जी सकता है। अपन आत्म-कथन म सिमोन द बाउआर लिखती हैं

'अब तक हम यह समझत थे कि वास्तव पर हमारा पूरा अधिकार है, किन्तु फिर भी हमारी जिन्दगी दूसरे निम्न बुजुवा बौद्धिको की तरह अवास्तविक थी। अन्य प्रत्येक बुजुवा की तरह हमने भूख को महसूसा नही था और न ही खुले आकाश क नीचे हम कभी असुरक्षित रहे। इसके उपरान्त भी न ता हमारे बच्च थे, न हमारा कभी परिवार रहा और न हमन कभी कोई जिम्मदारी ओढी। हम जो काम करते रहे वह हमारे लिए आनन्ददायक था, उबाऊ नही। इसके बदले जा पारिश्रमिक हमे मिलता रहा उसक विनिमय म कोई सार नही था क्योकि किसी यथास्थिति को बनाये रखन की हम कोई जरूरत नही थी। हम अपनी कमाई को चाहे जैसे खच कर सकल थे। हम पोखर मे कमल की तरह तैर रह थे, जब अचानक हमारे भ्रमा पर परिस्थिति का पाला पडा।" (फोस आफ सरकमस्टान्सेज)।

उनका त्रिखडीय उपन्यास 'राडस टू फ्रीडम' इस बात का प्रमाण है कि न चाहते हुए भी आदमी इतिहास के शिकजे म जकडा हुआ है। उसका भाग्य दूसरो के साथ जुडा हुआ है अत वह घटनाओ के प्रभाव से बच नही सकता। सात्र का 'रोक्वेता' मात्र एक खालीपन रह जाता है। इस दी हुई

स्वतन्त्रता से 'रोड्स टू फ्रीडम' का मथ्यू जन्म लेता है।

सार्त्र ने पहला खड 'द एज आफ रीजन' पारपरिक उपन्यासो की शैली मे लिखा। नायक मथ्यू दर्शन का प्रोफेसर है वह अविवाहित है। वह मार्सेल नामक युवती से प्यार करता है, किन्तु उससे विवाह करने को अनिच्छुक है। मार्सेल गर्भवती हो जाती है किन्तु मथ्यू अब भी उससे स्थायी सबध नही स्वीकार करता। वह गर्भपात के लिए रुपये जुटाने की कोशिश कर रहा है। सामाजिक राजनीतिक किसी भी प्रकार की प्रतिबद्धता मानने से वह इन्कार करता है।

सोचने की बात यह है कि आखिर अपने प्रति बिना प्रतिबद्ध हुए हमारी स्वतन्त्रता का अर्थ क्या है? जिन्दगी के पतीस वर्ष सस्कारो के पूर्वाग्रहो से मुक्त होने मे लगा देने के बाद बचता क्या है? केवल एक बाध्य खालीपन। पुल पर वह बिल्कुल अकेला था। वह उस क्षण दुनिया मे भी अकेला था। उसे कोई दख नही रहा था। वह उदास होकर सोचता है मैं कुछ नही होने के लिए एक निष्पत्ति के लिए स्वतन्त्र हू। मथ्यू अधेरे मे हाथ बढाता है। आसपास की सतह छूता है, लेकिन उसे कुछ महसूस नही होता। उसे अपनी असफलता समझ मे आती है कि स्वतन्त्रता की चाह मे वह कही किसी से भी तो नही जुड पाया। न उसने अग्रेजी पढी, न कम्युनिस्ट पार्टी मे सम्मिलित हुआ और न ही उसने स्पेन जाकर क्रातिकारियो के साथ मिलकर विद्रोह किया। यह एक ऐसी बाझ स्वतन्त्रता है जो उसकी जिन्दगी का अर्थ ही निगल जाती है। उसने अपनी स्वतन्त्रता को बचाकर रखा, पर किसके लिए? किस वक्त जरूरत के लिए? क्या होगा उस स्वतन्त्रता का, जो खुद के अस्तित्व को ही टुकडा-टुकडा चबा रही है?

अपनी स्वतन्त्रता से ऊबा हुआ मथ्यू उन सबसे ईर्ष्या करता है जो किसी-न किसी उद्देश्य के लिए प्रतिबद्ध हैं। जिनकी जिन्दगी का एक मकसद है। ये लोग त्याग मे किसी के लिए कुछ करने मे किसी से जुडने मे अपनी जिन्दगी का अर्थ ढूढ लेते है। वह ईर्ष्या से ब्रूनत की ओर देखता है जो एक सशक्त राजनीतिज्ञ है।

अब वह प्रतिबद्ध है उसने अपनी स्वतन्त्रता त्याग दी है। अब वह और कुछ नही मात्र एक सैनिक भर है। इस प्रतिबद्धता के कारण उसे उसकी

स्वतंत्रता वापस मिल गयी है। उसे उसका सब कुछ वापस मिल गया है। वह मुझसे भी अधिक स्वतंत्र है, क्योंकि वह स्वयं से और अपनी चीज़ों से एकात्म हो चुका है।

क्लेन को मसीहा बनना गलती नहीं था ... । यहाँ कहीं भी इन्सान है क्लेन के पास काम करने का अपना स्थान है। ... क्लेन ने वास्तविकता के साथ फिर अपना संबंध स्थापित कर लिया है। इसी प्रकार क्रान्तिकारी मामले के साथ रस्तरां में खाना खाया। मगर अपनी ... यानी अप्रतिबद्ध जिन्दगी का वास मैच्यू फिर से महसूस करने लगता है। यह सोचना है।

मेज पर परोसा हुआ कटलेट है एक ... और एक ... । ... खाने का स्वाद लेने का अधिकार है अपने सुन्दर दांतों से ... पाना टुकड़ा काटने का हक है क्योंकि अपनी जिन्दगी में उसने इसकी कीमत चुकाई है।

सात्र सहयोग को एक मूल्य के रूप में ... एक शब्द की तरह हमारे सामने रखते हैं। हम सहयोग करना नहीं चुनते बल्कि मानव अपने आप में एक सहयोग है। इससे अलग हम हो नहीं सकते। १९३९ से १९४४ की समस्त घटनाएं यही स्थापित करती हैं—वे जो ... में भाग ले और वे जो 'रजिस्टेन्स' में केवल भागी बन गए—... इस घटना में सहभागी हैं। उपनिवेश के दौरान फ्रांस की जनता ने ... उससे कोई अछूता नहीं बचा। आदमी कुछ करे या न करे ... सामूहिक घटनाओं पर वह प्रभाव डालता है। चाहे आप कुछ न करें ... में पड़े पत्थर की तरह निष्क्रिय पड़े रहें, तब भी सबके ... से आप बच नहीं सकते। पारस्परिकता का बोध ही मैच्यू को ... बोध और असहायता से भर देता है।

उसने गोलियों की आवाज सुनी—इन घटनाओं में हम कोई मददगार नहीं हम निर्दोष हैं वे सब हाथ उठाकर आकाश की ओर देखते हैं और चीख पड़ते हैं। आदेश शान्त हो गया, भोर के आकाश में कबूतरों की बाढ़ आ गया। घास की फुनगियों पर आप उन कबूतरों का खून छूकर महसूस कर सकते थे, लेकिन मासूमियत का यह दावा अपने-आप में झूठ था। मासूमियत की आड़ में हम सब कहीं गलत थे। सच्चाई एक आम गलती थी

अत हम जिम्मेदारी से बच नही सकते । वह हमारे साथ है। जरूरत है उसे पहचानने की।

इसी कारण अपने उपन्यास द्वितीय खड के द रिप्रीव' मे सात्र कहना चाहते हैं कि इतिहास किस प्रकार हमारी व्यक्तिगत चेतना पर हावी हो सकता है। युद्ध घोषणा एक विशाल दुखद सिम्फनी की तरह गूज उठी, जिसमे दुनिया की तकदीर कुछ हाथो से बना दी गयी। द्वितीय महायुद्ध का दायित्व केवल चैम्बरलेन या हिटलर पर नही था बल्कि उन सब पर भी था जो अपने-अपने घरो के ड्राइग रूम मे सडक के नुक्कडो पर युद्ध घोषणा सुन रहे थे। हर व्यक्ति अपनी जिन्दगी जीता रहा था, पर एक प्रश्न को ढोते हुए—यह युद्ध कब खत्म होगा।

अत आदमी स्वतत्र है, लेकिन एक दी हुइ स्थिति के बीच।

आदमी की स्थितिग्रस्तता और ऐतिहासिकता एक स्वाभाविक तथ्य है जिसे नकारा नही जा सकता। मैथ्यू गम्भीरता से यह तथ्य ग्रहण करे या हलकेपन से यह तथ्य उसे स्वीकार करना होगा कि युद्ध है। जमन सेना की तोपो उनके टैंको के सामने राइफल दागते हुए वह अनुभव कर रहा है कि जिन्दा रहने के लिए जोखिम उठाना पडेगा।

वह कगार पर आकर गोलिया दागता रहा। यह बदले का अजाम था। प्रत्येक गोली के साथ पिछली हानियो का लिया हुआ बदला। एक लोला के लिए जिसे लूटने स मैं डर गया। एक मार्सेल के लिए जिसे मुझे धोखा द देना चाहिए था। एक औडेल के लिए जिसके साथ मुझे बलात्कार कर लेना चाहिए था। एक उन पुस्तको के लिए, जिन्हें मै लिख नही सकता। एक उन ट्रिपो के लिए जिन पर मैं कभी गया नही और एक उन सबके लिए, जिनसे मैं कभी घृणा करना चाहता था, जिन्हे समझने की कोशिश मन की।

इस प्रकार वह अपने अतीत का हिसाब किताब कर लेता है। अपनी कमिया का परिष्कार करके मुक्त हो जाता है

"उसने गोली दागी। कमाडेट हवा म उड गया—अपने पडोसी को तुम अपनी ही तरह प्यार करोग—धाय। अब तुम मारोग नही—धाय। उस हरामी के चेहरे पर उसने गोली चलाई। गुण, स्वतत्रता जगत सबको दाग

दिया। स्वतंत्रता आतंक है। टाउन हाल में एक आग धधक उठी। एक आग उसके मस्तिष्क में धधक रही थी।"

मध्यू के पूर्वानुमान में कुछ चमत्कारात्मक है। अधिकृत भाग को मुक्त कराने की उसे इतनी चिन्ता नहीं, जितनी चिन्ता अपने-आप को यह दिखाने की है कि अब तक उसने जो भी सोचा किया वह गलत था। यदि आदमी की नियति जगत में विशिष्टता लाना है तो उस स्वनिर्मित सम्प्रदाय पर आचरण करने की जरूरत नहीं, जगत का ज्ञान प्राप्त करके अपनी यामना-नुसार ही निर्णय मन की है। उसका बलिदान भी सद्धान्तिक लगता है जो उसके विस्तार के लायक ही है। मतलब बूनत जो उसका क्रमिक उत्तरा-धिकारी है सात्र की ठोस प्रतिबद्धता को परिभाषित नहीं करता। केवल 'लास्ट चान्स' के प्रकाशित अंश में ही चरित्र की विशृंखलता प्रकट होती है।

मथ्यू के चरित्र चित्रण में सात्र शायद स्वयं को खोजते हैं। तीसरे खंड तक आते-आते सात्र खुद भी बहुत बदल गये थे। महायुद्ध का प्रारंभ सात्र को युद्धक्षेत्र में जाना पड़ता है। हालांकि वहां उनको केवल मौसमी अव-लोकन का काम मिलता है। गुब्बारा को उड़ाकर हवा का रुख देख उन्हें केवल अपने अफसर को फोन कर देना रहता था। युद्धक्षेत्र में भी उनके सारा समय स्फुरण में था और चिन्तन मनन के लिए एक शांत माहौल। सात्र ने अपना समय उपन्यासों को खत्म करने में लगाया। साथ ही वे अपनी महान दार्शनिक कृति 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' पर भी लगातार काम करते रहे।

अपने इस अनुभव पर तीस साल बाद सात्र अनुचिन्तन करते हुए लिखते हैं

'मैं स्वयं को एक घिसा मजा हुआ, साफ-सुथरा परमाणु समझता रहा था, जिसे शक्तिशाली ताकतों ने ग्रस लिया था और बिना उसकी मर्जी के जिसे युद्धक्षेत्र में भेज दिया गया था, लेकिन युद्ध के दौरान और नाजी कैम्प में मैं हमेशा के लिए भीड़ में निमज्जित हो गया। जन का हिस्सा बना। मैंने समझ लिया कि जिन्दगी की अपनी बाध्यता है। खतरों का सामना करती हुई जिन्दगी शुद्ध रूप से वैयक्तिक और आत्मनियंत्रित

हो सकती। उसकी वयक्तिक नियति उसका भाग्य, जिन्दगी जीने का जोखिम प्रत्येक दूसरे जन का भी हिस्सा है।"

सिमौन अपनी डायरी के द्वितीय खंड 'प्राइम ऑफ लाइफ' म इस बात का जिक्र करते हुए लिखती है कि सात्र म बदलाव आ चुका था। अब वे राजनीति स अलग नही रह सकत थ। व यह विश्वास करने लगे थ कि प्रत्येक व्यक्ति को सक्रिय रूप से अपनी जिंदगी की जिम्मेदारियाँ का लेना होगा। अब समय आ गया कि हम अपने पलायन स उबरें। कल्पना भ्रांति और आत्मवचना के सहारे ठोस वस्तु स दूर नही रहें।

जून १९४० स मार्च १९४१ तक सात्र नाजियो के बन्दी शिविर म रहते है। वहा वे अपना प्रथम राजनीतिक नाटक 'बॅरियोना' लिखते हैं जिसम रोमन द्वारा अधिकृत फिलिस्तीन म ईसा मसीह का जन्म दिखाया गया है मसीहा जो सबको मुक्ति दिलायगा। सात्र अपने सहबन्दियो क साथ त्रासद परिस्थितियो पर सवाद स्थापित करने म सफल हो गये। इस नयी एकात्मकता का कारण था, सबकी समान परिस्थिति हर समय साथ और निरन्तर आपसी सवाद। राजनीति उनके जीवन का सार बन चुकी थी। उसका सामना उन्हें रोज करना पडता था।

१९४१ म पेरिस लौटकर सात्र अपने मित्र मारिस मार्लो पोन्ति और सिमौन द बोउआर तथा कुछ अन्य लखको के साथ 'रेजिस्टन्स ग्रुप' का निर्माण करत है जिसे 'सोशलिज्म एत लिबर्ते' की सज्ञा दी गयी। इस ग्रुप का मुख्य उद्देश्य था, एक गणतात्रिक समाज की स्वाधीनता क लिए सघर्ष कायम करना। अन्य छोटे मोटे ग्रुपो के साथ सात्र सम्पर्क भी कायम करते है किन्तु कम्युनिस्टो से कोई सहयोग न मिलने के कारण और दूसरी ओर अधिकृत फ्रास म गस्टापो की आतकवादी नीति के कारण सात्र को अनिच्छावश अक्तूबर १९४१ मे इस ग्रुप को तोड देना पडा।

प्रत्येक रेजिस्टेंस ग्रुप न यही निर्णय लिया था कि अधिकृत फ्रास की जनता ही अपने देश का स्वाधीन करायेगी। सात्र 'कम्बट' पत्रिका म कई अभिलेख लिखते है, जिसम उस समय की परिस्थिति, मित्रसेना का फ्रास म प्रवेश आदि के बारे म विशद विवरण है। सात्र अन्त मे उस जन के साथ

एकात्म होते हैं, जिसने अपनी नियति को अपने हाथों म लेने का निणय किया था।

अभियोजित (इन्गज्ड) लेखक के रूप म सात्र सबसे पहले नाटककार थे। इतिहास म क्रियाशाल होने के लिए उन्होंने मच का सहारा लिया, ताकि दशक सामूहिक मुद्दा पर अभियाजित किये जा सकें तथा सामाजिक यथाथ मे परिवतन लान या परिवतन को समझने के लिए तैयार किये जा सकें। उनक लिखे आठ नाटक वतमान से सबधित थे, जिनम तात्कालिक मुद्दो की बात की गयी थी।

जमनी और फ्रास के नाजीवाद, युद्ध और पूजीवादी अभियाना साम्यवाद की यातनाओ तथा अव्यावहारिकता एव अमेरिका के जातिवाद पर सात्र ने प्रश्न उठाये। लेखक से प्रतिबद्धता की माग इन नाटका स पूरी हुई। इनम से तीन प्रमुख नाटको का उल्लेख करना चाहूगी, जिनमे सात्र के वचारिक विकास और उनका दाशनिक दष्टिकोण परिलक्षित होता है।

सात्र के लिखे नाटका म अधिकृत फ्रास मे सबसे पहले ल मूश का मचन किया गया। उस समय को याद करते हुए सात्र लिखत है कि 'ल मूश' म मैंने अपने सीमित साधना द्वारा ही पश्चात्ताप को जिसम हम बुरी तरह ग्रसित थे तथा अपराध और ग्लानि की उस भावना को जिसे वीची सरकार हम पर आरोपित कर रही थी, उखाड फेंकने की कोशिश की। सात्र अब सामूहिकता की जरूरता को अभिव्यक्त कर रह थे और एक सामूहिक क्रिया की माग कर रह थे जो जमन सरकार की इस दुदमनीय ताकत का प्रतिरोध कर सके। 'ल मूश' का नायक एक एसा ही पात्र है। इसे रेजिस्टस का नाटक माना जाना चाहिए। राजनीतिक रूप मे यह नाटक 'बीइग एण्ड नथिगनस' की आग्रही थीम की ही पुष्टि करता है कि विरोध करन के लिए आदमी हमशा मुक्त है।' एक तरह से सेसर की आखा म धूल झाककर भी सात्र न वही किया।

अपन दशवासियो को सात्र का पहला राजनीतिक सन्देश यही था कि अपराध और प्रायश्चित्त को स्वीकार कर लेना व्यामाह के कारण होता है प्रामाणिक काय अतत सघष ही है।

'ओरेस्ट्स' नाटक का नायक शुरू स ही अपनी खोखली तटस्थ

स्वातन्त्र्य में बोझिल रहता है। इसी त्वरायमय स्वतन्त्रता के लिए वह धमगुरु जअस में कहता है आपने मुझे स्वतन्त्रता का यह धागा पकड़ा दिया जो हवा में टंगा रहता है उसकी अपनी महत्ता नहीं। मैं इस धागे के समान हवा में उड़ने को विवश हूँ। वह कहता है कुछ लोग अभियोजित पैदा होते हैं। ओरेस्ट्स जब वापस अपनी जड़ों में लौटता है तब अपने पिता के हत्यारे को मारने का निर्णय करता है। वह हत्या करता है किन्तु अपराध-बोध से पीड़ित नहीं और अन्त में वह जअस की उपमा कर रही हुई राजगद्दी को छोड़ अपनी परिस्थिति में अकेला चला जाता है। आरेस्ट्स अकेलेपन की एक मित्रहीन यन्त्रणा सहता है। उस निरावरण यन्त्रणाओं में ढकेल दिया जाता है। स्नेहहीन सहानुभूतिहीन प्रोत्साहन हीन अकेला फिर भी उस एकान्त अकेलेपन में वह दूसरों की रक्षा करता है दूसरे संघर्ष में शामिल सभी कामरेडों की। सम्पूर्ण एकान्त में सम्पूर्ण उत्तरदायित्व क्या यही हमारी मुक्ति की परिभाषा नहीं है? एक पृथक्कृत हीरो एक मुक्तिकामी हत्या करता है और निरपराध भाव से अपने रास्ते पर बढ़ जाता है। सन्ताप उसका पीछा करता है और भौचक भीड़ उसे देखती रह जाती है लेकिन सात्र के लिए ओरेस्ट्स का यह काम लगाव अर्थात अभियोजना की घोषणा है। आरेस्ट्स जेअस को नकार देता है और इसी माध्यम से जअस विजेताओं को भी वह नकारता है। उसके हाथों में लगा हुआ हत्या का खून एक ठोस ऐतिहासिक क्रिया का प्रतीक बन जाता है।

रोववेता की सम्पूर्ण तटस्थता का प्रत्युत्तर ओरेस्ट्स प्रस्तुत करता है, लेकिन इतिहास में वह सम्पूर्ण अभियोजना से वंचित रहता है। इस मूल में सात्र के पूरे कैरियर की समस्या सामने आती है। मूल बिन्दु से आरम्भ करके उनके दृष्टिकोण की पूरी सीमा और ठोस ऐतिहासिक स्थिति की प्रभावी अभियोजना कैसे सम्भव हुई? अपनी जगह जड़ आलंकारिक, अमूर्त १६४३ का ओरेस्ट्स विश्वसनीय और ऐतिहासिक 'अनेक जन में एक जन' में रूपान्तरित हो जाता है। वह जनता के साथ उसके लिए काम करता है आम आदर्शों के लिए उसके साथ रहकर संघर्ष करता है और यह समझता है कि उसका कार्य धैर्यपूर्ण कार्य है कोई नाटकीय भंगिमा नहीं।

एक साल बाद सात्र ने अपना इकलौता अ राजनीतिक नाटक 'नो एक्जिट' लिखा। कुछ उठाये गय प्रश्नों का उत्तर बडी कुख्यात पक्तियो मे सामने आया

दूसरे लोग नरक हैं, जिसका वास्तविक अथ हुआ, नरक हम स्वय हैं।'

किसी आम गतव्य स यह बात नितान्त अलग है। गार्सिन, इस्तेला और इनेस हमेशा के लिए एक साथ रह रहे हैं, एक-दूसरे के उत्पीडक के रूप में। कहते हैं उई क्लो की रचना स्व और दूसरा के बीच सबध के निराशावादी चिन्तन को लकर सात्र न की है। इसकी रचना के बीस वष बाद नाटक की रिकॉर्डिंग कराते समय सात्र ने भूमिका म अपना वही कथ्य सामने रखा

नरक दूसरे लोग हैं इस बात को हमेशा गलत समझा गया है। मैंने जो कहा उसका अथ यह लगाया गया कि दूसरो के साथ हमारे सबधो को विषाक्त कर दिया जाता है और व सबध नारकीय हो जाते है लेकिन मेरे कहने का अथ नितान्त भिन्न है। मेरा मतलब था कि अगर किसी के सबधो का जोडा-तोडा जाता है कलुषित किया जाता है तब दूसरा व्यक्ति केवल नरक ही हो सकता है।"

यह बात आठ नाटको और मानवीय सबधो को लेकर वर्षों के सघष के बाद कही गयी। निश्चित रूप से गार्सिन यह नही कहता कि दूसरे लोग नरक' हैं बल्कि वह कहता है, नरक दूसरे लोगो' का है। दोनो मे बडा अन्तर है।

नो एक्जिट नाटक अपने म किसी विकल्प का सकेत भी नही करता। स्पष्टीकरण का सात्र का अपना प्रयास यह नहीं कहता कि वे अपने तीनो पात्रो को नरक म स्थापित करते हैं—शातिवादी, बुजदिल गार्सिन, पीडा सम्भोगी इनेस और हत्यारिन बुजदिल इस्तेला, जो पूणत आत्म-केन्द्रित और इस बात पर निभर है कि दूसरे उसके बारे में क्या कहते है। गार्सिन अपनी कायरता स छिपने के लिए अलग रहना चाहता है। इस्तेला उसकी स्वीकृति और दिलचस्पी के लिए परेशान रहती है। जसे ही व एक-दूसरे की आत्म-प्रवचना को स्वीकार करना शुरू करते हैं, इनेस ठडा सत्य

सामने रखती है। तीनों में से कोई चैन नहीं पाता न अकेला रह पाता है न एक-दूसरे में बन पाता है। अत्यधिक सहजता और क्षमता से सात्र व चरित्र प्रस्तुत करते हैं जो एक-दूसरे को यन्त्रणा देने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर पाते। अमूर्त रूप में तर्क देते हुए सात्र यह कह सकते हैं कि स्वेच्छा में व अपने-आप को नरक में रखते हैं। उनका आचरण अनिवार्य हो जाता है। उई क्लो में व ऐसे ही विशिष्ट चरित्र प्रस्तुत करते हैं। इसमें यह संकेत भी नहीं मिलता कि ये किसी और तरह से भी आचरण कर सकते हैं। उनके आचरण के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं जो किसी विकल्प को सकते हैं। अचानक दरवाजा खुल जाता है और जाने का मौका उन्हें मिलता है लेकिन कहाँ? नरक में। प्रत्येक पात्र वहीं दूसरे के साथ रहना स्वीकार करता है लेकिन जब व अपने होशो-हवास में रहते हैं तब स्वतन्त्रता के लिए उनके तर्क नितान्त आलंकारिक लगते हैं इनेज गार्सिन और इस्तेला को एक दूसरे की जरूरत है अपने विशिष्ट नरक की जरूरत है वे उससे चिपके हुए हैं।

यदि उई क्लो यानी नो एक्जिट' यह सिमम दृश्य इतने प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है तो यह श्रेय उस नाटक को है जो इतनी परिपूर्णता से निष्पादित हुआ है। ल मूश' की जड़ता और आलंकारिकता इसमें कहीं नहीं मिलती। नरक की सशक्त इमेज पर इसका निर्माण हुआ है, जिसमें 'सेकंड इम्पायर' के रूप में एक ड्राइंग रूम है जिसमें दो आदमी और हैं। इस नाटक में स्पश का निणय है, जो सात्र के ले से कस्ले दालतोना को छोड़ कर अन्य किसी नाटक में नहीं मिलता। बिना कृत्रिमता, असंबद्धता, अनावश्यक तामझाम के चरित्र यथार्थ हैं। यह बात विचारणीय है कि सात्र के शास्त्रीय अस्तित्ववादी नाटक और उनके इस पहले अभियोजित नाटक के बीच कलात्मक अंतर क्या है? यदि कालहीन निराशावाद का नाटक अपने पूर्ववर्ती नाटकों से इतना बेहतर हो सकता है तो इसलिए कि सात्र इसमें माहिर थे। अभियोजना सात्र के लिए नहीं थी बल्कि यह एक परियोजना थी जिसकी मेहनत ओरेस्ट्स के चरित्र में नाटकीकृत दिखाई पड़ती है। ल मूश द्वारा जो मुद्दे उठाये गये हैं उन पर काम करना था उन पर २० हासिल करनी थी, इससे पहले कि सात्र के ऐतिहासिक और

प्रतिबद्ध चरित्र 'उई क्लो' के कालहीन एकाकी व्यक्तियों का प्राकृतिक प्रतिबिम्बन करने लगे इससे पहले कि आलंकारिक वक्तव्य मानव-वक्तव्य हो जाये और नाटकीय भाव भंगिमा सामाजिक क्रिया-कलाप में परिवर्तित हो जाये। इसमें पन्द्रह वर्ष लगे, जिसने पहले सात्र ने अभियोजित रंगमंच का विकास किया जो उई क्लो' की कलात्मक सफलता तक पहुंच पाया।

मानवीय सम्बन्धों के लिए 'ल मूश' में जो केन्द्रीय प्रश्न उठाया गया है उसे उई क्लो' आगे बढ़ाता है। प्रश्न उठता है कि क्या ऐसे मानवीय सम्बन्ध विकसित किये जा सकते हैं जो नाटकीय न हों? मंच के बारे में अपनी मूल दृष्टि को कायम रखते हुए सात्र उन अभिनय के संदर्भ में आगे बढ़ाते हैं और कहते हैं कि अभिनय करते वक्त भी अभिनेता अपनी इस अभिनय क्रिया के प्रति सचेत होता है। सात्र यहां पर चेतना की चेतना और एक नये परावर्तन की बात करते हैं। प्रामाणिक सम्बन्धों के लिए सात्र के अनुसार यदि व्यक्ति सचेत हो अपने व्यामोह को समझ सके तो वह इससे मुक्ति पा सकता है और इसीलिए हम कह सकते हैं कि नरक दूसरे लोग हैं या प्रत्येक दूसरा मेरे लिए नरक है'—यह वाक्य सात्र का अन्तिम नहीं बल्कि प्रथम वाक्य था। 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' में सात्र जब मानवीय सम्बन्धों का विश्लेषण शुरू करते हैं तब उनमें निहित संघर्ष को उजागर करते हैं। संघर्ष का यह एक ऐसा सम्बन्ध है, जिसमें हमेशा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को वस्तु रूप में परिगत करना चाहता है। सात्र की दार्शनिक अवधारणाओं के ये शुरुआत के दिन थे जिनको प्रायः आलोचकों ने एक बड़ा ही नकारात्मक तकिया कलाम बनाकर रख दिया। हम देखते हैं कि यही सात्र आगे चलकर 'क्रिटीक' में मानवीय सहयोग और समुदाय की बात करते हैं और प्रत्येक प्रकार के दमन के विरोध में एक निरंतर समग्र से समग्रतर की ओर जाने वाले प्रामाणिक सम्बन्ध की रूप रेखा हमारे सामने रखते हैं।

सात्र के अभियोजित रंगमंच का पहला सफल नाटक ले मैं साल' था जो अप्रैल १९४८ में पेरिस के मंच पर एक धमाके के साथ मंचित किया गया। संभवतः सात्र का यह सर्वाधिक उत्तेजनापूर्ण नाटक है जिसमें तनाव और द्विअर्थीपन भी है और यह राजनीतिक और व्यक्तिगत रूप से वैयक्तिक

किरदार प्रस्तुत करता है जिनके अभिनय म महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक मुद्दे आ जाते हैं।

नाटक को पढने स पहली बार सभव है कि पाठक का निणय विपरीत चला जाए। स्पष्टत ह्यूगो एक दूसरा आरेस्ट्स लगता है दलों स पथक। वह दूसरो की नजरो स स्वय अनुभव हासिल करता है और वास्तविक अभिनय की जगह हाव भाव तथा अग विक्षप से काम लता है। जिनकी सहायता वह करगा उनके प्रति यह उपक्षापूर्ण नजर रखता है। जहा तक ओरेस्ट्स का सवाल है वह स्वय को ही बचाने म लगा रहता है। वह प्रेक्षक की नजर म अपराधो क माध्यम स अपनी पहचान स्थगित करने वाला प्रतीत होता है।

लेकिन एक विशेष मुद्दे पर ह्यूगो ओरेस्टस स अलग है। राजनीतिक जीवन के क्रिया-कलापो क प्रति वह प्रतिबद्ध है, यही उसका गतव्य है। इसी चश्म स वह स्वय को दखता है अपनी कमियो को परखता है। यही एक ऐसी स्थिति है जो उसे नाटक म निरक्षेप भूमिका अदा नही करने दती। ल मूश म सात्र ओरेस्ट्स क माध्यम स बोलते है जिसका विधाजन बडे पैमाने पर नाटक के सदभ का खाका माना जा सकता है। कोई भाव भगिमा नही जिसे घटाया-बढाया जा सकता है या जिसकी आलोचना की जा सकती है या जिसके एक या अनेक विकल्प रखे जा सकते है, लेकिन 'ले मैं साल' म अस्तित्ववादी नायक सात्र का दार्शनिक सदभ बिंदु नही रह जाता। आरेस्ट्स का चरित्र एक यत्रणाभोगी युवा बन जाता है, जो एक नये सन्दभ बिंदु म अपनी पहचान खोजता है। वह नया सदर्भ बिंदु व्यवहार कुशल कम्युनिस्ट होयडरर नामक पात्र है। ले मैं साल का दार्शनिक-नतिक-राजनीतिक खाका होयडरर की समाजवादी भविष्य के प्रति प्रतिबद्धता ह मानवता के प्रति उसका प्रेम जनता स उसका लगाव, उसकी स्पष्टता उसका यथार्थबोध उसकी प्रभावशालिता तथा उसका लचीलापन है। भाव भगिमा क प्रति उसका अस्वीकार उसकी ऐतिहासिक दृष्टि का अर्थ है।

जसा कि आलोचको न कहा है होयडरर सात्र के नाटको म एक सकारात्मक पात्र है। उसके प्रतिबद्ध मानवतावाद के माध्यम से ही सात्र पहली

वार ह्यूगो के आरेस्ट्रस रूप का मुकाबला कर पाए अभिनय की मूलभूत प्रामाणिकता स्थापित कर पाए। यन्त्रणाभोगी बचकानी मौत के प्रति हायडरर के उदारतावादी दृष्टिकोण के जरिये ही वह स्व दूसरे की दुविधा में परे दख पाए है। कम के स ला लितरत्यार' में समाजवाद के विचार ने सात्र को उनके प्रारम्भिक सृजन के सद्धांतिक संकट से उबारा। ह्योयडरर के चित्रण में अपने प्रारम्भिक पात्रों की चरित्रगत कमियों से परे वयक्तिक मानवीय सभावनाओं को पलक व दख पाए है।

किशोर के रूप में एक विघाजित आदमी को प्रस्तुत करके सात्र अपनी स्थिति के कारणों पर विचार शुरू करते है। भाव भंगिमाए ह्यूगो के बुर्जुवाई पृष्ठभूमि के कारण पनपती है। अपने अमीर पिता के प्रति उसका विद्रोह भूख को कभी न जान पाने की उसकी अपराध भावना पार्टी के सदस्यों में एक न हो पाने की विवशता वहीं एक स्थान न पाने की ग्लानि अपनी प्रतिबद्धता की एकांगी शुद्धता का अमूत रूप अपनी आत्मतन्मयता आदि तत्त्व उसके व्यक्तित्व में निहित हैं। ह्यूगो का चित्रण करके सात्र एक विशिष्ट प्रगति प्राप्त करते हैं। ल मूश के अनेक चरित्र चित्रणों का वह एतिहासीकरण कर देते हैं और उनके ठोस सामाजिक मूलों की खोज आरम्भ कर देते है। ल मैं साल के सर्वाधिक आतरिक तनाव में भी मोटे तौर पर इतिहास विपरीत विचारधारा दिखाई पडती है। ह्यूगो अपनी पृष्ठभूमि में पलायन का प्रयास करता है। पार्टी के नेताओं नर्द और ओल्गा और खुद अपने सामने स्वयं को साबित करने के लिए वह होयडरर को मारना चाहता है। जेसिका की पृष्ठभूमि भी ह्यूगो जसी है। एक स्त्री के रूप में अपनी वास्तविकता के बारे में वह उतनी ही असुरक्षित है। वह अनुमानित विश्वास के सहारे जी रही है। एक वास्तविक आदमी का विश्वास जीतने के लिए वह हायडरर को पथभ्रष्ट करना चाहती है।

फिर भी 'ल मैं साल' में नाटकीय कमजोरिया रह जाती है जिनसे यह अभिव्यक्त होता है कि सात्र एतिहासिक और व्यक्तिगत सदर्भों को सश्लेषित नहीं कर पाए है। एतिहासिक झरोखे में पात्र वैयक्तिक रूप में खड़े रहते है। सभी पात्र एकांगी एक सीमा तक रूढ़िवादी रह जाते है पूरी तरह एकीकृत नहीं हो पाते। उदाहरण के लिए जेसिका सात्र की सभी महिला

पात्रों में अधिक जटिल है लेकिन अपनी पहचान के अभाव में वह भी उन्हीं जैसी लगती है पुरुष जगत का सामना करने के अयोग्य। वह नहीं जानती, यह एक मुद्दा भी हो सकता है। यौन संबंध और तर्कहीनता उसके प्रमुख आयाम हैं। ह्यूगो की निश्छलता और उसका राजनीतिक अज्ञान पार्टी अखबार के संपादन के लिए असंभाव्य है। स्लिक और जाज के सामने वह बिल्कुल बचकाना लगता है। उनकी दृष्टि में वह अविश्वसनीय है। कई स्थानों पर नाटक का संवाद राजनीतिक और व्यक्तिगत संदर्भों से कटा हुआ जड़ और बेतुका लगता है।

जहां तक नाटक का सवाल है वह स्पष्टतः राजनीतिक है। रूढ़िवादी कम्युनिस्टों की इसमें खूब आलोचना की गई है। लुई और ओल्गा होयडरर को अनाचारी और ऐसा दुश्मन मानते हैं जिसकी हत्या कर देनी चाहिए। वे राजनीतिक धोखाधड़ी को नकारने का बहाना करके इतिहास को झुठलाते हैं और आदमी को मशीन समझते हैं। इसके विपरीत होयडरर अपने विरोधियों का सामना करता है और राजनीतिक स्तर पर उनसे संघर्ष करना चाहता है। वह स्थितियों पर कोई 'फार्मूला' लागू करने के बजाय उनका विश्लेषण करता है। समाजवादी उद्देश्य के लिए प्रतिबद्ध रहकर भी वह यथार्थ की सराहना करता है। झूठ बोलने को वह एक राजनीतिक छल मानता है जो परिस्थिति के अनुसार आदमी को करना पड़ता है। क्रांतिकारी नैतिकता में उसकी गुंजाइश रहती है। लोगों के प्रति उसके मन में सम्मान है। अन्त में रूढ़िवादी वर्ग जब अपने निहित स्वार्थों के लिए ह्यूगो की अपरिपक्वता से फायदा उठाने की बात सोचने लगता है तब होयडरर अपने जीवन की शर्त पर भी ह्यूगो का सम्मान करते हुए उसके आशय को अच्छी तरह समझते हुए भी एक रिश्ते का प्रस्ताव रखता है।

इन दो प्रकार के कम्युनिस्टों के दो छोरों के बीच ह्यूगो अपनी पहचान स्थापित करने के लिए संघर्ष करता है। वह सही अर्थों में प्रभावी बनने के लिए अपनी अयोग्यता से उबरना चाहता है। संयोगवश वह जेसिका को ठीक उसी समय होयडरर के साथ देख लेता है जब वह उसका रिश्ता कबूल करने की बात सोच रहा होता है। वह हत्या करता है जिसकी अभिप्रेरणा

उस अन्तिम क्षण तक जब लुई के आदमी उसे हिरासत में लेने आते हैं उसे चक्कर में डाले रहती है लेकिन क्या उसकी आत्महत्या उसकी हत्या की क्रिया की आवृत्ति है? एक बचकानी नाटकीय भंगिमा जो परिवर्तन के प्रति अपनी असमर्थता जाहिर करती है, उसे इच्छा में पूर्णतः व्यक्तिगत असफलता है। जब उसे यह पता चलता है कि होयडरर की जिन बातों का विरोध होता था सोवियत रूस के हुक्म के बाद वही अब पार्टी की योजना बन गई है तब वह पार्टी में पुनः शामिल होने को तैयार हो जाता है और काम पर लौट जाता है। होयडरर को अब पुनर्स्थापित किया जाएगा। उसका हत्यारा जिसने उसकी हत्या अपने व्यक्तिगत हित के लिए की मृत मान लिया गया है। ह्यूगो की प्रतिक्रिया में नाटकीय भाव भंगिमा के साथ पार्टी की वास्तविक आलोचना मुखर होती है। यदि उसका दृष्टिकोण स्पष्टतः गलत था, तो पार्टी भी तो गलत थी। पार्टी के झूठ का मान दान में [illegible] की अनिवार्यता साबित करते हैं यह कहकर कि ह्यूगो अगर होयडरर को समझ सका तो वह ओल्गा में मदमस्त हो जाता और अपना नाम बदलकर संगठन में बना रहता। हालांकि होयडरर ने कह जरूर लेकिन परमार्थी सही, क्रांतिकारी उद्देश्य के नाम पर समझौता नहीं किया। लुई और ओल्गा की तरह वह भी मानवी सैद्धांतिक चिंतन पर अड़ा रहा।

नाटक स्पष्ट रूप में पार्टी के गुटों को प्रतिपादित नहीं करता। स्तालिन की चौखट में आरोपित सा मालूम पड़ता है। ह्यूगो की दुविधात्मकता में यह बात स्पष्ट हो जाती है जब वह उसकी ताकत और हिंसावादिता को समर्पित होता है या अपने व्यक्तिगत असंतोष और अवास्तविकताओं को छिपाने के लिए भाव भंगिमा का सहारा लेता है। होयडरर की तरह का कम्युनिस्ट ही एक सही विकल्प प्रस्तुत करता है लेकिन ह्यूगो तथा ओल्गा और लुई दोनों की अनिवार्यता [illegible] पार्टी के गुटों की अनिवार्यता, अपने-आप को बुर्जुआ बुद्धिजीवी के [illegible] है जो अपने यथार्थ के प्रति स्वयं अनिश्चित है। [illegible] ह्यूगो के साथ तादात्म्य स्थापित करता है इसलिए [illegible] आवाज उसकी आवाज है बल्कि उसकी निराशा, [illegible] की उसकी अयोग्यता, अपने-आप को ही नहीं [illegible]

साबित कर बठती है।

कुल मिलाकर कहन का मतलब यह है कि 'ल मै साल की राजनीतिक और नाटकीय उपलब्धिया का विभाजित नही किया जा सकता, लकिन बात यहा खत्म नही होती। प्रक्षागह से निकलत हुए प्रेक्षक उसी निरथकता का बोध प्राप्त करता है जो ल मूश या उई क्लो के समय किया था। सार्त्रीय रगमच म एक पूरा सकारात्मक चरित्र है, जिसकी हत्या दोना तरह स होती है दुघटना द्वारा और अत प्रेरणा से भी। प्रधान पार्टी दल सावियत सघ के हुक्म पर चलता है ह यूगा कुछ भी नही सीखता और आत्महत्या कर लता है। यदि सार्त्रीय रगमच का उद्देश्य मानवीय स्तर पर प्रभावशाली ढग से अभिनय की क्षमता की तलाश करना था तो यह मान लना चाहिए कि 'ले मैं साल से वह उद्देश्य पूरा नही होता लेकिन हो सकता है सात्र अपनी सीमाओ को नही बल्कि १९४८ की गतिविधिया को ही चित्रित कर रहे थ। एक एस समाज की गतिविधिया को जहा केवल कम्युनिस्ट पार्टी सशक्त क्रातिकारी शक्ति की तरह काम कर रही थी। जहा उनका अपना चिंतन पहली बार वस्तुनिष्ठ एतिहासिक मुद्दा स टकरान लगा था। उस ऐतिहासिक वतमान स परे सभावनाआ का नाटकीकरण क्या सात्र के लिए मभव था? सभी जानते है कि पेरिस म जब ले मै साल दिखाया जा रहा था सात्र ने आर० डी० आर०[1] म थड व का सजन करन की कोशिश की और असफल हुए। इस असफलता के बाद व पी० सी० एफ०[2] म वापस आ गए क्योकि व्यक्तिगत राजनीतिक लगाव के नाम पर वही एक रास्ता बचा था। इसस ले मैं साल के बार म बेहद दिलचस्प तथ्य हमार सामन आता है कि सात्र न इसे दुबारा लिखा मचित हान के बाद कम्युनिस्ट पार्टी की आलोचना को नकारत हुए और यह तय करत हुए कि कहा और कस इसका मचन हो। उन्हें बाध्य होना पडा कि पी० सी० एफ० की आलोचना वे बर्दाश्त करत जाए या खुद को इसका दुश्मन करार हान दे। इतिहास न उनपर एक तरह का समपण आरोपित किया तथा अन्य वस्तुओ के साथ

१ आर डी०आर०—फ्रास की गणतात्रिक क्रातिकारी पार्टी
२ पी०सी एफ०—फ्रास की कम्युनिस्ट पार्टी

द्वितीय अध्याय

द्वितीय विश्वयुद्ध तक सात्र स्वयं को प्रमुखतया एक 'नयक' ही मानते रहे उनके लिए साहित्य अपने-आप में एक निरपेक्ष मूल्य था जो कालातीत होकर इतिहास से बाहर रहकर भी मानवीय घटनाओं का विवेचन करने में समर्थ है।

सात्र ले तों मोदार्न पत्रिका के सम्पादक परिमण्डल में शामिल हुए हैं, जिसमें अभिव्यक्ति रंगमंच के लिए लिखे गये नाटकों के साथ साथ सात्र साहित्य एवं साहित्यकारों से प्रतिबद्धता की मांग करते हैं। इस परिमंडल में रेमण्ड एरन माइकेल लिरिस मौरिस मार्लो पान्ति एलबर्ट औलिविचर जी पॉल्हन और सिमोन द बोउआर भी थे। व्यस्तता के कारण काम कम ही हो पाता था। पत्रिका सफल रही लेकिन उसका संस्करण ११००० तक भी नहीं पहुंच पाया।

शीत युद्ध शुरू हो गया था। दसवें संस्करण तक एरन और औलिविचर ने त्याग-पत्र दे दिया। दिसम्बर १९४६ तक संपादकीय जिसे समूचे वाड़ की ओर से जाना था वियतनाम में दोबारा औपनिवेशिक शासन लागू करने के फ्रांसीसी सरकार के प्रयासों के विरुद्ध लिखा गया। पार्टी के बाहर वाले समाजवादियों के लिए यह पत्रिका एक बौद्धिक जरूरत बन गई। मार्क्सवाद और साम्यवाद से अपनी सहानुभूति इस पत्रिका ने स्थापित कर ली। असाम्प्रदायिक स्तर पर यह विश्लेषण और पुनर्विचार करती रही।

किसी भी अंक को उठाकर देखा जाए विविध प्रकार के लेख और विविध लेखकों के नाम उस अंक में उपलब्ध हैं। मिसाल के तौर पर १९५९ के प्रारंभ में प्रकाशित संख्या १५६ १५७ में तीन लेख अलजीरियाई मिथक और वास्तविकता पर छपे। यह वह समय था जब अलजीरिया में संघर्ष कायम था। 'फ्रांसीसी उद्योग के नये आयाम' शीर्षक से सर्ज मालेत का अभि

लेख, इसाक द्वारा लिखित त्रात्सकी की आत्मकथा का अंश, लुसीन गोल्डमान द्वारा कार्यान्वयन पर लेख इत्यादि उस अंक में मिल जाते हैं। इन्हीं सालों के दौरान सात्र और बोउआर का लेखन भी उसी पत्रिका में छपा कुछ प्रमुख लेखन किस्तों में भी प्रकाशित हुआ।

डायरेक्टर की हैसियत से सात्र की गतिविधियां बड़ी असंगत सी रहीं। आरम्भ में वे पत्रिका के साथ बड़ी गहराई से जुड़े रहे हालांकि मार्लो पोन्ति मूल राजनीतिक पथ प्रदर्शक थे। बाद में जब कोरियन युद्ध पर मार्लो पोन्ति चुप रह गये, पत्रिका उद्देश्यहीन होकर इधर-उधर भटक गई तब सात्र ने उसे साम्यवादी दिशा निर्देश दिया और मार्लो पोन्ति अलग हो गए। अलजीरियाई युद्ध के दौरान सात्र पत्रिका से गहराई से जुड़े रहे और अपनी पत्रिका को फ्रांसीसी योजनाओं के लिए सत्याग्रह का केन्द्र बनाकर डटे रहे। मई १९६८ के बाद पत्रिका उनकी किसी भी कृति से अधिक उनके लिए महत्त्वपूर्ण हो गई, यह पत्रिका सात्र की बौद्धिक प्रतिबद्धता का मूर्तिमान रूप साबित हुई।

दिसम्बर १९४५ में प्रकाशित पत्रिका का तीसरा अंक सात्र के उस लेख का पहला हिस्सा लेकर सामने आया, जो उन्होंने गत वर्ष समाप्त किया था। १९४६ की सर्दियों तक यह लेख एक पूरी पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो गया। इस पुस्तक में सात्र ने समसामयिक गहनतम कठिनाइयों वाले मुद्दों पर पूरी दृढ़ता से अपने विचार सामने रखे थे। उन्होंने कहा उपनिवेशवाद और साम्यवाद के अपने व्यवहार के लिए फ्रांस को शर्मिन्दा होना पड़ेगा।" इसी समय सामीवाद विरोध फ्रांसीसी समाज में जड़ें जमाए सक्रिय था। सात्र ने सामीवाद विरोधियों का विश्लेषण किया तथा प्रामाणिक अप्रामाणिक सूत्र प्रतिक्रियाओं की उस सीमा तक गए जो यहूदी विकास से सबधित था। सामीवाद विरोधियों की समस्याओं के निश्चित निदान के लिए उन्होंने रूपरेखा बनाई पारस्परिक निर्भरता पर आधारित एक वर्ग हीन समाज की चर्चा की।

अब तक के उनके समस्त लेखन से अलग ल तॉ मोदान का यह लेख अनेक कारणों से महत्त्वपूर्ण है। बड़ी दृढ़ता से सात्र ने यहां एक उपयुक्त लेखक की भूमिका निभाई है। दमित लोगों के प्रति उनकी

इसी लेख मे उभरकर सामने आई। सामाजिक चिंतन मे विशिष्ट रूप से सात्र का यही योगदान साबित हुआ और इस लेख की सबसे महत्त्वपूर्ण विशिष्टता यह है कि वर्गों के सामाजिक प्रश्न के सामने यह व्यवस्था से प्रश्न उठाता है।

ल तो मोदान के प्रस्तुतीकरण स जो गहराई उजागर हुइ उस पर अब मात्र पुर्नविचार करने लगे थ उस व्यक्ति की तरह जो एक लेखक व मानव जीवन के एक विश्लेषक के रूप म एक निश्चित इतिहास म बध गया हो। जिन समस्याओ का स्पष्टीकरण उन्होने तात्विक स्तर पर किया था उन्ह व अब सामाजिक परिभाषाए दने लगे। जूझ पडने की आशा के सामने निराशावादी दृष्टिकोण परास्त हो गया। व्यस्तता मात्र दायित्वो के कारण नही बढी अब उसम उन्ह आत्मसतोष भी मिलने लगा।

लेखक के लिए पलायन का रास्ता नही है। हम चाहते हैं कि वह अपने समय स जुडा रहे, यह उसका अचूक अवसर है इसका निर्माण उसी के लिए हुआ है और वह इसी के लिए बना है।'

सात्र अपनी बहुचर्चित पुस्तक ह्वाट इज लिटरेचर म कहते हैं लेखक जानता है कि शब्द भरी हुई बन्दूक है। अगर वह बोलता है तो बन्दूक चलता है। वह खामोश रह सकता है लेकिन चूकि उसने गोली चलाना वरण किया है इसीलिए उसे यह काम बच्चो की तरह नही, वयस्क आदमी की तरह निशाना साधकर करना होगा।

लेखक ने जगत और विशेष रूप मे दूसरे आदमियो के सामने आदमी को अपने लेखन काय म अभिव्यक्त करना वरण किया है ताकि आदमी अपनी पूरी जिम्मेदारी समझ सके। लेखक का धम है, इस प्रकार काम करना ताकि कोई जगत से अनजान न रहे। न कोई यह कह सके कि जगत मे जो कुछ हो रहा है उसमे वह शामिल नही। जब एक बार उसने स्वय को भाषा के ब्रह्माड म अभियोजित कर लिया है तब न बोलने का बहाना भी नही कर सकता। एक बार जब व्यक्ति मूल्याकन या अथबोध के जगत म प्रवेश कर जाता है तब वहा से निकलने के लिए वह कुछ नही कर सकता। शब्दो के सगठन स वाक्य बनते हैं। हर वाक्य की एक भाषा है। उसका सदभ पूरे ब्रह्माड से जुडता है। खामोशी भाषा का एक क्षण है।

खामोशी शब्दो के सदभ मे ही परिभाषित है। सात्र कहते हैं, लेखक चुप नही हो सकता। यदि लेखक बोलने से इनकार करता है, तो इसका अथ यह नही कि वह गूगा है। उससे प्रश्न होगा कि आप चुप क्या हैं? बोलना या न बोलना, दोनो ही अपने-आप मे लेखक की पक्षधरता लिये हुए होते हैं। अत प्रतिबद्धता लेखन की पहली शत है।" सात्र फिर कहते हैं, "हमारे लिए लखन एक व्यवसाय है। हम यह प्रयास करते है कि जहा तक सभव हो, हम अपनी पुस्तको मे सही रह। शताब्दिया हम गलत साबित करती आ रही हैं। कोई कारण नही कि हम अन्तिम रूप से गलत साबित कर दिया जाये। हम यह सोचते हैं कि लेखक अपने काय म स्वय को पूरी तरह लगायेगा अपनी निष्क्रियता साबित नही करेगा, न अपन दुभाग्य और कम-जोरियो का रोना रोयेगा, वल्कि अपने जीवन की दृढ इच्छाशक्ति, अपने वरण, उस सपूण साहस का परिचय देगा जिसम मानव रहता है।"

प्रश्न उठता है कि लेखक क्यो लिखता है? सात्र कहते हैं कि लेखक सार्वजनिक पाठक के लिए लिखता है और उसकी अनिवायता सभी व्यक्तियो के लिए होती ह। जो लोग एक ही समय म एक ही घटना मे जिए हैं, जिन्होने एक ही जैसे प्रश्न पूछे हैं या नकारे है, जिनकी जिदगी का स्वाद एक ही है-पुस्तक, उन व्यक्तियो के बीच सम्पक स्थापित करती है। पढना और लिखना एक ही ऐतिहासिक तथ्य के दो पहलू हैं और जिस स्व-तन्त्रता के लिए लेखक हम आमत्रण देता है वह मुक्त होने की अमूत चेतना नही है। लेखक अपनी स्वतन्त्रता से एक परिचित जगत को भेदता और जीवित करना चाहता है। इसी जगत के आधार पर पाठक को एक ठोस मुक्ति लानी होती है। विनियोजन की यह स्थिति एक इतिहास है।

सात्र कहते हैं कि साहित्य की पूरी उपयोगिता एक वगहीन समाज मे ही सभव है। वहा लेखक सबके लिए आत्म-चेतना का पैगम्बर बनेगा। ऐसे समाज म लेखक सामतवादी और सवहारा वग के बीच बटेगा नही। अपनी परिस्थिति से वह इनकार नही करेगा। उसे वतमान से पलायन नही करना पडेगा। चूकि उसकी स्थिति सावजनिक होगी, इसलिए वह मानव-मात्र की आशाओ उनके आक्रोश को अभिव्यक्त करेगा। इस प्रकार स्वय अपने-आप को एक पूण अभिव्यक्ति देगा। केवल वगहीन समाज मे ही

साहित्य जन निणय के लिए समर्पित एव आत्म सजग, परावर्तित रूप मे चेतन जगत का निर्माता होगा।

पूरी तरह प्रभावित होने के लिए एक लेखक को पूरी तरह गणतात्रिक समाजवादी समाज चाहिए । उसका लेखन उन पाठको के लिए है जिनम सब कुछ बदल देने की क्षमता है।

सात्र के लिखे पर गौर कीजिये

लेखक के लिए पलायन का रास्ता नही है। हम चाहत है कि वह अपने समय से जुडा रहे यह उसके लिए अचूक अवसर है। इसका निमाण उसी के लिए हुआ है और वह इसी के लिए बना है।

१८८४ की क्राति के प्रति वालजाक की उपक्षा और फ्लाबट की फ्रासीसी परगने के प्रति तटस्थता पर खेद प्रकट किया जाता हे। अफसोस उनक लिए होता है। कुछ था जिसस वे हमेशा के लिए वचित रह गए। हम अपने समय की किसी भी बात से वचित नही रहना चाहत। हो सकता है इससे भी सुदर कुछ हो लेकिन यह हमारा अपना है। इस युद्ध इस क्राति के बीच यही एक समय हमे जीने के लिए मिला है। हमे इस नतीजे पर नही पहुचना चाहिए जहा हम किसी तरह से जनवाद की बात कर सक। बात इसके बिल्कुल विपरीत है। जनवाद किसी बुजुग और अतिम यथाथवादी अभिभावक की सुस्त सन्तान है। खेल से बचकर निकल भागने का यह एक दूसरा प्रयास है। हमे अब विश्वास हो गया है कि बिना प्रभावित हुए बच कर कोई नही निकल सकता। तो क्या हम पत्थर की तरह स्थिर शात बन जाए ? नही हमारी तटस्थता भी एक क्रिया साबित होगी। उस व्यक्ति की निवत्ति उसके वैराग्य की तरह जिसने अपना पूरा जीवन प्राचीन सभ्यताओ मे से किसी एक के बारे म उपयास लिखकर बिता दिया। अपने म यह भी एक स्थिति को ग्रहण करना है। लेखक अपन समय मे स्थापित रहता है। प्रत्येक शब्द का एक परिणाम होता है। प्रत्यक गौन का एक नताजा निकलता है। दमन के लिए मैं फ्लाबट और गोंक्ट को उत्तरदायी मानता हू क्योकि उन्होने इसके खिलाफ एक पक्ति भी नही लिखी, न कोई विरोध किया। आप यह कह सकते हैं कि क्या लिखते, क्या विरोध करत, भला इससे उनका सरोकार क्या था ? लेकिन फिर कालास के ट्रायल से वाल्तयर

का क्या सरोकार था ? जोला के ड्रेफ्यूजने या कामो के प्रशासन को जोद ने क्या रद्द कर दिया ? इन सभी लेखकों ने अपने-अपने जीवन की प्रमुख परिस्थितियों में लेखक की हैसियत से अपना उत्तरदायित्व आंका। अधिकृत फ्रांस ने हमें हमारा दायित्व सिखाया। व्यवसाय की नियमित वृत्ति ने हमें हमारा दायित्व सिखाया। चूंकि हम अपने काल में अपने अस्तित्व द्वारा सक्रिय रहते हैं इसलिए यह निर्णय ले लेते हैं कि हमारी लेखन क्रिया सोद्देश्य होगी।

राजनीतिक प्रतिबद्धता इतने पक्षपात के बावजूद कोई गहराई नहीं पकड़ पाई, न ही 'बीइंग एण्ड नथिंगनस' के घोर संकट को ही कम कर सकी। तब सार्त्र की इस नई स्थिति को बौद्धिक रूप से प्रयोग में कैसे स्थापित किया जाए ? पी० सी० एफ० के लिए हम उनकी प्रारम्भिक सहानुभूति देख चुके हैं और समाजवाद की विचारधारा भी हमने देखी है, किन्तु सामाजिक परिवर्तन के प्रति उनका व्यक्तिगत भय सैद्धांतिक 'गाइड' के रूप में मार्क्सवाद के प्रति तटस्थता भी हम देख चुके हैं।

मुक्ति के तत्काल बाद अब वे एक सिद्धांत और एक आंदोलन के रूप में मार्क्सवाद से क्या समझते हैं ? उनका दृष्टिकोण विरोधाभासी था। कुछ साल बाद १९५० के करीब, उन्होंने स्वीकार किया कि १९३० से वे मार्क्सवाद की ओर आकर्षित होते रहे थे। युद्ध के दौरान यह स्पष्ट होता गया कि वह व्यक्तिगत आकर्षण था या दार्शनिक दृष्टिकोण अथवा राजनीतिक आन्दोलन या फिर तीनों का अद्वितीय मिश्रण। वे कहते हैं

' मैं फिर कहता हूं, यह विचारधारा नहीं थी जिसने हमें विस्थापित कर दिया। न यह मजदूर की स्थिति थी, जिसे हम अमूर्त रूप में जानते थे लेकिन उसका हमें कोई अनुभव नहीं था बल्कि वह एक संयुक्त रूप था जिसे हमने बड़े आदर्शवादी ढंग से कहा होता। हालांकि हम आदर्शवाद से छिटकते जा रहे थे—एक चिंतन के माध्यम से जो सर्वहारा वर्ग को मूर्तिमान करता है।"

दूसरे शब्दों में, पार्टी और मजदूर आन्दोलन, इन मुद्दों पर वास्तविक राजनीतिक शक्तियों की अपेक्षा सिद्धांत ने ही उन्हें प्रभावित ~ एक दार्शनिक के रूप में हम जानते हैं उन्हें किसी ठोस आधार की

थी। युद्ध आजीविका और सत्याग्रह उन्हें उस ओर ले गए। इससे उनका चिंतन उलट पुलटहो गया। मार्क्सवाद का दावा रहा है कि इतिहास का सत्य अमूर्त चिंतन के बाहर है संघर्ष मे और अतत सर्वहारा की विजय मे।

हम मजदूर वर्ग के कधे से कधा भिडाकर लडना चाहते थे और हमने अन्त मे समझा कि इतिहास ठोस द्वद्वात्मक गतिविधियो का परिणाम है। अब यह स्पष्ट होता गया कि जिस यथार्थ को सार्त्र अपने प्रारंभिक काल म तलाशते रहे वह उन्होने सक्रिय होकर हासिल कर लिया है।

१९४१ मे सार्त्र को राजनीति स अलग होना पडा, क्योकि एक आम मोर्चा स्थापित करने क अपने एकाकी प्रयास म वे विफल हो गए। युद्ध के दौरान सार्त्र क्राति और समाजवाद के सक्रिय समर्थक बन गए।

'पी० सी०एफ० मुक्तिकाल के दौरान फ्रास की सबसे बडी समाज वादी और क्रातिकारी पार्टी थी, लेकिन सत्याग्रह की भावना जसे-जसे कम होन लगी पी० सी० एफ०' न सार्त्र का नया दर्शन युवा बुद्धिजीवियो के बीच अपने एक प्रतियोगी के रूप म लिया। इसके समर्थको ने सार्त्र पर हेड गर का शयन-कक्षीय होन का आरोप लगाया। हेडेगर एक नाजी विचारक था निराशा और निषेधवादी लेखक की हैसियत स मानवीय चातुरी और गन्दगी म डूबा हुआ।

दिसम्बर १९४४ म एक्शन' साप्ताहिक म सार्त्र ने अपने ऊपर हुए प्रहारो के उत्तर दिए। इस निबंध म सार्त्र न समाजवाद के कुछ मूलभूत मतो का समर्थन किया। पी० सी० एफ की तरह व भी क्राति के लिए संघर्ष कर रह थ। उन्होन वर्ग-संघर्ष को अपनी पूरी स्वीकृति दी और पूजी वादी समाज की सुविधाओ के अन्त की कामना की। इसी समय सार्त्र न मार्क्स क साथ अपन विश्वासो को भी जोडे रखा कि मानव ने स्वय को बनाया किसी पूर्व निश्चित किसी सार की परितुष्टिस्वरूप उसकी रचना नही हुई। इसम भी आग बढकर पूरी आत्मदृढता के साथ उन्होने क्राति के लिए अपना दर्शन भौतिकवाद से अधिक उपयुक्त बताया क्योकि इसम मानव अपने लिए उत्तरदायी है। उसम अपन को बदलन की क्षमता है। अस्तित्ववाद इस प्रकार म कोई शोकाकुल अतिरेक नही था, बल्कि क्रिया,

प्रयास, स्पर्द्धा और समाजबधन से युक्त एक मानवीय दशन था।

इसी मानसिक स्थिति मे सात्र ने 'मैटीरियलिज्म एण्ड रिवोल्यूशन' लिखा, जिसम मार्क्सवाद के क्रातिकारी विकल्प के रूप मे उन्होंने अपना एक दशन सामने रखने का प्रयास किया है। उनका केन्द्रीय कथ्य था, मानवीय सवेग को मुक्ति के सवेग मे बदल देना या एक क्रातिकारी दृष्टिकोण से उसका सृजन करना। उनके अनुसार मार्क्सवाद मे यही कमी थी, जिसे वे दूर कर देना चाहते थे। इस निबन्ध से मार्क्सवाद के सदभ मे सात्र के विकास का पता चलता है। क्रातिकारी विचारो पर यह एक अमूत निबन्ध था, इसमे ऐतिहासिक और सामाजिक विश्लेषण का नितान्त अभाव था। एक निबन्धकार की हैसियत से राजनीति को अपने लेखन का विषय बनाकर सात्र ने अपने समय म अपना स्थान बना लिया था, लेकिन एक दाशनिक के रूप म वे ऐतिहासिक और सामाजिक आयामो से अनभिज्ञ रहे। मार्क्स के लेखन से भी उन्हे लगाव था ऐसा कोई प्रमाण नही मिलता।

अत १९४० से ५० तक की अवधि मे सात्र का जो लेखन हमारे सामने आता है वह मार्क्सवाद से अधिक प्रगतिशील और एक नया मानववादी दृष्टिकोण लिए हुए था। अधिकतर आलोचक सात्र की अपनी इस स्वयसिद्ध व्याख्या स सहमत नही थे। सात्र के विचारो मे आत्मवाद, शून्यवाद और देकार्ते की अहवादी अवधारणा के प्रति पूरा झुकाव देखा गया। इन सारी व्याख्याओ म सात्र एक घोर व्यक्तिवादी एव मनुष्य मात्र के लिए एक बडा निराशाजनक दष्टिकोण अपनाये हुए थे। वे हर दूसरे आदमी को नरक की सज्ञा दे रहे थ तथा प्रत्येक मानवीय क्रिया-कलाप को व्यथ का उन्माद कहते हुए दिखलाई पडते थे। समाजशास्त्रियो को उनकी यह अतार्किकता बडी बेतुकी लगी। उनके दृष्टिकोण म सात्र का लेखन जनवादी नही था। सात्र के विरोधी 'स्व' की इस खोज एव अन्वेषण को आत्मरति की सज्ञा दे रहे थ। बुजुवा परिवेश मे पले हुए सात्र, मार्क्स के ऐतिहासिक दष्टिकोण एव सर्वहारा की क्रातिकारी भूमिका से सवथा अनभिज्ञ थ।

इन आलोचनाओ के प्रत्युत्तर मे सात्र अपने अस्तित्ववाद को मानववाद की सज्ञा देते हैं। उन्होने अपना समग्र परिवतनवादी रुख बदला नही, १९४० के बाद सात्र ने अपना काफी समय बीइग एण्ड

व्याख्यायित अवधारणाओं की अंतर्निहित संभावनाओं के स्पष्टीकरण में बिताया। सार्त्र की स्वतंत्रता की अवधारणा जहा तक मैं सोचती हू, मार्क्स वाद म एक नए सुधार की संभावना लिए हुई थी। सार्त्र के कारण बौद्धिक जगत म जो हलचल मची और १९४० के दौरान जो समुदाय उनका समर्थक बना बहुधा आलोचक उन समर्थकों की प्रामाणिकता के बारे म प्रश्न उठाते हैं। ये समर्थक थे फैशनेबल युवक, बुजुवा वर्ग जो सिर्फ कबरे और शराबखानों की बहसों म अपना समय बिताते थे और भोग तथा विलास जनित मानसिक समस्याओं को अस्तित्व की त्रासदी कहकर चर्चा का विषय बनाते थे। इनके पास न तो कोई मूल्य बोध था, न संघर्ष की क्षमता थी और न ही किसी प्रतिबद्धता की चाह। दार्शनिकों की दृष्टि म शास्त्रीय विचारों का इतना फैशनेबल रहना ही इनके छिछोरेपन का पूरा प्रमाण था।

लेकिन इसी बात को हम यदि दूसरे दृष्टिकोण से देखें, तो सार्त्र के विचार अपने आप म एक बहुत बड़ी मानवीय अपील लिये हुए थे। अस्तित्व और उससे जनित समस्याएं ऊब और उदासी लक्ष्यहीनता मूल्यों का लचीलापन संताप आदि सारे मुद्दे केवल दार्शनिकों एवं पंडितों की ही बातें नहीं रह गए थे बल्कि अब तो ये एक आदमी के जीवन म उसके विचारों मे चुनौती के रूप म आ खड़े हुए थे। सार्त्र के विचारों ने शास्त्रीय दर्शन एवं समकालीन समाज के बीच एक सेतु का काम किया। उनकी अवधारणाओं का यह जिक्र उनके चिन्तन पर बहस, केवल विश्वविद्यालयों की कक्षाओं तक ही सीमित नहीं रह गई। पेरिस म ही नहीं लंदन, न्यूयार्क तथा दूर दराज देशों में काफी हाउस ब्रेकफास्ट टेबल एवं राह चलते लोगों में भी यह चर्चा फैलती चली गई।

अस्तित्ववाद एक प्रतीक बन गया था बातचीत के लहजे म रख रखाव तथा पहनावे में एवं आम आदमी की जिन्दगी के नजरिये पर वह बुरी तरह छा गया था। कैथोलिक धर्मशास्त्री गिल्सन कहते हैं "अस्तित्ववाद की सफलता का कारण इसका फैशनेबल होना है कि यह अभिजनों का मनक भर है।"

लेकिन जहा तक मैं सोचती हू कि पहली बार दर्शन ने इतने गम्भीर

मसले को आम आदमी की जिन्दगी मे उठाया। यह सच है कि बहुत-से
स्वत आरोपित अस्तित्ववादियो ने 'बीइग एण्ड नथिंगनेस' को न तो पढा
है और न ही समझा है। वे सात्र के दशन की परिधि पर ही घूमते रहे हैं।
ज्यादा से ज्यादा उन्होंने कुछ उपन्यास एव नाटक, विशेष रूप मे सात्र का
मशहूर उपन्यास 'नौसिया' एव 'नो एक्जिट' जैसे उपन्यास एव नाटक
पढे है। मैं बस इतना ही कहना चाहती हू कि अस्तित्ववाद मात्र एक
बुजुवा प्रतिक्रिया नही, बल्कि जीवन का कुछ गम्भीर मसला लिये हुए है।

सात्र ये ऊपर दूसरा आरोप उनके जीवन दृष्टिकोण को लेकर है।
पारम्परिक बौद्धिकता यह मानती रही है कि अस्तित्ववादी अतद ष्टि,
काफी हाउस के शराब और सिगरेट के धुए मे धुधली होकर रह गयी है।
सात्र अपनी निम्न बुर्जुवा वग की जीवन शैली एव परिप्रेक्ष्य स मुक्त नही
हो पाये।

सात्र कहते हैं, ब्रूनश्वीग जैसे दाशनिको ने मावम पर केवल तीन पृष्ठ
लिखे। वे हमे वैज्ञानिक चिन्तन का इतिहास पढा रहे थे लेकिन मानवता
का जोखिम के बारे मे कुछ भी कहन मे वे असमथ थे। यह न समझ मे आने-
वाला सामारिक कोलाहल उनके अनुसार, दाशनिको के ध्यान दने के योग्य
बात नही थी। फ्रेंच आदशवाद की यह अयोग्यता, सात्र के अपने चिन्तन
को एक और नयी दिशा खोजने पर मजबूर कर रही थी। सात्र आदशवाद
का अन्दरूनी खोखलापन समझ रहे थे। इतिहास मे कटकर तर्कों की युक्ति
सगत दुनिया उनकी नजर मे बडी अमूत हो चुकी थी किन्तु मावम को
पढने से पहले सात्र १९३३-३४ ईस्वी के दौरान जमन दाशनिक हुसॅल'
तथा 'हेडेगर के सम्पक मे भी आ चुके थे। अस्तित्ववादी दीक्षा के दौरान
सार्त्र ने राजनीति और समाज के बारे मे अधिक गहराई से सोचना शुरू कर
दिया।

सात्र यह ऐलान करने मे समथ होते हैं कि इतिहास का गुप्त
सत्य' कुछ नही केवल एक पूण 'स्वतत्रता की अवधारणा है और वे स्वयं
इसी अवधारणा का विकास करना चाहते हैं। अपनी आत्मकथा
ऑफ लाइफ' मे सिमोन द बोउआर कहती हैं कि सामूहिक
को खत्म करने का एक ही तरीका हम समझ रहे थे और

का उन्मूलन। एक पूरे आवेश के साथ हम एक ही विश्वास रख पा रहे थे कि स्वातन्त्र्य प्रत्येक मानवीय खोज का अपरिमित स्रोत है तथा हम जितना ही इस स्वातन्त्र्य को विकसित होने का समय एवं स्थान देते हैं मानव जीवन उससे उतना ही समृद्ध होता है।"

युद्ध के समय सार्त्र जब 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' लिख रहे थे, तब उनकी राजनीतिक प्रतिबद्धता और भी अधिक घनीभूत हुई। उसी समय वे राजनीति में अस्तित्ववाद जीवन में विचार एवं इतिहास में तर्क का स्थान भी खोजने लगे थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय राजनीति स्थिर गति से वामपंथी होती जा रही थी। १९४१ में जब सार्त्र नाजियों का विरोध कर रहे थे तो उन्होंने अपनी स्थिति यह कहकर स्पष्ट की कि वे एक व्यवस्था विरोधी समाजवादी हैं जो व्यक्ति के मौलिक स्वातन्त्र्य के घोर पक्षधर हैं। स्वातन्त्र्य की यह अवधारणा न तो सोवियत समाज एवं न ही बुर्जुवा समाज के गले उतर सकती थी। नाजियों का विरोध करते समय सार्त्र ने अपनी स्थिति को सोशलिज्म एत लिबर्टी की संज्ञा दी थी। २० साल बाद जब उनके राजनीतिक दर्शन का रूपान्तर होता है, तब उनका यह वैचारिक बीज 'लिबर्टी' १९४३ में 'अस्तित्ववाद' हो जाता है तथा १९५७ में उनका समाजवाद हो जाता है 'अस्तित्ववादी मार्क्सवाद'। १९४०, १९५० तथा १९६० में सार्त्र के लेखन में उनका केन्द्रीय मुद्दा था दर्शन तथा राजनीति का संश्लेषण एवं मार्क्सवादी समाज में अस्तित्ववादी स्वतन्त्रता का संस्थापन।

अतः सार्त्र की १९३० की स्वतन्त्रता की अवधारणा एक बुर्जुवा का निजीकृत व्यक्तिवाद नहीं था तथा न ही यह कोई बोहेमियन बौद्धिकी का चकाचौंध करने वाला सौन्दर्यशास्त्र था। यह कोई रूमानी विद्रोह नहीं था बल्कि स्वतन्त्रता की एक ऐसी अवधारणा थी जो अपने आमूल परिवर्तनकारी दृष्टिकोण के कारण नव वामपंथी होती जा रही थी। काफी हाउस में समय बिताने वाले स्वतन्त्रता की अवधारणा पर लम्बी-लम्बी बहस करने वाले वे यही सार्त्र थे जो अल्जीरियाई युद्ध के विरोध में खड़े हो सके और जो आगे चलकर व्यवस्था के ठेकेदारों द्वारा दिया गया नोबल पुरस्कार ठुकरा सके। ये वही सार्त्र थे, जो माओवादी पत्रिकाओं के सम्पादन में लग

कर अपनी विश्व ख्याति को भर्त्सनाओं एवं आलोचनाओं की आग में झोंक सकें। १९३० की सार्त्र की स्वतंत्रता की जो अकेली खोज थी, वही १९६० में जाकर आगामी पीढ़ी की पथ प्रदर्शक बनी। सार्त्र की सारी चेष्टा थी, व्यक्ति तथा समाज के एक ऐसे सिद्धांत की खोज, जो तकनीकी समाज में आदमियत को विनियोजित कर सके।

आइये, हम सार्त्र की दार्शनिक अवधारणाओं का अवलोकन करें कि ऐतिहासिक विकास के दौरान कैसे उनके विचारों का स्वरूप बदलता गया।

व्यक्ति स्वतंत्रता

यह एक बड़ी अजीबोगरीब दास्तान है कि सार्त्र का पूर्ण स्वतंत्रता का सिद्धांत यूरोप के सबसे अधिक संक्रांतिकालीन क्षणों में प्रकट हुआ। पूंजीवादी दुनिया दो महायुद्धों को झेल चुकी थी और आर्थिक डिप्रेशन को भी भोग चुकी थी। समाज के पास ऐसा कोई विश्वास बाकी नहीं रह गया था, जो विज्ञान एवं नैतिकता की तकनीक एवं स्वतंत्रता का संश्लेषण प्रस्तुत कर सके। समाजशास्त्री इस ख्याल से कतई सहमत नहीं थे कि आदमी अपनी नियति का निर्माता स्वयं है और इस नियति के निर्माण हेतु वह स्वतंत्र भी है। १९४३ के आक्यूपाइड पेरिस में बैठकर सार्त्र लिखते हैं, 'सार तत्व से पहले अस्तित्व है। यह मानवीय स्वतंत्रता ही है जो आदमी की आदमियत को संभव करती है। अतः हम जिसे स्वतंत्रता कहते हैं मानवीय वास्तविकता से अलग नहीं। यह सच नहीं कि आदमी पहले अवस्थित होता है और बाद में क्रमशः स्वतंत्र होता है। आदमी के होने में और उसके स्वतंत्र होने में कोई भेद नहीं है।

मानवीय अस्तित्व के केन्द्र में सार्त्र ने उसकी स्वतंत्रता को रखा। स्वतंत्रता आदमी की कोई विशेष सुविधाजनक स्थिति नहीं है और न उसे स्वतंत्रता हासिल करनी है, न ही उसे आत्म संयम और के कठोर अभ्यास द्वारा स्वतंत्रता का विकास करना है। अथवा पुरुष, बालक हो या वृद्ध, बुद्धिमान हो या उनके अस्तित्व की विशेषता है। यह उन अर्थों में है, जिसे हम उसकी रोजमर्रा की जिन्दगी से अलग

मानव वास्तविकता की सरचना के पीछे छिपा हुआ यह तत्व नही, जिसका अनावरण काल के दौरान करना होगा। यह कभी भी बाद म परिलक्षित परिवर्धित होने वाली गुणवत्ता नही है। साथ ही यह एसी कोई गुणवत्ता भी नही है जो केवल बौद्धिक अभिजना को प्राप्य हो या जन्मसिद्ध अधिकार के रूप म इसका प्रयोग हो।

मात्र के लिए स्वतत्रता पूर्ण रूप से गणनात्मिक है क्योंकि यह प्रत्येक क्षण प्रत्यक व्यक्ति क औचित्य के साथ लिपटी हुई है। रोजमर्रा की जिन्दगी म अनुभूत होने वाली इस स्वतत्रता का सात्र ने अनूठा उदाहरण पेश किया है। एक कुलीन घराने की स्त्री अपनी खिडकी से बाहर राह चलते हुए आदमी को देखकर उत्तेजित हो जाती है। पहाड पर चढता हुआ आरोही अचनाक सुनसान का बात सोचने लगता है या ऊचाइयों स झाकता हुआ आदमी अचानक अपने गिरने की सभावना से चौंक उठता है। य सारी मानवीय परिस्थितिया है। रोजमर्रा की जिन्दगी है जिसम अन्तिम प्रश्न उठता है कि क्या आदमी स्वतत्र है? यह स्वतत्रता एक ऐसा आत्म अनुभव है व्यक्ति का अपना एक ऐसा निजी क्षण है, जहा पर समाज का कोई प्रतिबध लागू नही हो सकता।

मरी वार्नाक अपनी पुस्तक सात्र 'यूयॉर्क १९७१' मे लिखती है चतना की वयक्तिक विशेषता का सम्बन्ध वास्तविक जगत के साथ कैसे सस्थापित हो सात्र इसी पर चिन्तन कर रहे थे। वे वज्ञानिक ज्ञान-मीमासा की तरह केवल बाह्य जगत को ही वास्तविकता की मन्ना नही देना चाह रह थे। सात्र का घटना विज्ञान मानवीय वैयक्तिकता की वास्तविकता को स्वीकारता है। बाह्य जगत पर अपनी पकड पूरी तरह मजबूत रखते हुए हुसैल के घटना विज्ञानवाद की ओर सात्र इसीलिए आकर्षित हुए क्योंकि व रोजमर्रा की साधारण जिन्दगी के दशन पर चिन्तन करना चाह रहे थे।'

प्राइम आफ लाइफ म सिमोन दबोउआर लिखती हैं "घटना विज्ञान स सात्र का परिचय एक दिन नाइट क्लब मे उदार समाजवादी, दाशनिक रेमण्ड ऐरन के माध्यम से हुआ। ऐरन सात्र से कहते है, बधु यदि तुम घटना विज्ञानवादी हो तब तुम शराब के इस गिलास के बारे मे

भी बातें कर सकते हो और इस पर दर्शन भी लिख सकते हो।' उद्वेग से सात्र कांपने लगते है। वर्षों से वे जो खोज रहे थे, वह मानो उन्हे उसी क्षण प्राप्त हो गया। वे रास्ते म ही हुसैंल की पुस्तक खरीदते है और पन्ने पलटते हुए घर जाते है।"

अभाव

अभाव की अवधारणा मे, जीव की घटना विज्ञान (फिनामिनॉलोजी) सम्बन्धी विवेचना करत समय सात्र वास्तविकता के जिन मुख्य गुणो की खोज करते हैं, वे हैं जीव का होना तथा न होना मानवीय अस्तित्व एव अनस्तित्व तथा भाव एव अभाव अर्थात् जीव का अपने मे होना तथा जीव का अपने लिए होना। जीव अपन म अभेद्य, पूरी तरह अपारदर्शी तथा ठोस है। अजीव यानी अनस्तित्व खाली है अपने स्वय का निषेध है। यह जीव के हृदय में स्थित दरार है। जीव अपने म बीइंग इन इटसेल्फ म जो था, वह 'वही' है किन्तु जीव अपने लिए 'जो नही था यह' है। अपने लिए होना चेतना का होना है यानी सचेत होना है। घटनाक्रमो की क्रिया परिधि मे चीजें सामने भरी-पूरी आती हैं। जो कुछ भी है, जैसा भी है वैसा ही हमारे सामने आता है, लेकिन चेतना वस्तु नही है, अपितु चेतना किसी वस्तु की चेतना है। अत चेतना की सगठनात्मक सरचना अनुभवातीतता एव अतिक्रमणीयता मे निर्मित है। चेतना उसी समय जन्मती है जब वह जीव होना चाहती है, जो वह अपने-आप म नही है। सात्र ने चेतना के प्रति हुसैंर्ल के दृष्टिकोण का पूरा लाभ उठाया। चेतना वह है जो हमेशा अभिप्रेत है, अपने स बाहर झाकती हुई किसी और दिशा की ओर अपन से बाहर किसी वस्तु की ओर सकेत करती हुई और चूकि चेतना हमेशा अभिप्रेत रहती है इसीलिए सात्र ने यह माना कि इसकी सरचना म एक निषेध हमेशा निहित है अर्थात यह हमेशा 'वह होना चाहती है जो' यह कभी नही है।

अत मानवीय वास्तविकता एव मानवीय चेतना की परिभाषा करते हुए सात्र लिखत है

चेतना वह जीव है जो अपने होने के बारे मे प
इस प्रश्न म उससे इतर कुछ और ही निहित होता है।'

मानवीय वास्तविकता को केवल उसकी स्वतंत्रता के द्वारा ही समझा जा सकता है क्योंकि चेतना एक निषेध है। यह अपने जीव होने में कभी नियंत्रित नहीं होती। निःसत्व इसका धर्म नहीं। इसकी संरचना से इसकी परिभाषा इसका ठोस अस्तित्व या एवं जगत में इसका होना परिभाषित नहीं किया जा सकता। अपने-आप को जगत में अवस्थित करते हुए भी यह हमेशा अपने से परे चली जाती है। अतः बिना किसी गुणवत्ता के बिना किसी सारतत्त्व के चेतना एक खाली निषेध की तरह अवस्थित होती है। अपने-आप में यह एक अनियत एवं अविधेयक खुलापन है। जगत के साथ मनुष्य चेतना के संयोग से जो विशिष्ट संबंध बनते हैं उन्हीं ठोस परिस्थितियों से मूल्य एवं अर्थ उद्भासित होते हैं। जब आत्मी अपने आप को अपनी चेतना के जगत में फेंक देता है तब 'इस' या उस व्यक्ति या वस्तु के साथ संबंधित होने की उसकी अपनी स्वतंत्रता से उसके जीवन में अर्थ पैदा होते हैं एवं मूल्यों का स्वरूप उभरता है। मेरे मूल्यों का एकल आधार मेरी स्वतंत्रता है। निरपेक्ष रूप से कहीं भी ऐसा कुछ भी नहीं जो मेरे चुनावगत विशिष्ट मूल्यों का समर्थन करे। मैं वह जीव हूँ जिसके द्वारा मूल्य अर्थ ग्रहण करते हैं। मैं वह आधार हूँ जिस पर मेरे जीवन का सारा मानवीकरण आरोपित है जो अपने-आप में पूरी तरह निराधार है। स्वतंत्र होने का यह संताप अपने मूल्यों का आधार है फिर भी स्वयं आधारहीन होना मेरे अस्तित्व की त्रासदी है। सार्त्र ने आदमी को एक बंद डब्बे की तरह नहीं देखा। आदमी प्रत्येक क्षण अपने आप में श्रमजीवी संभावनाओं को लिये हुए जीता है एवं साथ ही उसका प्रत्येक अनुभव संताप और चिन्ता से ग्रसित भी रहता है। हम अपना निर्माण स्वयं करते है और जो हम हैं वह अपने ही चुनाव के कारण है। अस्तित्ववाद का यह साधारण तकिया कलाम पढ़िये 'अस्तित्व सार से पहले होता है।

स्वतंत्रता अपने आप में पूर्ण है और हम अपना निर्माण स्वयं करते हैं। स्वतंत्रता अपने उच्च उद्वेग तथा चिन्ता में प्रकट होती है उस संताप में जहां एक स्वतंत्र व्यक्ति होने के नाते व्यक्ति पर निरन्तर अपना निर्माण करते रहने की बाध्यता होती है। आदमी जानवर से इसीलिए भिन्न है क्योंकि उसके पास उसकी स्वतंत्रता है जिससे वह अपने मानवीय अस्तित्व

की रचना कर सकता है। इस संबंध मे सार्त्र का यह कथन अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण है कि आदमी का विकास, व्यक्तिगत तथा सामुदायिक रूप से उसके अपने हाथ म है, वह प्रकृति के अधनियमो के अधीन नही।

अपनी इस घटना विज्ञान प्रणाली (फिनोमिनोलाजिकल मैथड) मे सार्त्र स्वतत्रता की ऐतिहासिकता एव विशेषत्व पर जोर न देकर मानवीय स्थिति के प्राकृतिक परिप्रेक्ष्य म उसे एक सार्वभौमिकता प्रदान करत हैं। प्रत्येक सामाजिक स्थिति मे प्रत्येक व्यक्ति की स्वतत्रता के साथ सताप एव दुश्चिन्ता जुडी हुई है। हीगेल की 'दु खी चेतना' को मद्दे नजर रखते हुए हम कह सकत हैं कि सार्त्र का आदमी' जगत स अपना अलगाव पूरी तरह महसूस करता है। जहा आत्म के तार्किक एव ऐतिहासिक विकास म हीगेल की 'दुखी चेतना' एक क्षण या एक स्थिति की द्योतक है वहीं सार्त्र की मानवीय स्वतत्रता की दुश्चिता एव सताप केवल एक स्थापित गुणवत्ता है। आत्म नियत्रण करन की यह स्वतत्र क्षमता अपने-आप म एक बडी ही परेशान स्वतत्रता है। यह एक ऐसी स्वतत्रता है, जिसे रोजमर्रा की जिन्दगी म आदमी को झेलना पड़ता है। वह अच्छा कर अथवा बुरा, पर वह कुछ-न-कुछ करत रहन के लिए हमेशा बाध्य है अत वह स्वतत्र है। १९४७ म 'बीइग एण्ड नथिंगनेस' के प्रकाशन के पाच वर्ष बाद सताप एव दुश्चिन्ता की सार्वभौमिकता पर विचार करते हुए सार्त्र अपने इस विशिष्ट अनुभव को एक वर्गीय जामा पहनाते है। सार्त्र कहत है ' हम बुर्जुवा हैं, इसलिए बुर्जुवा दुश्चिन्ता को जानते हैं।'

हालाकि सार्त्र की दुश्चिन्ता का ख्याल जो उसके वर्गीय अनुभव की सार्वभौमिकता को स्वीकारता है, अपने-आप म समकालीन समाज का एक बहुत बडा सच लिये हुए है। बुर्जुवाजी सामाजिक सरचना म प्रामाणिक स्वतत्रता के लिए एक जबरदस्त विरोध एव दुश्मनी निहित होती है। अपने आत्म-परिवर्तन की सभावनाओ के बारे म प्रश्न करने का व्यक्ति को अधिकार कम दिया जाता है। सग्रह की वृत्ति को औचित्य प्रदान करने के कारण व्यक्ति की नैतिकता अवसरवादी तथा बाह्य सिद्धातो एव [illegible] आधारित होती है। पूजीवादी समाज म समूह और [illegible] व्यक्ति का आणवीकरण कर दिया जाता [illegible]

एव प्रतियोगिता की वत्ति को बढ़ावा मिलने के कारण सार्वीय स्वतत्रता मे बाधा उपस्थित होती है। स्वतत्र होने का मानव है दूसरे व्यक्ति के सामने वसा ही मौजूद होना जो हम हैं किन्तु आधुनिक समाज म इस प्रकार क प्रामाणिक रिश्ते सभव नही होते।

सात्र क विचारो म स्वतत्रता क साथ जुडा जो मताप है उसम हम दो पारम्परिक ख्यालो का मिश्रण पाते है। एक वह जो नियति क सामने घटने टक द। आदमी बसहारा और भाग्यवादी हो जाय। उसे जसा भी जो भी मिलता है वह उस स्वीकार ल। दूसरा गीता म दिया गया आरम्भ का उपदेश हे अजुन ! तू उठ और युद्ध कर। सात्र की अवधारणा प्रत्येक विशिष्ट प्रभुता की चुनौती देती हुई पारम्परिक ज्ञान का नकारती हुई, आदमी को एक एम निषध क रूप म रखती है जहा उसका पहला काम है बिना किसी सीमा को मान हुए अपने-आप का अपनी नियति का बनाना। अत यह एक एसी अवधारणा है जो स्वतत्र व्यक्ति का कभी भी यथास्थिति स्वीकारने नही देती। यह उस चन स नही बठने देती है न ही उसकी कठिनाइया का सरल निदान खोजने देती है और न ही उसे कभी स्वग मिल सकता है। उस तो बस निरन्तर युद्धरत रहना होगा सघष करना होगा। जीवन की अपरिमित सभावनाओ म स निरन्तर किसी-न किसी सभावना का चुनाव करते रहना होगा। बिना किसी मिथक के बिना किसी स्वग मे रहने वाले देवता के सरक्षण क तथा बिना किसी आधार के। वह महज एक टपकी हुइ बूद है जो न ही आसमान म है और न धरती पर पहुचा है। जो अपनी दुविधाओ और दुश्चिन्ताओ म जगत के सारे व्यापारो क बीच महज एक उडता हुआ सूखा पत्ता है। आदमी वह जीव है जो वह नही है और जो वह नही वह वह है। इस चक्राकार तर्कीय प्रणाली म इतने शब्दो का आडम्बर सात्र इसीलिए रचते है क्योकि व अपनी अन्तदृष्टि के दोनो छोरो को पकडे रहना चाहते है। वे स्वतत्रता को इतना सरल आशावादी सिद्धात भी नही बनाना चाहते जो एक ही झटके मे सारी समस्याओ का निदान कर दे। न ही व अपनी नियति का छोर स्वग मे बठे ईश्वर के हाथ म देना चाहते हैं।

. दृष्टि से सात्र का स्वतत्रता का सिद्धात मार्क्सवादी एव ईश्वरवादी

क्योंकि, इन दोनों ही खेमे के लोगों को परेशान करता है। दुराग्रही मार्क्सवाद, जहां स्तालिन से लेकर यन्दी शिविर और फांसी के फन्दों को स्वीकारना चाहता है वहीं दूसरी ओर ईसाई धर्मशास्त्री ईसाइयत के नाम पर शोषण तथा गरीबी को गले से उतारना चाहता है। दोनों ही भ्रम बात तो आदमियत की करते हैं, लेकिन ठोस वास्तविक जगत के आदमियों की कब्र पर खड़े होकर सात्र एक तीसरा रास्ता खोजना चाहते हैं। यह वह रास्ता है जो आदमी को आत्म नियन्त्रण की पूरी सुविधा प्रदान करना चाहता है। यह रास्ता विकसित और तकनीकी युग समाज में अन्तर्निहित सारी सम्भावनाओं को आदमी की सुविधा के लिए सम्भावित करने की चेष्टा भी प्रस्तुत करता है। सात्र चिन्ता, उद्वेग, ऊब का पूरा मानवावरण करना चाहते हैं व इस एक मानवीय समझ प्रदान करना चाहते हैं ताकि हम अपने जीवन में अपने ही निषेध और दासपन से परिचित हो सकें। अभिप्रेत चेतना अपने-आप को जगत में फेंकती है। वह मूल्यों को जन्म देता है किन्तु अपने अस्तित्व के होने की बाध्यता से मुक्त नहीं हो पाती। इसके बावजूद सात्र की स्वतन्त्रता की अवधारणा जगत में व्याप्त अप्रामाणिक स्वतन्त्रता की व्याख्या करने में सर्वथा असमर्थ रही है। उनके विचारों में स्वतन्त्रता की जो तस्वीर है, जिस स्वतन्त्र मनुष्य की वे कल्पना या परिकल्पना करते हैं वैसा मनुष्य हम इस जगत में नहीं देखते। वास्तविक समाज और दुनिया में यदि देखा जाय, तो आदमी के जीने का तरीका एकदम दूसरे ही तरह का है। 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' में सात्र जिस स्वतन्त्रता का चित्रण करते हैं सामाजिक सिद्धांत के दृष्टिकोण से यह स्वतन्त्रता अपने-आप में एक विरोधाभास है।

व्यामोह की सार्वीय अवधारणाओं का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखना जरूरी हो जाता है। अब तक दीनता में चाहे जितना भी बौद्धिक [illegible] हुए वे सब कमोबेश रूप में मानवीय वासनाओं में उत्पन्न विद्रोह के विज्ञापन पर ही आधारित थे। अब तक [illegible] में कमियों पर जो थोड़ा बहुत अध्ययन होता रहा था वह भी ये होता था कि आदमी मुक्तिसंगत तरीके से सदा [illegible] द्वारा किस प्रकार उनपर विजय पाये। इतिहास में अनूठा और अधिक मानवीय सन्दर्भ में देखी जाने लगी।

का कारण न उसका अपना पाप-कर्म है और न ही ईश्वर प्रदत्त पापो की सजा। यह केवल एक सामाजिक घटना है। १९वी सदी म कार्ल मार्क्स एव अन्य समाजशास्त्रियो ने सामाजिक अत क्रिया की प्रणालियो का जो सामाजिक विश्लेषण किया उसमे अन्ततोगत्वा यही निष्कष निकला कि आदमी के कष्ट एव सताप का कारण केवल सामाजिक शोषण एव अलगाव है। अन्त म परिवार जिसे सभ्यता के आदिकाल स इतनी पवित्र व्यवस्था माना जाता रहा है उसपर सबस बडा आघात फ्रायड के अवचेतन मस्तिष्क की अवधारणा से पडा जहा परिवार के दमन के कारण व्यक्ति-मानव को बहुत दुख एव कष्ट झेलने पडे। इन सिद्धाना स अन्वेषणात्मक तुलनाए सभव हो सकी और सामाजिक चेतना पहन म काफी अधिक विकसित हुई। अयुक्तिपरकता अलगाव न्यूरोसिस यह अचेतन मस्तिष्क की साधारण विशेषताए हैं जो आदमी के सही आत्म ज्ञान म अवरोधक सिद्ध होती हैं। ये आदमी के मानवीय स्वरूप को उजागर न करते हुए उसके वहशीपन को ही अधिक प्रेषित करती हैं। व्यामोह की अवधारणा भी इसी दृष्टिकोण स ली गयी है।

व्यामोह क्या है? इसका कारण है व्यक्ति की अपूणता स्वतत्र निणय लेने की अयोग्यता एव उसम प्रामाणिकता का अभाव। व्यामोह एक प्रकार म प्रामाणिकता का विरुद्धार्थी है। व्यामोह ज्ञान का वह आदश है, जिसमे आदमी पूरी तरह स अपने म स्थित हा जाता है। व्यामोह मे यह जरूरी हो जाता है कि हम जा हैं वही बने रहें कही कोई बदलाव की सभावना तक न हो। व्यामोह म व्यक्ति अपन आप का अन्तिम स्थिति म मान लता है जबकि व्यक्ति का वास्तविक स्वभाव है सन्व अपन म बाहर अतिक्रमण करना। अनुभवातीत अनुभवो को पान की चेष्टा उसके अस्तित्व म निहित है। दूसरी आर व्यक्ति स्वय अपने भीतर सिमट जाता है। वह नय अनुभवो के लिए तैयार नही रहता बल्कि वस्तुपरक रूप स अपन ही अहम म बन्द वह जड हो जाना चाहता है। अत आदमी को वह होन पर मजबूर करता है जो वह नही है। मसलन आदमी जब पूरी ईमानदारी का दावा करता है ता अपनी इस परिचेष्टा म वह स्वय ही इस दावे स बाहर हो जाता है क्योकि चेतना का धर्म है स्वभाव है अपने से परे जान का वह होना', जो

वह नही है। वह आदमी होने की यथास्थिति को निरन्तर चुनौती देती रहती है, जबकि ईमानदारी, यथास्थिति को बनाये रखना चाहती है। वह चेतना के प्रत्येक प्रश्न पर एक स्थितिगत स्थिरता की दीवार खडी कर देना चाहती है। उदाहरणार्थ, कॉफी हाउस मे काम करते हुए बैरे को देखिए। अपनी भूमिका को उसी प्रकार आत्मसात् कर लिया है, जिस प्रकार एक टबल केवल टेबल है। उसका विनियोजन केवल टेबल होने मे ही प्रयुक्त हो सकता है। [टेबल, अपने टबल होने मे ही प्रयुक्त हो सकता है। टेबल अपन टेबल होने की भूमिका से बाहर और कुछ नही। वह चेयर नही हो सकता, किन्तु एक आदमी यदि केवल वेटर की भूमिका म ही अपना तादात्म्य कर ल और अपन होने की किन्ही और सभावनाओ की ओर झाककर भी न देखे, तो यह उसका व्यामोह है। कुछ और होने की जो सभावना है, उसी सभावना मे उसकी स्वतत्रता निहित है, लेकिन अपनी भूमिका की जड स्वीकृति के कारण वह आदमी स्वय अपनी स्वतत्रता का निर्णय कर रहा है। यह आदमी टेबल की तरह ही, एक चीज बनकर प्रयुक्त होना स्वीकार करने लगता है।

इसी प्रकार सात्र एक बुर्जुवा स्थिति का उदाहरण देते हैं जो अपनी सभावनाओ से परिचित होते हुए भी वरण की स्वतत्रता को अस्वीकृत करता है। एक युवती का प्रेमी जब उसका हाथ अपने हाथो मे लेता है प्रेम से उसकी ओर देखता है, तब आगे घटनेवाली सारी सभावनाओ को समझते हुए भी वह अपना हाथ नही हटाती। स्थिति को देखकर भी वह अनदेखा करती है। न तो हाथ हटाकर सम्बन्ध खत्म करती है और न ही उसके प्रेम को वह स्वीकार करती है। अपितु इसके बदले अन्य उदाम रूमानी मसलो पर वह बात करने लग जाती है। यह एक बडा ही जीवित उदाहरण है। प्राय हम एम लोगो के सम्पर्क म आते हैं जो अपने जीवन म किसी भी बात का या सभावना का चुनाव नही करत, हालाकि वरण की स्वतत्रता अस्तित्व के साथ जुडी हुई है। अस्तित्व है अपनी अनन्त सभावनाओ को लिए हुए। आदमी है जिसे अपनी उन सभावनाओ म से किसी एक का चुनाव करना है, किन्तु व्यामोह म फसा हुआ आदमी अपने-आप को वस्तुरूप म देखने लगता है। यदि कभी-कभी उसकी चेतना किसी क्षण अपने प्रति सचेत

होकर कोई चुनाव करती भी है, तो वह एक कुंठित एवं पंगु वरण ही होता है।

'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' में व्यामोह की जो अवधारणा सात्र हमारे सामने रखते हैं, वह कई अर्थों में अस्पष्ट रह गयी है। अपूर्णता की सारी जिम्मेदारी सात्र ने आदमी पर डाल दी है और यह आदमी ही है जो अपने आप को व्यामोह में फंसाये रखता है। हम यहां यह तक दे सकते हैं कि काफी हाउस में काम करता हुआ वेटर सिर्फ वेटर की भूमिका ही निभा सकता है। इसके अलावा अपने काय के दौरान वह कोई अन्य चुनाव करने में परिस्थितिगत दृष्टि से अक्षम है। उसे रखा इसीलिए गया है कि वह वेटर की भूमिका अच्छी तरह निभा रहा है। यदि वह न निभा सके अथवा अपनी इस भूमिका हेतु प्रश्न करे तो उसकी नौकरी खतरे में पड सकती है या फिर उस प्रेमिका की भूमिका ही है, जो उस औरत को वस्तुरूप में परिणत करना चाहती है। उसके प्रेमी का उससे संबंधित सारा अभिप्राय इस बात का संकेतन है कि वह और अन्य कोई प्रामाणिक चुनाव न कर पाये किन्तु सात्र इन बाहरी बाध्यताओं की प्रभाविता को नहीं स्वीकारते। उनका प्रत्युत्तर है कि अपनी सीमाबद्धता के बावजूद आदमी को चुनाव करना चाहिए। जहां तक हो सके उसे प्रामाणिक चुनाव ही करना चाहिए। आलोचक यह कह सकते हैं कि व्यामोह के अनेकों उदाहरण देते हुए भी 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' में १०० २०० पृष्ठों में कहीं भी हम प्रामाणिक स्वतंत्रता का एक भी उदाहरण नहीं पाते। ७५० पृष्ठों की इस पुस्तक में केवल एक ही जगह सात्र प्रामाणिक स्वतंत्रता की बात उठाते हैं तथा कहते हैं व्यामोह में ढका हुआ व्यक्ति भी अपनी प्रामाणिकता फिर से हासिल कर सकता है। उसका आत्म जागरण संभव है।"

अतः प्रश्न यह उठता है कि जिस स्वतंत्रता को चेतना इतना अधिक परिभाषित करती है मानवीय दुनिया में हम उसी स्वतंत्रता का उतना ही अधिक अभाव क्यों पाते हैं? आदमी के लिए आखिर आदमी होना इतना कठिन क्यों है? यदि सात्र का विश्लेषण सही है और मानवीय वास्तविकता के केन्द्र में स्वतंत्रता शुरू से ही अवस्थित है तब क्या ऐसा नहीं कि प्रत्यक्ष ज्ञानवाद में मानवीय सच्चाई के कुछ आयामों का वर्णन ही नहीं किया

गया है। सात्र अपनी स्वतत्रता की अवधारणा एव व्यामोह के साथ इस मगझौत पर काफी लम्बी बहमा क बाद पहुचे है।

फ्रेंच माक्सवादियो क साथ यह लम्बी और मानवीय दृष्टि स वडी मगली लडाई थी। बीइग एण्ड नथिगनेस' म अपने विश्लेषण का क्षेत्र उ-ान क्वल व्यक्ति तक ही सीमित रखा था। व केवल व्यक्ति चेतना से ही प्रसिद्ध रह। नियतत्ववाद (डिर्टामिनिज्म) पर उनका तीखा प्रभाव पडा। अन्त म स्थितिया और उनसे पैदा होन वाली सीमाआ को उ-ान अनदेखा जरूर किया। यही कारण है कि बीइग एण्ड नथिगनेस' म व्यक्ति और समाज के बीच हम कोई मध्यस्थता नही पात। जहा १९४३ म सात्र मानवीय स्वतत्रता पर बाल रहे थ, वही १९६८ म इसी मानवीय स्वतत्रता को समाज म विघटित होने स कसे बचाया जा सक इस पर सात्र का काफी सोचना पडा।

व्यामाह की अवधारणा के साथ ही व्यक्ति की स्थितिग्रस्तता की बात उठती है। आदमी जगत मे स्थित है, यह जगत ही है जो उसकी स्वतत्रता का हिस्सा है और यदि स्वतत्रता है, तो वह इस जगत म ही सम्भव हो सकती है। सडक चलता हुआ आदमी, जगत के साथ सबधित है, वह हवा मे तैरता हुआ अणु नही है। आदमी का होना, उसके साथ सबध होन मे ही निहित है। आत्म और जगत के द्वत को सात्र पूरी तरह खारिज कर देते हैं "स्वतत्रता की राह म वस्तु जगत से जो भी अवरोध पदा होते हैं, उनसे स्वतत्रता को काई खतरा नही वल्कि इन टकराहटो के कारण स्वतत्रता और भी अधिक उदीयमान होती है। आदमी अवरोधक जगत म ही अभिनियोजित होकर अपने लिए स्वतत्र हा सकता है। इस नियोजन से बाहर स्वतत्रता का ख्याल अपना सारा अथ खो दता है।"

सात्र वैयक्तिक चेतना का पूरा विरोध करत है। वे यह नही स्वीकारते कि व्यक्ति केवल अपन विचारो और भावनाओ के अभ्यतर जगत मे ही स्वतत्र हो सकता है और जैस ही वह अन्य व्यक्तियो या वस्तुओ के सम्पर्क मे आता है, वैसे ही उसकी स्वतत्रता अधोगति की ओर प्रवाहित हो जाती है। यहा पर अस्तित्ववादी व्यक्ति किसी भी ऐसे क्षुद्रतम क्षण की कामना नही करता, जो उसकी निजीकृत चेतना बनकर रह जाये। उसका

अपना विचार या उसका भगवान या फिर उसके मानस के आभ्यतर जगत का जागतिक सबध जरूरी है। मार्क्सवाद की तरह अस्तित्ववाद भी रोजमर्रा की जिन्दगी मे प्रामाणिक स्वतन्त्रता को, वस्तुओ तथा व्यक्तियो के बीच ही देखना चाहता ह।

उपयुक्त चिन्तन का यह निहिताथ समझने के लिए हम दकार्ते स सात्र की तुलना करनी होगी। कार्तेशियन काजिटो' यानी इगो' उन बुजुवाओ की जरूरत को पूरा कर रहा था, जो अपने बुद्धिबल से वणिक व्यापार का निमाण कर रहे थे। यह औद्योगिक क्राति का पहला चरण था। इस समय ऐसे दशन की जरूरत थी जो व्यक्ति की सग्रही वत्ति को परिपुष्ट कर। अपनी अहमिका की जरूरत के लिए आदमी हर दूसरे आदमी को अपन कौशल से चलाना चाहता था। तर्काग्र विश्लेषण पर आधारित इस प्रामेथियन व्यक्ति की पूरी चेष्टा अपन आप को जागतिक प्रलोभनो स दूर करने की थी ताकि अलग रहकर बाहर स वह प्रकति को अपने कौशल से अपने व्यक्तिगत उद्देश्यो हेतु विनियोजित कर सके।

मैं सोचता हू इसीलिए मेरा चिन्तन तथा मेरा सोच मेरे अस्तित्व से पहले ही उपस्थित है। बौद्धिकता तथा चिन्तन को जो प्रधानता इस युग म मिली, उससे नये अन्वेषण के क्षेत्रो म अपार लाभ हुआ, किन्तु इतिहास के क्रमिक विकास के दौरान इसस जबदस्त हानियां भी सामन आन लगी। जनता की यह उपकरणवादी अवधारणा तथा प्रत्यक दूसर व्यक्ति को अपन स्वाथ एव अवसरवादिता म अभिनियोजित करने की इस क्षुद्र इच्छा न आदमी को शतान बना दिया। दो दो विश्वयुद्ध इस बात के साक्षी हैं। अत अस्तित्ववादी उस स्थिति की विवेचना नही करते जिसका तकनीकी निदान सम्भव हो सके। इस प्रकार सात्र उस साधारण दष्टिकोण को भी खारिज करत ह जिसक अनुसार आदमी की स्वतन्त्रता उसकी सफलता की द्योतक है। स्वतन्त्रता का अथ सात्र की नजरो म किसी एक आदमी की दूसरे आदमी पर विजय नही सासारिक बुजुवा की अपार सग्रही वत्ति भी नही, बल्कि एक ऐसा प्रामाणिक आत्म बोध है, जिसस आदमी अपने-आप को एक आदमी की तरह ही समझ और चीज को चीज की तरह।

तथ्यता, स्थितिग्रस्तता या जो कुछ भी दिया हुआ है वह कभी भी

व्यक्ति की स्वतन्त्रता का नियामक तथ्य नही हो सकता। न वह आदमी को मिटा सकता है और न विकास की ओर आगे धकेल सकता है। स्वतन्त्रता मे निहित कोई भी तत्त्व आदेशात्मक नही है। कोई भी तथ्यगत स्थिति (चाहे वह समाज की राजनीतिक या आर्थिक सरचना ही क्यो न हो) अथवा फिर कोई मानसिक अवस्था आदि, आदमी के किसी भी काय व्यापार का प्रेरक स्रोत नही हो सकती। चाहे वह मार्क्सवाद का आर्थिक आधार हो या फिर फ्रायड का लिबिडो (रतिसुख), सात्र किसी भी तरह के नियता द्वारा व्यक्ति के क्रिया-कलापो की व्याख्या नही करते क्योकि सात्र के दृष्टिकोण म यह व्यक्ति ही है, जो अपने स्वय के होने की प्रक्रिया के दौरान चुनाव करता है। पहल व्यक्ति की व्याख्या जरूरी है। उसे मूल्य बोध प्रदान करना होगा। उसे एक ऐसी बोधगम्य समष्टि म सगठित करना होगा जो हमारे अभिप्रायो का सकेत न साबित हो सके। क्रियाशीलता तभी सभव है। चूकि 'मौलिक' रूप स स्वतत्रता किसी दी हुई स्थिति से सबधित है अत जो भी दिया हुआ है और स्वतत्र है जो बाहर है और आभ्यतर जगत म है, जिसे हम समाज कहते हैं और जो व्यक्ति है, व सब आपस म एक पारस्परिक द्वन्द्वात्मक तनाव के बीच मे जाहिरा तौर पर एक-दूसरे का नियत्रण करते रहते है।

स्वतत्रता का दूसरो के साथ सबध

सात्र ने 'बीइग एण्ड नथिंगनेस' लिखते समय वैयक्तिक सबधो की ऐसी कोई भी अवधारणा विकसित नही की, जिससे स्वतत्रता तथा स्थितिग्रस्तता का विश्लेषण सभव हो सके। व्यक्ति चेतना की परिधि पर, एक दी हुई परिस्थिति मे दूसरो के साथ उसका सबध स्थित था। इससे व्यक्ति और जगत के द्वैत को खत्म करने की सात्र की परिचेष्टा और भी असफल होकर उभरती है। सात्र जहा अहमात्रवाद को खारिज करत हैं और अपने विश्लेषण को एक नयी दिशा देने का प्रयास करत हैं वही वे अदर माइड्ज' यानी अन्य व्यक्तियो की स्थापना को सही तरह सुलझा नही पात जबकि उनके अनुसार व्यक्ति चेतना के लिए अन्य व्यक्ति चेतनाओ का होना जरूरी होता है। 'यह दूसरा ही है, जो मेरे और जगत के बीच

अपना विचार या उसका भगवान या फिर उसके मानस के आभ्यतर जगत का जागतिक सबध जरूरी है। मार्क्सवाद की तरह अस्तित्ववाद भी रोजमर्रा की जिन्दगी मे प्रामाणिक स्वतन्त्रता को वस्तुओ तथा व्यक्तियो के बीच ही देखना चाहता है।

उपर्युक्त चिन्तन का यह निहितार्थ समझने के लिए हम दकार्त से सात्र की तुलना करनी होगी। कार्तेशियन काजिटो' यानी ईगो उन बुर्जुवाओ की जरूरत को पूरा कर रहा था, जो अपने बुद्धिबल से वश्विक व्यापार का निर्माण कर रहे थे। यह औद्योगिक क्राति का पहला चरण था। इस समय ऐसे दर्शन की जरूरत थी जो व्यक्ति की सग्रही वत्ति का परिपुष्ट करे। अपनी अहमिका की जरूरत के लिए आदमी हर दूसरे आदमी को अपने कौशल से चलाना चाहता था। तर्कीय विश्लेषण पर आधारित इस प्रामेथियन' व्यक्ति की पूरी चेष्टा अपने-आप को जागतिक प्रलोभनो से दूर करने की थी ताकि अलग रहकर बाहर से वह प्रकृति को, अपने कौशल से अपने व्यक्तिगत उद्देश्यो हेतु विनियोजित कर सके।

मैं सोचता हू इसीलिए मेरा चिन्तन तथा मेरा सोच, मेरे अस्तित्व से पहले ही उपस्थित है। बौद्धिकता तथा चिन्तन को जो प्रधानता इस युग मे मिली उससे नये अन्वेषण के क्षेत्रो मे अपार लाभ हुआ, किन्तु इतिहास के क्रमिक विकास के दौरान इससे जबर्दस्त हानियाँ भी सामने आने लगी। जनता की यह उपकरणवादी अवधारणा तथा प्रत्येक दूसरे व्यक्ति को अपने स्वार्थ एव अवसरवादिता मे अभिनियोजित करने की इस क्षुद्र इच्छा ने आदमी को शैतान बना दिया। दो दो विश्वयुद्ध इस बात के साक्षी हैं। अत अस्तित्ववादी उस स्थिति की विवेचना नही करते जिसका तकनीकी निदान सम्भव हो सके। इस प्रकार सात्र उस साधारण दृष्टिकोण को भी खारिज करते है जिसके अनुसार आदमी की स्वतन्त्रता उसकी सफलता की द्योतक है। स्वतन्त्रता का अर्थ सात्र की नजरो मे किसी एक आदमी की दूसरे आदमी पर विजय नही सासारिक बुर्जुवा की अपार सग्रही वत्ति भी नही बल्कि एक ऐसा प्रामाणिक आत्म बोध है जिससे आदमी अपने-आप को एक आदमी की तरह ही समझे और चीज को चीज की तरह।

तथ्यता, स्थितिग्रस्तता या जो कुछ भी दिया हुआ है, वह कभी भी

व्यक्ति की स्वतत्रता का नियामक तथ्य नही हो सकता। न वह आदमी को मिटा सकता है और न विकास की ओर आगे धकेल सकता है। स्वतत्रता मे निहित कोई भी तत्त्व आदेशात्मक नही है। कोई भी तथ्यगत स्थिति (चाहे वह समाज की राजनीतिक या आर्थिक सरचना ही क्यो न हो) अथवा फिर कोई मानसिक अवस्था आदि, आदमी के किसी भी काय व्यापार का प्रेरक स्रोत नही हो सकती। चाहे वह मार्क्सवाद का आर्थिक आधार हो या फिर फ्रायड का लिबिडो (रतिसुख), सार्त्र किसी भी तरह के नियता द्वारा व्यक्ति के क्रिया-कलापो की व्याख्या नही करते, क्योकि सार्त्र के दृष्टिकोण म यह व्यक्ति ही है, जो अपने स्वय के होने की प्रक्रिया के दौरान चुनाव करता है। पहले व्यक्ति की व्याख्या जरूरी है। उसे मूल्य-बोध प्रदान करना होगा। उसे एक ऐसी बोधगम्य समष्टि म सगठित करना होगा, जो हमारे अभिप्रायो का सकेत न साबित हो सके। क्रियाशीलता तभी सभव है। चूकि 'मौलिक रूप से स्वतत्रता किसी दी हुई स्थिति से सबधित है अत जो भी दिया हुआ है और स्वतत्र है जो बाहर है और आभ्यतर जगत म है जिसे हम समाज कहते हैं और जो व्यक्ति है, वे सब आपस म एक पारस्परिक द्वन्द्वात्मक तनाव के बीच मे जाहिरा तौर पर एक-दूसरे का नियत्रण करते रहते है।

स्वतत्रता का दूसरो के साथ सबध

सार्त्र ने 'बीइग एण्ड नथिंगनेस' लिखते समय वैयक्तिक सबधो की ऐसी कोई भी अवधारणा विकसित नही की, जिससे स्वतत्रता तथा स्थितिग्रस्तता का विश्लेषण सभव हो सके। व्यक्ति चेतना की परिधि पर एक दी हुई परिस्थिति मे दूसरो के साथ उसका सबध स्थित था। इससे व्यक्ति और जगत के द्वैत को खत्म करने की सार्त्र की परिचेष्टा और भी असफल होकर उभरती है। सार्त्र जहा अहमात्रवाद को खारिज करते हैं और अपने विश्लेषण को एक नयी दिशा देने का प्रयास करते हैं वही वे अदर माइड्ज' यानी अन्य व्यक्तियो की स्थापना को सही तरह सुलझा नही पाते जबकि उनके अनुसार व्यक्ति चेतना के लिए अन्य व्यक्ति चेतनाओ का होना बहुत जरूरी होता है। "यह दूसरा ही है, जो मेरे और जगत के बीच एक

अनिवाय मध्यस्थ की तरह अवस्थित है।'

किन्तु सात्र पुन अहमात्रवाद की तरफ झुक जाते हैं। जहां दूसरे के दष्टिपात द लुक' द्वारा व्यक्ति मौलिक रूप से दूसरे के लिए 'वीइंग फॉर अदज हो जाता है। अन दूसरे की अस्तित्व की समस्या उत्पन्न होने के बाद एक मौलिक पूवनिर्धारित अवधारणा उपस्थित होती है। वह यह है कि प्रत्येक दूसरा वह दूसरा है जो कि मैं नहीं हूं। अत 'इस दूसरे के अस्तित्व के सबध म प्रश्न उठता ही नहीं। यह दूसरा' सत्ता-मीमांसा (आनटालाजी) के दष्टिकोण स मेरी चेतना के साथ जुडा हुआ है, किन्तु फिर भी सात्र दूसरे के लिए होन का जो कुछ भी उदाहरण देत हैं, वह उनक बुर्जुवा उदाहरणो स ही अवतरित है। बुर्जुवा प्रतियोगिता का सिद्धान्त मार्त्रीय व्यक्तियो के आपसी सबधो म पूरी तरह लागू होता है। सात्र की दुनिया म प्रत्यक आदमी का दूसरे आदमी के साथ सामना एव चुनौती क रूप म एक धमकी भरे आतक के रूप म होता है। जसा कि व एक जगह लिखत हैं मैं सावजनिक पाक म हू वहां दूर घास क मदान म कुछ बचें पडी हैं। एक राहगीर उन बचों के पास स गुजरता है मैं उस आदमी को देखता हू। उस आदमी की तरह म देखत हुए भी मैं उसका अव बोध एक वस्तु रूप म ही करता हू। इसका सकेत क्या है ? जब मैं कहता हू कि यह आदमी एक वस्तु है तब इसका क्या अथ है ? यहा पर दूसरे *व्यक्ति के साथ सामना सात्र उसी तरह करते हैं जैस बाजार म दो व्यापारी* बडे ठडे नियन्त्रित एव असहज रूप मे एक दूसरे का सामना करत हैं। जहा तक सात्र का सवाल है वे अपने-आप का व्यक्ति की तरह ही समझ रहे हैं। उनकी अभिप्रेत चेतना अपनी है और वह दूसरे को भी वसे ही चतन्य रूप मे देखना चाहते हैं। कम स कम इसके लिए उनकी प्रस्तुति ता है किन्तु दूसरे व्यक्ति से वह एक हाथ की दूरी पर बडे औपचारिक तथा ठडे तरीके से ही मिल पात है किन्तु फिर भी सात्र इस सबध म किसी और हतु का निमित्त नहीं मानते न ही वे *व्यक्ति को एक चीज की तरह विनियोजित* करना चाहत है। सात्र ऐसा इसीलिए नहीं समझ सकत क्योंकि दूसरा भी उन्हें वस्तु रूप म प्रयुक्त करने के लिए स्वतन्त्र है। मेरा अपना कोई स्वय का आधार नहीं, जो मेरा होना सिद्ध कर सके। मैं स्वय अपने निणय का

आधार हूं। मैं हूं केवल दूसरे के लिए एक शुद्ध सदम।'

बुर्जुवा समाज के 'कैनवास' पर यह जो चित्र उभरता है, वह आपसी सबधों की एक ठडो बर्फीली धुन्ध म लिपटा हुआ मत्रध है। इसम होड है और ह प्रतियोगिता। मैं दूसरो के लिए एक शुद्ध मदम हू और दूसरा मेरे लिये मदम है। अत आपस म प्रेम और सांझेदारी के बदने आपसी समझ के बदले जो तथ्य उभरता है, वह है सघष का। सात्र लिखते हैं 'दूसरे के साथ मेरा मबध तभी स्थापित हो सकता है जब मैं उसकी नजर म अपना वस्तु होना स्वीकार करू यानी दूसरे की स्वतत्रता को स्वीकार करने के लिए मेरा स्वय से अलगाव एक वस्तु रूप म होना अवश्यभावी हो जाता है। यदि वह व्यक्ति है, तो मैं उसकी नजर म एक वस्तु मात्र हू। अत प्रत्येक मानवीय सबध सात्र की नजर म सघष का सबध है। प्रेम जसी महती भावना भी एक रण प्रतिक्रिया है। जिन्दगी युद्ध का मैदान है, जहा परपीडन तथा स्वपीडन, रति है। अथात दूसरा के साथ वह ठोस सबध भी सात्र की नजर म अलगावित अत क्रिया है जिसमे प्रेम सबध हो ही नही सकता, क्योकि प्रत्येक सबध बाजार की प्रतियोगिता म उत्पादित होता है। अहमात्रवाद म सात्र बस इतना ही कह सके हैं कि उन्होने स्वय की चेतना को दूसरी चेतना (अदर का आमनस) की एक सत्तामीमासीय स्थिति प्रदान की है, किन्तु जहा तक सामाजिक क्षेत्र मे चेतना की सरचना का सवाल है, वहा अन्योन्याश्रित एव दूसरे के साथ पैदा होने वाला प्रत्येक सबध एक धमकी भरा सबध मात्र है। दूसरे की स्वतत्रता को मात्र चुनौती और सघष की इस कीमत पर ही बचा पाते हैं। अपने-आप मे मानवीय प्रेम की यह अवधारणा बडी पीडा लिये हुए है।

सात्र जब जगत म दूसरो के साथ होने वाली वास्तविक अत क्रिया (मिटसीन) का विवेचन करते हैं तब वे केवल इस अस्तित्व की एक मनोवैज्ञानिक अनुघटना मात्र ही कह पाते है। दो व्यक्तियो के बीच जो वास्तविक रिश्ते होते हैं सात्र उनकी एक धूमिल तस्वीर ही खीच पाये हैं। आदमी फिर यहा अपनी चेतना (कॉजिटो) मे सीमाबद्ध परमाणु की तरह, हवा म तैरने लगता है। सामाजिक सम्बन्ध परमाणुओ मे अतवर्ती न ... बाह्य बन्धनो मे पूरी तरह शृखलाबद्ध हो जाते हैं। अत मानवीय

आभ्यतर जगत मे प्रवश न-ी कर पात तथा न ही उनमे हमारा कोई परिवतन होना सम्भव ह।

दूसरे के साथ होन वाली अवधारणा को सार्त्र द्विभाजित करत हैं। एक तो हम वस्तु (अस सब्जेक्ट) और दूसरा 'हम लोग' (वी सब्जेक्ट)। उसम पहला तो वस्तुरूपी पारस्परिकता एव दूसरा पारस्परिक अत क्रिया रूपी पारम्परिकता को प्रस्तुत करता ह किन्तु दोनो ही परिस्थितियो म दूसरे के साथ होने के लिए होन का आधार बने रहन के लिए, अपन-आप को दूसरे की नजर म वस्तु रूप म परिणत करना जरूरी हो जाता है। हम सवहारा का उदाहरण ल। उनकी वर्गीय चेतना फक्ट्री म काम करते हुए उस समय उभरती है, जब उनका मालिक एक तीसरे व्यक्ति की तरह सामन होता है। मालिक अपन दृष्टिपात से प्रत्येक श्रमिक को वस्तुरूप म यूनाक्त कर देता ह। इसका फल यह होता है कि प्रत्येक श्रमिक अपना वस्तु भाव दूसर श्रमिक के चहरे पर लिखा हुआ पढ पाता है। यह आपसी सगठन और समझौता (सवहारा का वस्तुरूप म परिणत होना) मालिक के द्वारा ही सभव हो सकता है। यह तो हुआ सार्त्र का हम वस्तु लोग।

अब आइय सार्त्र की वी सब्जेक्ट की तस्वीर पर। यह मार्क्स की सामाजिक साम्यवादी सम्बन्धो के चित्रण-सम्बन्धी विचारधारा स काफी मिलती जुलती ह। यहा पर समूह के द्वारा ही सामूहिक अनुभव उत्पन्न होता ह। किसी तीसर के दृष्टिपात की जरूरत नही है। यह एक प्रकार की सामूहिक अनुभाविता (परियोजना) का अनुभव है जो कि अपन-आप म एकल उद्देश्य है किन्तु मै इस अनुभवातीत अनुभव म एक अल्पकालिक विशिष्टता भर हू। म अपन आप को महान् मानवीय धारा म प्रवाहित कर देता हू। इसके लिए सार्त्र सब-वे स्टेशन का उदाहरण देत है फिर सार्त्र जोर देकर कहत हे कि हम लोगो की सयुक्त परिकल्पना मानव-समाज का सगठन नही करती। किसी भी प्रकार से यह अपने लिए (फार इटसल्फ) है। सार्त्र हम लोगो को एक मनोवैज्ञानिक तथ्य तो देते हैं किन्तु सत्ता मीमासा या सत्तात्मक तथ्यता प्रदान नहीं करते। सार्त्र कहते हैं कि हम लोगो का एक मनोवैज्ञानिक अनुभव है। यह हमारी चेतना की सरचना के

आन्तरिक रूपान्तरण से सबधित है, किन्तु जगत म यह दूसरो के साथ ठोस सत्तात्मक सबधो का आधार बनकर प्रकट नहीं होता। यह केवल दूसरो के बीच म स्वय को महसूस करने का प्रश्न भर है।

यहा पर हम देखते हैं कि सात्र सबधा की जो सरचना सामने रखते हैं, वह सत्ता मीमासा की स्थिति एव अवस्था का कोइ सतुलित आधार प्रदान नही कर पाता। जैसा कि सात्र लिखते हैं यह जगत मे कुछ विशिष्ट सगठना के ऊपर आधारित होकर प्रकट होता है और इन सगठना के खत्म होने के साथ हम लोग की चेतना का विलयन हो जाता है। सात्र यहा पूजीवादी समाज मे प्रकट होने वाले अलगावित सबधो की सार्वभौमिकता पर प्रकाश डालते हैं। वे कुछ अस्पष्ट इसीलिए प्रतीत होते हैं, क्योकि पहले तो वे व्यक्ति को जगत म स्थित बतलाते हैं। यह ऐसा जगत है जिसमे कुछेक मानवीय सगठना मे हम लोग का उदय होना अपने-आप म बडा सीमित दष्टिकोण लिये हुए होता है क्योकि इन सगठना मे जहा व्यक्ति एक दूसरे से सबधित होते हैं वही उनकी पारस्परिकता प्रतिफलित होती है। यहा व्यक्ति अपने से बाहर किसी और दूसरी चीज पर निर्भरशील हो जाता है। सात्र की स्थिति का आन्तरिक विरोधाभास यहा स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आता है।

सात्र का वी सब्जेक्ट' सत्ता मीमासा के दष्टिकोण म अनाम एव निर्वैयक्तिक हो गया है क्योकि यहा हम लोग की चेतना की मध्यस्थता वस्तु एव सस्थाओ के द्वारा होती है। यह चेतना उभरती है भीड म लोगो की लम्बी कतार म या बाहर निकलने के सकेतन म। अत हम लोग की चेतना' म व्यक्तिगत अत क्रिया मौजूद नही है और न ही वहा कोइ स्वतत्र अन्वेषण है। सात्र जहा 'हम लोग' के सबध को सामाजिक बतलाते है वही इन सामाजिक रिश्ता की ऐतिहासिक सरचना का कोई महत्त्व देने से इन्कार करते हैं। शायद इसीलिए कि ऐसा करने से व्यक्ति स्वतत्रता एव सामाजिक रिश्ता के सबध मे परिसीमित होकर न रह जाये। जहा पर सात्र का अस सब्जेक्ट' अस्तित्व का एक वास्तविक आयाम है वही वी सब्जेक्ट एक एसा मनोवैज्ञानिक अनुभव है जो कार्य जगत मे अर्थ-तत्र आधारित समाज मे ऐतिहासिक व्यक्ति अनुभव करता है।

यहा पर हम देखते हैं कि इतिहास एव सत्र, प्रतिपक्षी होकर रह जाते हैं। एतिहासिक व्यक्ति समाज म एक विशिष्ट आर्थिक प्रकार का होकर रह जाता है जो शुद्ध रूप स वयक्तिक है और इसस बाहर उसका अन्य कोई विशिष्ट अभिप्राय नहीं है। अन्त म सात्र के सामने दूसरा व्यक्ति एक द्विविधा बनकर ही रह जाता है। व कहते है, या तो हम दूसरे का अतिक्रमण करें और या दूसरे को अपना अतिक्रमण करने की अनुमति द। अत चतनाओ के सबधो का सार सघष म है 'मिटसीन' म नही।'

स्वतन्त्रता का वस्तु जगत के साथ सबध

परिस्थितियो का दूसरा पक्ष वस्तु जगत यानी चीजे है जिन पर या तो हमारा स्वामित्व हो सकता है या जिनसे हम खेल सकते हैं। सद्धान्तिक रूप स सात्र इन वस्तुओ का विनियोजन महत्त्व रखते है यह भाव देते हुए कि आदमी के लिए समकालीन समाज म वस्तुओ स सम्बधित होना स्वाभाविक है।

वस्तुओ की कामना यानी चाह की अवधारणा म आदमी का सम्बन्ध वस्तु म कसे हो सकता है ? सात्र इसकी विवेचना करते हैं। हीगेल की तरह व भी मौलिक स्वतन्त्रता क पक्ष म प्रत्यक्ष नियन्त्रणकारी व्याख्या को नकारते ह। वस्तुओ स सम्बन्धित होकर आदमी अपने होने का तरीका चुनता ह। उसके होने की इच्छा और उसके अस्तित्व का अभाव दोनो ही वस्तुओ के माध्यम स प्रकट होता है। चाह की अवधारणा' यहा पर मार्क्स की जरूरत की अवधारणा स मिलती है जो वस्तु स सम्बन्धित व्यक्ति को जगत म एक स्वतन्त्र परिकल्पना की तरह नियत करती है। सात्र यहा पर चाह की कोई वाह्य सीमा को नही स्वीकारते और न ही कोई वस्तुपरक परिसीमा की बात उठाते है। यह फिर उनका स्वतन्त्रता-सम्बन्धी एक आयामी दृष्टिकोण प्रतिपादित करता है।

सात्र के अनुसार वस्तुओ स सम्बधित चाह क साधारण तरीके है

(१) कुछ करना यानी 'डूइग

(२) कुछ पाना यानी हैविग'

(३) कुछ होना यानी बीइग'

सात्र यहा करने को और पाने को समेकित (इटीग्रेट) करते हैं तथा पाने एव होने मे एक जटिल द्वन्द्वात्मकता की प्रतिस्थापना भी जिससे यह समझ म आता है कि वे व्यक्ति के होने को जो स्वतत्रता पर आधारित है, प्राथमिकता देना चाहते थे, किन्तु सात्र यहा पर फिर भी प्राप्ति यानी उपलब्धि का ही ठोस वर्णन करते है। चूकि आदमी अधिकतर व्यामोह मे फसा हुआ रहता है अत यह प्राप्ति का ही चुनाव करता है तथा अपने आपको पायी हुई चीजो म खो देता है।

यहा पर वस्तुओ के स्वामित्व का जो जड पूजा भाव है उसम अनेक वस्तुओ के साथ सवेदी सबध की व्याख्या अधिक दृष्टिगोचर होती है। जसा कि सात्र ने कहा

"इस तस्वीर की चाह का अर्थ है कि मै इसे खरीदना चाहता हू अर्थात् मै इसको अपने लिए विनियोजित (एप्रोप्रियेट) करना चाहता हू। यहा पर तस्वीर की चाह उसे देखने की या उससे आनन्दित होने की नही है बल्कि उसका वरण एक सम्पत्ति के रूप मे करने की है। वस्तुओ का धारण यानी प्राप्ति व्यामोह उस समय बन जाती है जब हम वस्तु के स्वामित्व म उसके साथ एकात्मीयता की उपलब्धि करते है और अपने आपका यानी अपने 'स्व' का विलयन वस्तु म कर देते है। अपनी चेतना के निषेध से (चेतना जो कि वस्तु नही होना चाहती) पलायन करते हुए हम वस्तु-जगत की गुणवत्ता को अपने स्व म धारणा कर लेते हैं। अत वस्तु हमारा धारण उसी प्रकार करने लगती है जिस प्रकार हम वस्तुओ को धारण करते हैं। वस्तु की प्राप्ति के सबधो का यह विवरण कुछेक समाजो म और विकास की कुछेक अवस्थाओ म और भी अधिक विशिष्ट होकर उभरता है "

हालाकि हम स्वामित्व की परिभाषा उसे एक सामाजिक क्रिया-कलाप कहकर दे सकते हैं और समाज कुछ नियमो के अधीनस्थ हम वस्तुओ को धारण करने का अधिकार प्रदान करता भी है लेकिन इससे विनियोजन के सम्बन्ध का सृजन नही होता। ज्यादा से ज्यादा यह सम्बन्ध कानूनी और नैतिक होकर रह जाता है। निजीकृत सम्पत्ति का जो अत्यधिक महत्व हम बुर्जुवा समाज म पाते हैं उसके बारे मे पुन सात्र कहते हैं,

स्वामित्व को हम पवित्रता की उस सीढी पर रखना

ठोस वस्तु का अपने में और व्यक्ति का अपने लिए में का सहज संबंध वह स्थापित कर सके। वस्तु और व्यक्ति के बीच का यह आन्तरिक बंधन जो कि सहज संबंध का द्योतक है यहा पर मेरी अस्तित्वगत संरचना पर आधारित है। आदमी है इस संबंध में कोई परिवर्तन नहीं ला सकता। वस्तु और व्यक्ति के बीच यह एक ऐसा संबंध है जिसे भविष्य में साम्यवादी समाज भी निजीकृत सम्पत्ति के उन्मूलन के बावजूद विस्थापित नहीं कर सकता।

सार्त्र यहा पर एक ही वाक्य में पूरी बात का विमोचन करते हैं कि सामूहिक संगठन में भी वस्तु और व्यक्ति के बीच का निजीकृत संबंध तथा उनका विनियोजित बन्धन खत्म नहीं हो जायगा। वस्तु के धारण में चीजें मेरी होने की गुणवत्ता को ले लेती है अतः व्यक्ति वस्तुओं में धारित हो जाता। इस प्रकार सार्त्र की वस्तुओं की जो चाह है वह इस या उस वस्तु की चाह नहीं बल्कि एक ऐसी चाह है जिसे यूनीकृत बतलाकर हम कह सकते हैं कि आदमी वस्तु के साथ एकात्म हो जाना चाहता है। वह एक ऐसी इकाई बन जाता है जिसे हम पजेशन पजेस्ड कह सकते हैं। सार्त्र यहा पर साधारण रोजमर्रा के अनुभवों की गहराई मापते हैं जिसमें वस्तु एवं व्यक्ति के बीच दो प्रकार के संबंध स्पष्ट होते हैं, एक तो प्रामाणिक संबंध जिसमें वस्तुएं वस्तु रह जाती हैं और व्यक्ति केवल व्यक्ति तथा दूसरा अप्रमाणित व्यामोही संबंध जिसमें व्यक्ति और वस्तु का अन्तर्वेधन हो जाता है जहा पर वस्तुएं सर्जक की तरह प्रतीत होती हैं और आदमी का निर्माण करने लगती हैं तथा सक्रियता के बदले व्यक्ति चीजों का निष्क्रिय भोक्ता बनकर रह जाता है। अर्थ पर चर्चा करते वक्त इस संबंध में सार्त्र के सामने कुछ और उलझनें आयीं। पैसा वस्तु एवं व्यक्ति के बीच के सम्बन्ध में मध्यस्थता का काम करता है और व्यक्ति की धारण शक्ति का द्योतक है।

जैसा कि सार्त्र ने लिखा पैसा मेरी शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है, किन्तु साथ ही यह मेरी सर्जनात्मक शक्ति का द्योतक है। वस्तु का क्रय एक प्रतीक है जिसका अर्थ होता है उस वस्तु का सृजन। इसी कारण पैसा शक्ति का पर्यायवाची है क्योंकि वास्तव में इसी के द्वारा हम अपनी इच्छित वस्तु

को पा सकते हैं। खासकर, यह मेरी इच्छाओं की प्रभाविताओं का परिचायक है। पैसा वस्तु और व्यक्ति के बीच तकनीकी संबंध का दमन करता है और साथ ही एक जादुई कहानी की इच्छापूर्ति की तरह हमारी चाहनाओं को स्थान्वित करता है।"

जहां सात्र पैसे के उस ख्याल का वर्णन करते हैं जिससे इच्छाओं की प्रभाविता विनियोजित होती है वहीं मार्क्स ने अपनी पुस्तक ज्यूइश क्वश्चन में यह दिखाया है कि पैसा मानवीय इच्छाओं का विपरीत एवं अनगावित करते हुए स्वयं में एक उद्देश्य बन जाता है। किसी और वस्तु को पाने का यह हेतु नहीं बनता। आदमी सिर्फ पैसे के लिए ही पैसा बटोरने लगता है। सात्र की पैसे की जो अवधारणा है उसमें वे समकालीन सामाजिक सम्बन्धों को अवधारित करने में असफल होते हैं और अन्त में पाने (हैविंग) को होने (बीइंग) के साथ पूरी तरह विभ्रान्त करते हैं। जैसे ही वस्तुएं व्यक्ति के होने का संगठन करने लगती हैं, बस ही मानवीय स्वतन्त्रता की अवधारणा की आलोचनात्मक शक्ति फीकी पड़ने लगती है। सात्र ने एक अन्य स्थान पर लिखा है, "जहां तक मेरा सवाल है मैं विनियोजन के एकल संबंध द्वारा ही इन वस्तुओं का सृजन करता हूं और ये वही वस्तुएं हैं जो मैं हूं। यह कलम और सिगार की पाइप यह कुर्सी और यह मेज यह मकान और स्वयं मैं भी। मेरे धारण की समग्रता मेरे अस्तित्व की समग्रता को परावर्तित करती है। जो कुछ भी मेरे पास है मैं वही हूं।'

यहां पर यह वाक्य कि 'जो कुछ भी मेरे पास है मैं वही हूं' वस्तुओं एवं व्यक्तियों के बीच के प्रामाणिक संबंध का खात्मा है। अतः धारण का संबंध यानी कुछ पाने का संबंध व्यक्ति के होने की परिकल्पना है। वह जगत में व्यक्ति के समस्त सम्बन्धों पर प्रकाश डालता है। वास्तव में जगत में कुछ पाने की इच्छा के माध्यम से कुछ होने की इच्छा एक ही है वस्तु का विनियोजन प्रतीकात्मक रूप से जगत का विनियोजन है।' यह वाक्य वास्तव में संग्रही व्यक्ति की काल्पनिक उड़ान है पर सात्र यहां एक ... णिक जीवन प्रणाली की चर्चा करते हुए उपयुक्त कथन ... संबंधित होने का एक यही तरीका नहीं है कि हम वस्तु... जायें। वस्तुओं से हम खेल भी सकते हैं। मसलन की

वस्तु एव व्यक्तियो के बीच उन सम्बन्धो का वणन करते हैं जहा पर वस्तुएं वस्तु रहती हैं और आदमी अपनी आदमियत की मत्ता को अपने ज्ञान की स्वतन्त्र परिकल्पना को बनाये रखता है।

यदि आदमी अपनी स्वतन्त्रता का अर्थ समझता है और इस स्वतन्त्रता का प्रयत्न करने की इच्छा प्रकट करता है चाहे एक तरीके से यह उसके मताप से ही प्रकट क्यो न हो तब भी उसकी यह क्रिया एक खेल मानी जायगी। जहा तक मैं समझती हू सात्र यहा पर खेल का वस्तुओ से मलन की इच्छा को एक लीला की तरह ही समझ रहे हैं। वस्तु जगत है चीजो का ढेर है हम उन्हे भोगते भी है किन्तु चीज हमे नही भोग सकती। वे हम पर इतनी प्रभावी नही हो सकती कि हमारे स्व का विसर्जन हो जाय और हम खुद वस्तुओ के ढेर में महज एक वस्तु बनकर रह जाय। चीजो के भोग को सात्र यहा पर एक आनन्दमय दृष्टिकोण से लेते हैं और उस बुर्जुवा सस्कृति का खडन करते हैं जो चीजो की पकड पर उन्हे अपने पास बनाये रखने में अपने जीवन का सारा सुख चैन खत्म कर देती है। सात्र के अनुसार बुर्जुवा कुछ न कुछ पकडे रखना चाहता है। कभी वस्तु है तो कभी दूसरे व्यक्ति पर शक्ति यहा तक कि ज्ञान भी उसकी सग्रही वत्ति में सग्रह बनकर रह जाता है। वह उसे छोड नही पाता। सात्र कहते हैं कि ऐसा इसी लिए होता है कि व्यामोह में फसी हुई चेतना व्यक्ति के ऊपर वस्तु को प्राथमिकता देने लगती है लेकिन जैसे ही हम खेल का दष्टिकोण अपनाते हैं वही हम अपने व्यक्तित्व की शक्ति को समझ जाते हैं। हम बडे ही हलके फुलके तरीके से वस्तु तथा व्यक्ति के बीच का सबध अनुभव करने लगते है। वस्तु जगत में स्वय का विसर्जन किये बगैर वस्तुए हमारे लिए सृजनात्मक आनन्द का स्रोत हो जाती हैं। खेलने वाला व्यक्ति प्रामाणिक रूप से वस्तुओ के बीच खिलना रह सकता है और उन सबधो का आनन्द ले सकता है जिन्हे यह वस्तु बनाती है।

कला और विज्ञान सात्र के दृष्टिकोण में इसी प्रकार के विनियोजन की प्रक्रिया है। ज्ञानादि इतना स्वतन्त्र विनियोजन खेलने की इतनी सुविधा उसी व्यक्ति को मिल सकती है जो रोजमर्रा की जिन्दगी में उत्पाद एव ` से ग्रसित न हो। अपने-आप को बचाये रखने के लिए पैसा बचाने

की बाध्यता उस पर न हो। यानी कला और विज्ञान एव वस्तुओ स खेल
उसी सामाजिक परिवेश मे सभव है जहा पर अभाव न हो। वस्तुओ से मेलन
के दृष्टिकोण के विषय म जब सात्र बीइग एण्ड नथिंगनेस' म लिखत हैं,
उस समय उनका सामना आज की सामाजिक समस्या से नही हुआ था।
खेल की उनकी अवधारणा उस जगत का वणन करती है जहा पर व्यक्ति
का 'स्व' से अलगाव नही हुआ है और वस्तुओ के लिए जड पूजा का भाव
उस पर हावी नही हुआ है, लेकिन सात्र वस्तुओ से सबधित होने की एक
व्यक्तिगत परिकल्पना रखते हैं जो अपने-आप म प्रामाणिक रूप म स्वतन्त्र
है। यहा पर वे सामाजिक जगत की चर्चा कम करते हैं।

णीय हैं। जहा मार्क्स अर्थ तथा श्रम को प्राथमिकता देते हैं वहीं सार्त्र अभिप्रेत चेतना की बात करते हैं, लेकिन दोनों ही दार्शनिक विश्लेषणात्मक युक्ति को चिंतन का एकमात्र तरीका नहीं मानते और न ही इस प्रकार के तर्क से वास्तव को टटोलने का प्रयास करते हैं। इसके बदले वे वास्तव की सरचना का एक द्वन्द्वात्मक वर्णन देते हैं। अत हम देखते हैं कि मार्क्स एव सार्त्र के मौलिक सिद्धान्तों मे काफी समानता है।

उपर्युक्त समानताओं के होते हुए भी १९४४ के 'मैन्युस्क्रिप्ट्स' तथा 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' मे गहरी प्रतिद्वंद्विता एव विरोध है। सार्त्र की स्वतत्रता की अवधारणा अपने-आप मे काफी व्यक्तिपरक है और वह मार्क्सवादी नैतिक सिद्धान्त के विपरीत जाती है। दूसरी ओर मार्क्स की अलगाव की अवधारणा काफी वस्तुपरक है और इसमे वह अलगाव को वस्तुपरक अनुभव के अधीनस्थ कर देते हैं। १९४०-५० के दौरान मानवीय दृष्टिकोणों के कारण दोनों दार्शनिकों मे जो सादृश्य एव बन्धुता नजर आ रही थी, वे ५० के दशक के बाद दो विरोधी खेमों के रूप मे अपना पतरा बदल खड़े हो गए।

सार्त्र का मार्क्सवाद से सम्बन्ध 'रेजिस्टैंस' के दौरान हुआ। नाजियों का विरोध करते हुए सार्त्र मार्क्सवादियों के सम्पर्क मे आए और बहुधा उन्होंने अपना सार्त्रीय दृष्टिकोण सामने रखा। स्वाधीनता के पश्चात सार्त्र का लेखन साम्यवादी अखबार 'एक्शन' मे प्रकाशित होने लगा। सार्त्र ने यह चेष्टा की कि उनके विचार मार्क्सवाद से मेल खायें। उन्होंने दो बातों पर मुख्यत जोर दिया। एक तो यह कि मार्क्सवाद की तरह अस्तित्ववाद भी मानवीय स्वतत्रता की चाह रखता है और अस्तित्ववादी व्यक्ति अपनी नियति का निर्माण करता है तथा इस बात को स्वीकार भी करता है। दूसरे मार्क्सवाद की तरह अस्तित्ववाद भी विचार के ऊपर कर्म की प्रधानता को स्वीकार करता है तथा विचार की परिकल्पना एव प्रतिबद्धता कर्म के माध्यम से सभव है, इसे वह परिभाषित भी करता है। सार्त्र के दृष्टिकोण में अस्तित्ववाद सताप एव औदास्य का दर्शन नहीं, बल्कि यह एक ऐसा आशावादी दर्शन है जो कर्म के उस मानवीय दर्शन पर जोर देता है, जहां सघर्ष है, चेष्टा है और है, मानवीय सगठन की क्षमता।

अपने 'अकेले' अंधेरे जगत मे घुटकर नही रह जाता, बल्कि एक ऐसे उर्वर सताप (र्वटिल एग्जाइटी) को महसूस करता है, जो अपने-आप मे महत है, अपरिमित है और मानवीय स्थितियो से जूझ पड़ने की 'प्रोमेथियन आस्था' लिए हुए है। अधिकृत फ्रास मे जो क्रातिकारी वातावरण बना, वही वास्तव मे अस्तित्ववाद का जनक रहा है। यह कहना गलत होगा कि *अस्तित्ववादी पेटी-बुर्जुवा-बुद्धिजीवियो का महज एक ख्याल है,* किन्तु १९४४ के अत तक आते-आते साम्यवादी बौद्धिकजन सात्र के लिए आश्चर्यजनक रूप से कडवे आलोचक बन गये। 'रेजिस्टन्स' के दौरान बौद्धिक अभिजनो मे जो एकात्म स्थापित हुआ था उसका अचानक विच्छेद हो गया। सात्र अब पूर्ण रूप से समाजवादियो की आलोचना का विषय बन गए। सात्र का लेखन, उनकी अस्तित्ववादी पत्रिका 'ले तॉं मोदेन', उनकी जीवन शैली, सिमोन द बोउआर के साथ उनके सम्बन्ध, कामू से उनकी दोस्ती और कमोबेश रूप से मार्लो पोन्ति भी, जिनके अन्य कई साम्यवादी मित्र थे कम्युनिस्ट तीरदाजो का निशाना बने।

एक तरफ जहा सात्र 'एक्शन' मे प्रकाशित होते हैं, वही दूसरी तरफ साथ ही साथ उनके लेखन पर तीखे प्रहार भी शुरू हो जाते हैं। साम्यवादियो का यह क्रूर बौद्धिक खेल सात्र को भीतर तक हिला गया। जैसे ही कम्युनिस्टो को पता चलता है कि सात्र ने उनके पक्ष मे कही भी कुछ कहा है, वही वे तुरत आपसी समझौते की बात उनसे उठाते हैं, किन्तु दूसरी ओर अपनी पत्रिका 'एक्शन मे सात्र को वह बागी कहने से भी नही चूकते। इस समय के सात्र के पूरे मानसिक ऊहापोह का चित्रण सिमोन द बोउआर *की आत्मकथा के द्वितीय भाग 'द फोस ऑफ सकमस्टासेज' म मिलता है।* कम्युनिस्टो की चेष्टा १९४४ के दौरान यही रही कि सात्र पार्टी के मेम्बर बन जायें। १९५० मे सात्र स्वय भी समझौते की चेष्टा करते हैं और कुछ हद तक अपनी स्वतत्र स्थिति बनाए रखते हुए भी उनके खेमे मे ठहर पाते हैं।

इस दृष्टिकोण के पीछे कम्युनिस्ट पार्टी का एक राजनीतिक प्रयोजन भी था। सार्त्र के अनुसार, पार्टी का अपना अस्तित्व खतरे मे पड रहा था। कम्युनिस्ट लोग लिबरेशन के बाद वामपथियो के राजनीतिक सगठन मे

त्ववाद का समुक्तीकरण होकर अस्तित्ववादी मार्क्सवाद के अभ्युदय म समय लगा। अत इन राजनीतिक दाव-पेंचो की वजह से कुछ प्रमुख फ्रेंच मार्क्सवादियो को भी सार्त्र के अस्तित्ववाद के खिलाफ १९४५ स १९५० तक एक सयुक्त मोर्चा बनाए रखना पडा। कम्युनिस्टो ने 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' का विशद विवेचन किया तथा यह आलोचना की कि उनका यह लेखन अप्रगतिशील एव आदशवादी है। जहा सार्त्र के 'सर्कल' म यह पूरी चेष्टा की जा रही थी कि वे मार्क्सवाद का और गहराई से पढें तथा दोनो विचारधाराओ का एक नया सश्लेषण प्रस्तुत करें, वही साम्यवादी लेखकीय खेमा अस्तित्ववाद को पूरी तरह उखाड फेंकने के लिए जुट गया।

ल फेब्र ने सार्त्र पर यह आरोप लगाया कि उनका अस्तित्ववाद एक प्रायोगिक दशन (एक्सपेरिमेण्टल फिलासफी) मात्र है। अस्तित्ववाद की जडें उस बुर्जुवा जमीन से निकलीं, जहा पर उच्च वग के मानव मूल्य सड चुके थे। यह एक ऐसी सडाध थी जिसे विष्ठा समझकर त्याग दिया जाना चाहिए था। उसके बदले ल फेब्र के शब्दो मे, कुछेक बुर्जुवा सितारो (टाइनी ग्रुप आफ स्टार्ज) ने अपने-अपने निजी अस्तित्व को लेकर बिला वजह इतना हो-हल्ला मचाया। उस पर भी मजा यह कि फैशनेबल साहित्यिक दार्शनिको का यह 'फैड' भी मौलिक नही था। ल फेब्र यहा सार्त्र के अस्तित्ववाद को विभक्त मनस्क चेतना यानी 'स्कीजाफ्रेनिया' की मनोव्याधि का नाम देते हैं। वे कहते हैं कि इस चेतना का जगत बिलगाव पर आधारित है। यह अमूत सस्कृति की बात करती है। यह जिन्दगी और उसके सच से दूर हवालात मे कैद रहती है। इसके अतिरिक्त यह सामान्य एव उदासीन परिस्थिति पर जीने वाले लोगो का दशन मात्र है। ल फेब्र इस स्थिति से छिपकर अपने-आप को एक सच्चा मार्क्सवादी मानते हैं। वे अपने समकालीन फ्रेंच मार्क्सवादी, जैसे जॉज पोलित्सर, नाबट गटरमान एव पॉल निज़ा जसे कई मार्क्सवादियो का नाम लेते हैं जो सघष मे बडे हुए जिन्होंने व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह किया और जिनके पास जिन्दगी जीने की ऐसी जिद थी, जिसमे वे बौद्धिक परम्परा को उखाड फेंकने के लिए पूरी तरह कटिबद्ध रहे।

सात्र के जादुई करिश्मे की उद्‌बोधक तस्वीर ल फेंब्र इस प्रकार रखते हैं "सात्र तो सारी जटिलताओ को एक सहज जादुई तरीके से सपाट-बयानी मे व्यक्त करने बैठ जाते हैं। यह उनकी 'यूरॉटिक' एव अपरिपक्व बौद्धिकता का परिचायक है। सात्र के दशन की कहानी जादुई है और तत्व मीमासा एक विष्ठा।" (इट इज द मैजिक एण्ड मेटाफिजिक्स ऑफ शिट)

यहा तक कि राजा गरोदि अपनी पुस्तक 'अस्तित्ववाद' मे लिखते हैं कि प्रत्येक वग का एव अपना साहित्य होता है। उच्च बुर्जुवा वर्ग या तो हेनरी मिलर के अश्लील एव भद्दे साहित्य मे रुचि रख सकता है या फिर सात्र के अस्तित्ववाद मे, जो कि अपने आप मे एक बौद्धिक व्यभिचार (इण्टेलक्चुअल फॉनिकेशन) है। गरोदि की पुस्तक का नाम है, 'लिटरेचर ऑफ द ग्रेवयाड।'[1]

कम्युनिस्ट बौद्धिको के और नये आरोप देखिये, उन लोगा के अनुसार सात्र समाज की व्याधि तो समझते हैं, वे ऊब, सताप मोहासक्ति सहार की जरूरत आदि वणनाओ से उसे प्रकट भी करते है, किन्तु इन व्याधियो का अत्यधिक वणन एक प्रकार की आत्मरति है। सत्य की खाज मे सात्र का अन्वेषी लेखन अन्त मे एक बीमार आत्मरतिग्रस्त चेतना को ही प्रस्थापित कर पाता है जो कि कैसा भी क्रातिकारी परिवतन कर सकने के लिए पगु है।

सात्र को बदनाम करन मे कम्युनिस्टो ने कोई भी कसर बाकी नही रखी। उनके लिए गन्दी से गन्दी गालियो का प्रयोग किया गया, ताकि प्रगतिशील युवा चिन्तका के सामने उनकी भद्दी तस्वीर ही उभरे। कारण साफ था। सात्र बौद्धिका मे 'रेजिटेंस' आन्दोलन के सैनानी होते जा रहे थे।

इस लम्बी आलोचना को यहा लिखने का यही उद्देश्य है कि सात्र का प्रस्थान बिन्दु चाहे मार्क्स से हो, किन्तु अन्त मे दानो की विचारधारा ही पडाव पर आकर रुकती है और वह है, आदमी का आदमी से

---

१ ट्रा सलेशन, जे० बनस्टाइन, न्यूयॉर्क से १९४८ मे प्रकाशित।

जहा मार्क्सवाद ने आदमी क बाह्य जगत की गहरी विवेचना की वहा अस्तित्ववादी ने आदमी के आभ्यंतर प्रदेश की पूरी समीक्षा प्रस्तुत करने की चेष्टा की। मार्क्सवाद का उद्देश्य चाहे प्रारम्भ मे आदमी ही रहा हो, लेकिन यह दफ्तरशाही मार्क्सवाद मे आदमी को एक गुमशुदा तलाश बना कर रख देता है। वही सार्त्र अपने लेखन मे बड़े ही नाटकीय तरीके से आदमी के जीवन म होने वाले द्वन्द्वो एव विरोधाभासो का चित्रण करन म पूरी तरह सफल होते हैं। यह चित्रण इतिहास के क्रमिक विकास के साथ इतना सटीक उतर रहा था कि इसे केवल बुर्जुवा लोगो का आध्यात्मिक सकट नही कहा जा सकता था। आम आदमी की चर्चा करने हेतु मार्क्सवाद के लिए यह जरूरी हो रहा था कि वह चेतना के सिद्धात को नए सिरे से रखें। स्तालिन का मार्क्सवाद अब उस तालाब मे आकर ठहर गया, जिसमे नयी क्राति की कोई लहर नही उठ रही थी। जरूरत थी एक क्रातिकारी वर्ग की, जो समाज की दिशा को नई अर्थवत्ता प्रदान कर सके। सचेत और सजग होने के लिए आवाज मे वह बुलन्दी चाहिए थी, जो दफ्तरशाही मार्क्सवाद के पास नदारद थी। अपने ही तर्कों के जाल मे उलझे हुए मार्क्सवादी क्रातिकारी व्यक्ति की बात करने मे सर्वथा असमर्थ थे।

सर्वहारा की चेतना की जो बातें उठ रही थी अस्तित्ववादी उनका अध्ययन कर रहे थे। मुक्ति के दौरान आदमी की चेतना कैसे बदलती है, (ऐतिहासिक विकास का मानवीय चेहरा) इसके बारे मे सार्त्र के पास गहरा अध्ययन होते हुए भी कम्युनिस्ट जगत उनसे हाथ मिलाने को तैयार नही था। सद्धातिक और व्यावहारिक जगत की सरचना की आधारशिला और वैचारिक जगत का जो चिन्तन आदमी करता है सार्त्र उसी की बात कर रहे थे। सार्त्र का कथन था कि आदमी अपना निर्माण करते हुए, वस्तु जगत का निर्माण करता है और इस निर्माण के लिए उसका स्वतत्र होना जरूरी है।

साम्यवादी लेखक लूकाच कहते हैं "यह तीसरा रास्ता हो ही नही सकता या तो द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद है या फिर आदर्शवाद का अमूर्त खेल जो जिन्दगी की ठोस जरूरतो को पूरा नहीं कर सकता। यह बुर्जुवा आदर्शवाद केवल शान्ति के समय पनप सकता है, पर सघर्ष एव क्राति के दौरान

बिल्कुल नही टिक सकता। अत अस्तित्ववाद इतिहास का कूडाघर मात्र बनकर रह गया है।"

सार्त्र इतिहास एव ऐतिहासिक परिवतनों की अनिवायता को सामाजिक तथा व्यक्तिगत दोनो ही स्तरो पर नकारते हैं। अतीत से अलग रहकर आदमी जो चुनाव करता है, वह व्यक्ति से समाज के वास्तविक सबध को नकारता है। सात्र जगत को उन वस्तुपरक-सम्बन्धो से अलग करके देखते हैं, जो मानवीय हैं और मानवीय सम्बन्धो से केवल अलगावित व्यक्तियो के सम्बन्धस्वरूप ही समझते हैं। अत इस प्रकार इस पर आधारित स्वतत्रता का नियतिवाद और यात्रिक ख्याल सही अथ खो देता है। प्रामाणिकता की खोज मे सात्र को, व्यक्तिगत चेतना का, चेतना से इतर की वास्तविकता मे, समाज मे और इतिहास मे विसजन करना पडता है। सामाजिक सम्बन्धो की अन्तर्वैयक्तिकता और समाज की बाह्य सरचना दोनो का ही विवेचन करने मे सात्र असमर्थ रहे हैं। बडे ही विरोधाभासी रूप मे सात्र की निरपेक्ष स्वतत्रता की अवधारणा एक सीमित स्वतत्रता बनकर रह जाती है, क्योकि सार्त्रीय व्यक्ति के पास वह स्वतत्रता उपलब्ध नही थी, जिससे वह दूसरो को प्रभावित कर सके, एक उदार सामाजिक जगत का निर्माण कर सके और इतिहास को स्वतत्र आकार प्रदान कर सके।

किन्तु इसके विपरीत १६४५ में सात्र, लूकाच की आलोचना पर बहुत क्षुब्ध हुए और इसीलिए १६४८ मे उन्होने अपना पहला वक्तव्य 'अस्तित्ववाद ही मानववाद है' प्रस्तुत किया। १६४६ मे उनका दूसरा अभिलेख 'भौतिकवाद एव क्राति' उनकी पत्रिका 'ले तॉ मोदान' में प्रकाशित हुआ। इन अभिलेखो मे सात्र ने न केवल अस्तित्ववाद के ही मानववाद होने का दावा किया, उन्होंने कम्युनिस्ट फ्रेंच पार्टी के विरुद्ध यह प्रचार भी किया कि वह एक अमानवीय भौतिकवाद को प्रश्रय दे रही है और मानव मुक्ति का समाज-दशन अस्तित्ववाद ही हो सकता है। सात्र यह दावा करते हैं कि क्रातिकारी सिद्धात मे व्यक्ति-स्वातन्त्र्य का तत्त्व रहना अत्यधिक जरूरी है। सार्त्र लिखते हैं

"अस्तित्ववाद की मौलिक धारणा यह है कि आदमी कठिन से कठिन

परिस्थिति मे भी, अत्यधिक त्रासद परिस्थितिया के बावजूद स्वतत्र है। आदमी कभी शक्तिहीन नही होता, सिवाय उस समय के, जबकि उसे उस का शक्तिहीन होना समझाया जाता है। आदमी की सबसे बडी जिम्मेदारी यह है कि वह चुनाव करने का निणय ले, क्योकि वह 'वही' बन सकता है, जो वह बनना चाहता है।'

१९४५ के बहुचर्चित वक्तव्य मे सार्त्र ने मार्क्सवाद और कैथोलिक दोनो ही विचारधाराओ पर प्रहार करते हुए कहा कि 'अस्तित्ववाद आदमी के अधिक निकट है। मार्क्सवाद ने उन पर आरोप लगाया कि 'बीइग एण्ड नथिंगनेस' म व्यक्ति के दूसरे व्यक्ति से तथा समाज एव इतिहास से सबध की व्याख्या करने मे सार्त्र असफल रहे हैं। इसके प्रत्युत्तर म सार्त्र अहवाद मे पीछे लौटकर ही प्रश्रय ले पाते हैं क्योंकि सार्त्र के अनुसार, "मैं अपनी व्यक्तिगत स्वतत्रता तभी खतरे म डालूगा, जब उस पार्टी या ग्रुप पर मेरा नियन्त्रण हो।

सार्त्र उन लोगो पर निभर नही रह सके, जिन्हें वे नही जानते थे। 'रेजिस्टन्स' आन्दोलन तथा नाजी कैम्प मे रहने के बाद सार्त्र की व्यक्ति-चेतना परमाणुवीय ही थी और दूसरे के निभरता को स्वतत्रता का ह्रास समझते थे। अत सार्त्र मानव स्थिति (सिचुएशन) की अवधारणा की आलोचना द्वारा कम्युनिस्टो का वजन हलका कर रहे थे। सार्त्रीय अस्तित्ववादी व्यक्ति जगत मे रहते हुए भी एक निम्न बुर्जुवा वृत्ति का शिकार था। वह किसी कामरडी एकात्मकता एव परस्पर निभरता की सहयोगी भावना को समझने म असमथ था। कम्युनिस्ट पार्टी सार्त्र से उनकी बौद्धिक स्वतत्रता को ही छीनना चाह रही थी। हालाकि सार्त्र इस बात पर निरतर जोर दे रहे थे कि विचार सघात के दौरान ही पैदा होते है और हमारा जीवन प्रतिबद्धता की माग करता है।

सार्त्र एक बडी ही जोखिम भरी ढीली रस्सी कम्युनिस्टो के सामने यह कहकर फेंक देते हैं, अपने आप को प्रतिबद्ध करते हुए मैं सारी मानवता को प्रतिबद्ध करता हू। लेकिन प्रतिबद्धता तो नाजियो एव मार्क्सवादियो दोनो की ही थी। अतएव यह प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है कि किस प्रकार की प्रतिबद्धता और किन गुणो पर आधारित प्रतिबद्धता?

कम्युनिस्टो को बात करने का सात्र ने एक और लम्बा मौका दिया। प्रतिबद्धता की बात करते हुए सात्र पुन दोहराते हैं कि "यह एक प्रकार की स्वतत्र प्रतिबद्धता होगी, जिसके द्वारा व्यक्ति स्वय के बोध द्वारा पूरी मानवता का बोध हासिल कर सकेगा।" फिर कहते हैं कि हम प्रागनुभविक (ए प्रायोरी) रूप से यह नही कह सकते कि क्या किया जाना चाहिए। ऐसा वाक्य पाठको को फिर उलझन और दिशा भ्रम मे डाल देता है। जहा कम्युनिस्ट पार्टी अपने श्रमिको का सगठन करने मे व्यस्त थी, जहा क्राति की व्यस्त परिकल्पना की जा रही थी तथा सामाजिक पुर्ननिर्माण का दावा किया जा रहा था, वही सात्र के पास सगठन एव सशक्त राजनीति का अभाव होने की वजह से वे बौद्धिक जगत म एक आहत मानवीय पुकार मात्र बनकर रह गए। ज्या कनापा ने सात्र को 'कॉफी हाउस का क्रातिकारी' (कैफे रिवोल्यूशनरी) जैसा नाम तक दे डाला।

१९४६ मे 'भौतिकवाद एव क्राति' अभिलेख द्वारा सात्र पुन पैतरा बदलते हैं और अब बजाय आत्म रक्षा की नीति के वे आक्रामक हो उठते हैं। पहले वे स्तालिन की दाशनिक त्रुटियो की व्याख्या करते हैं और बाद मे दशन की उन अवधारणाओ की पुन प्रस्थापना करना चाहते हैं, जो उनके स्वय के अस्तित्ववाद की तरह मानवीय समाज का जनक बन सकें। मार्क्सवाद को वे स्तालिन का दशन कहते हैं। सात्र कहते हैं कि दशन के दष्टिकोण स भौतिकवाद आदमी की वैयक्तिकता को छीन लेता है तथा प्रकृति एव मानवीय जगत को एकल वस्तु-जगत मे परिणत करता है। सात्र कहते हैं कि 'हेतु' एव तत्त्व मीमासा की दृष्टि से भौतिकवाद चतन्य से अधिक पदाथ को प्राथमिकता देता है और इतिहास मे आदमी के नियतिवादी दष्टिकोण का समथन करता है। तत्त्व-मीमासीय सिद्धात एव अन्य प्रत्यक्षवादी भौतिक सिद्धातो द्वारा मार्क्सवादी प्रकृति की द्वन्द्वात्मकता का मूठा वणन देते हैं और जड प्रकृति के नियमो को मानवीय वास्तविकता पर आरोपित करते हैं। भौतिकवाद अन्त मे उतना ही रूढिग्रस्त दार्शनिक दष्टिकोण हो जाता है जितना कि एक सरल आदशवाद (नेइव आइडियालिज्म) का अपना निरपेक्ष-सत्य रूढिग्रस्त होता है।

बडे सूक्ष्म तरीके से सात्र स्टालिनिस्ट तक-प्रणाली का दुष्चक्र व्याख्या

मित करते हैं। भौतिकवाद के मानवीय दृष्टिकोण का व्यामोह सार्त्र इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं

'मैं इसे उन लोगों की व्यक्तिपरकता कहूंगा, जो अपनी व्यक्तिपरकता से लज्जित हैं।''

भौतिकवादी वे दार्शनिक हैं जो एक व्यक्ति से यह आशा करते हैं कि वह अपने सोच एवं चिन्तन को ही खत्म कर दे, लेकिन जब व्यक्ति सोच नहीं सकता तथा उसका चिन्तन वस्तु जगत से ही नियंत्रित होता रहता है तब साम्यवादियों की विचारधारा को भी वह अपनी किस सोच और समझ से ग्रहण करेगा ? सार्त्र की यह विचारधारा कम-से-कम उन दफ्तरशाही कम्युनिस्ट बुद्धिजीवियों पर जरूर लागू होती है, जो कम-से-कम सामाजिक क्रांति में व्यक्ति-स्वातंत्र्य की नियामक भूमिका को कोई स्थान नहीं देना चाहते।

भौतिकवाद का अपना आकर्षण सार्त्र के लिए था और इसकी मुक्तिदायी शक्ति को वे नकारते नहीं। सार्त्र कहते हैं।

'मैं जानता हूं कि आदमी की आखिरी मुक्ति सर्वहारा की मुक्ति में निहित है। परिस्थितियों के मुआवजे से बिना भौतिकवादी हुए भी मेरे सामने यह बात स्पष्ट है। मैं यह भी जानता हूं कि हमारा बौद्धिक स्वार्थ, सर्वहारा के साथ बंधा हुआ है, किन्तु क्या इससे मैं अपनी उसी चिंतन शक्ति को नकार दूं, जिसके द्वारा मैं सोच के इस बिन्दु पर पहुंचा हूं ? क्या इसीलिए मैं विरोधाभासों में सोचने लगूं और एक स्वच्छ चेतना को धूमिल कर दूं ? क्या इसीलिए मैं 'अंधी श्रद्धा' को स्वीकारने लगूं ?'

उपर्युक्त विचार को सार्त्र दो दशकों तक संजोये रहे। उनकी नज़र में साम्यवादी दर्शन हास्यास्पद है किन्तु साम्यवादी, राजनीति प्रगतिशील है। हालांकि इन आधारों का स्वीकार नहीं किया जा सकता, किन्तु निष्कर्ष हमारे सामने है 'कम्युनिस्ट पार्टी के साथ अस्तित्ववाद को स्वीकार करे।' सार्त्र कम्युनिस्ट पार्टी के साथ मिलने बिछड़ने की चाह में बड़े लम्बे समय तक एक मानसिक द्वन्द्व के शिकार रहे हैं।

''भौतिकवाद एवं क्रांति के दूसरे अंश में सार्त्र ने व्यक्तिपरकता को प्रमुखता स्वीकार की थी, हम उस पार्टी या व्यक्ति को क्रांतिकारी

करेंगे, जो अपनी क्रियाओं द्वारा क्रांति की तैयारी करता है। व्यक्ति अपनी स्थिति में स्वतंत्र है और कोई भी व्यक्ति क्रांतिकारी हो सकता है। यहां तक कि एंगल्स जैसा पूंजीवादी भी। सार्त्र अब स्थितियों की विशेषता की व्याख्या करने के लिए अधिक प्रस्तुत थे, अन्य मार्क्सवादियों की तरह। समाज दो वर्गों में विभाजित था, पूंजीवान और सर्वहारा। बुर्जुवाओं द्वारा सर्वहारा शोषित हो रहा था और इसके खिलाफ क्रांति की जरूरत थी, किन्तु १९४३ में लिखी गई अपनी स्वतंत्रता की अवधारणा से सार्त्र एक इंच भी पीछे नहीं हटे थे। सार्त्र के कथनानुसार

"अपनी स्थितियों से उठकर उनका पूरा मुआवजा करने में, जब हम सक्षम होते हैं तब इसी स्वतंत्रता का नाम दिया जाता है। कोई भी भौतिकवाद इस क्षमता की व्याख्या नहीं कर सकता।"

सार्त्र यहां पर व्यक्ति की अतिक्रमण की क्षमता पर जोर देते हैं, क्योंकि यही वह क्षमता है, जिसके द्वारा प्रत्येक आदमी अपनी तकदीर से प्रश्न पूछ सकता है और अपनी मानवीय स्थितियों की पूरी व्याख्या चाह सकता है। आदमी जब क्रांति की तैयारी करता है तो उसकी यह अभिप्रेरणा उस सुदूर भविष्य की ओर होती है, जिसकी सम्भावना पर एक स्वतंत्र व्यक्ति की हैसियत से वह सोच सकता है।

सार्त्र जिस मार्क्स की तस्वीर यहां खींचते हैं या जिस मार्क्स के साथ तादात्म्य बोध करते हैं, वह वास्तव में साम्यवादी रूस का मार्क्स नहीं था और न ही यह एंगल्स के द्वारा तैयार 'चौखटे' में फिट होता हुआ मार्क्स था। सार्त्र शायद यहां युवा मार्क्स के उन अभिलेखों से ज्यादा प्रभावित दिखाई पड़ते हैं, जिनमें मार्क्स मानवीय अलगाव की बात एवं उस पर व्यवस्था के विरोध में बात उठाता है

"मार्क्स का तर्क यह है कि अपनी अलगावित परिस्थितियों से मजदूर के छुटकारे में पूरी मानवता की मुक्ति शामिल है, क्योंकि सम्पूर्ण मानव दासता उत्पादन से मजदूर के रिश्ते से जुड़ी हुई है और दासता की सभी किस्में केवल इस सम्बन्ध का संशोधित रूप अर्थात् परिणाम मात्र हैं।"

१९४८ के बाद सार्त्र स्वयं ही इस प्रश्न पर चुप से हो गए थे। कारण यह था कि शीत युद्ध का प्रारंभ हो चुका था और साम्यवाद के खिलाफ

कुछ भी कहना पूंजीवादी खेमे के पक्ष में व्यवहृत हो जाता। राजनीतिक परिस्थितियों की अनिवार्यता को देखते हुए सात्र कहते हैं कि क्रांतिकारी दमन के लिए यह जरूरी हो जाता है कि वह स्वतंत्रता की बहुलता स्वीकार करे तथा यह दिखाए कि कैसे एक व्यक्ति दूसरे के लिए वस्तु होते हुए भी अपनी स्वतंत्रता हासिल कर सकता है। वस्तुपरकता एवं केवल स्वतंत्रता की यह दुहरी विशेषता किसी भी प्रकार के दमन की नहीं, बल्कि स्वतंत्रता पर ही आधारित हो सकती थी। हम किसी स्वतंत्र व्यक्ति को उसी समय तक दमित कर सकते हैं, जब तक वह स्वयं इस दमन को स्वीकार करे।

१९४७ में सात्र की लेखकीय स्थिति बहुत सरल नहीं थी। सात्र के सामने समस्या थी कि उनका लेखन पूंजीपति वर्ग अपने स्वार्थ में प्रयुक्त न कर पाए, किन्तु साथ ही वे जिस सर्वहारा की बात कर रहे थे वह पूरी तरह से साम्यवादियों की गिरफ्त में था। उस सर्वहारा के पास साम्यवादी लेखन तो पहुंच रहा था, क्योंकि साम्यवादियों के पास अपनी एक राजनीतिक व्यवस्था थी, लेकिन दूसरी ओर सात्र के पास केवल उनकी अपनी कलम का जोर था। इस प्रकार, सात्र को दोनों ही खेमों को अपनी बात समझाना जरूरी था, सही रूप से एवं निष्पक्ष रूप से।

सात्र कहते हैं "संक्षेप में हमें लेखकीय स्तर पर यह युद्ध जारी रखना होगा कि हम व्यक्ति स्वतंत्रता एवं सामाजिक क्रांति, दोनों की ही बात एक साथ कर सकें। ऐसा कहा जाता है कि इन दोनों अवधारणाओं का समझौता संभव नहीं। यह हमारा काम है कि अथक रूप से हम यह दिखा सकें कि दूसरी अवधारणा पहली में अंतर्निहित है।"

सात्र जब यह लिख रहे थे, वे उनकी प्रसिद्धि के दिन थे। सात्र, जिन्हें उस समय के यूरोप में सबसे अधिक पढ़ा जा रहा था, जिन पर सबसे अधिक लिखा जा रहा था यानी साहित्य जगत का सबसे चमकता हुआ सितारा सात्र थे, किन्तु, अपनी प्रसिद्धि के साथ सात्र को अपनी सीमा भी समझ में आ रही थी। कैसे इन दो विरोधी खेमों को एकीकृत करें कि उनका पाठक वर्ग सम्मिलित होकर क्रांति एवं परिवर्तन करने में सक्षम हो सके। सात्र जहां बुर्जुवा वर्ग से क्रांति की मांग कर रहे थे, वहीं प्रश्न उठ

रहा था कि कैसी क्राति ? क्या स्तालिन के रूस की जैसी क्राति ? सात्र के पास कौन-सा सगठन है ? कौन से लोग उनके लिए काम करेंगे ? ऐसे कई प्रश्न उठे, जिनका प्रत्युत्तर केवल मौन था। सात्र स्वय मे एक अलगावी बुर्जुवा लेखक की हैसियत से क्रातिकारी नेता की भूमिका को अपनाते जा रहे थे।

कम्युनिस्ट पार्टी को नकारते हुए १९४८ मे सात्र राजनीति के जगत मे प्रवेश करते हैं और 'आर० डी० आर०'[1] के सस्थापक सदस्य बने। शीत-युद्ध के समय जब कि फ्रासीसी सरकार से कम्युनिस्टो का निष्कासन हुआ, उस समय 'आर० डी० आर०' जनतत्र के नाम पर अप्रतिबद्ध मध्यमवर्गीय वामपथियो को एव अधिक से अधिक सख्या मे श्रमिको को सगठित करने मे सफल हुई। 'आर० डी० आर' स्तालिन की विरोधी थी और शाति की सस्थापना करना चाहती थी। 'आर० डी० आर०' का उद्देश्य था कम्युनिस्ट पार्टी मे दफ्तरशाही का अत हो तथा क्रातिकारी सकल्प एव शक्ति की पुन स्थापना हो। यानी 'आर० डी० आर०' शीतयुद्ध मे रत दोनो ही खेमो का विरोधी एक तीसरा रास्ता अपनाना चाह रही थी। सात्र चाहते थे तटस्थता की नीति अपनाई जाए, ताकि फ्रास की राज-नीति यूरोपीय महाशक्तियो की 'सेटेलाइट' मात्र बनकर न रह जाए। अत 'आर० डी० आर०' कुछ समय के लिए कम-से-कम सात्र को कम्युनिस्ट पार्टी के चगुल से बचाकर एक राजनीतिक स्थिति सवारने म सफल होती है। सात्र का उद्देश्य था कि उनके सगठन मे कुछ ऐसे छोटे छोट समूह रहेंगे, जो राजनीति मे अपना निणय स्वय लेंगे। जहा प्रत्यक व्यक्ति को निर्णा-यक क्षमता दी जाएगी।

'आर० डी० आर०' श्रमिको मे नेतत्व की क्षमता का विकास करेगी और इस तरह इतिहास म स्वतत्र व्यक्तियो को स्थान मिलेगा। अपने आप मे यह एक सही मार्क्सवादी सगठन होगा, क्योकि सात्र की सबसे बडी जरूरत थी एव असाम्यवादी वामपथ की स्थापना, जो कम-से कम इतिहास मे अस्तित्ववादी व्यक्ति को पुन स्थापित कर सके। उसके माध्यम से ही

---

१ फ्रास की गणतान्त्रिक क्रातिकारी पार्टी

सात्र की स्वतन्त्रता की अवधारणा भी सही सामाजिक जरूरत की तरह स्थापित हो सके। बिना इतिहास या स्वीकार किए मार्क्स वादी विकासमान जिन जगत की स्थितियों का अध्ययन करने में सर्वथा असमर्थ थे।

कम्युनिस्ट पार्टी की अपनी कमजोरियां एवं विरोधाभास, नेतृत्व का दोहरा मापदण्ड साम्यवाद के नाम पर चढाए गए स्तालिनी मुखौटे पश्चिमी पूजीवादी समाज का बडी अच्छी तरह समझ म आने लगे थे। १९३८ से ३९ का 'मास्को ट्रायल' १९४० तक आते-आते सोवियत लवर कैम्प १९५० म कोरिया का युद्ध तथा अन्त म १९५६ मे सोवियत रूस का हगरी पर आक्रमण इतिहास की ये सारी घटनाए इस बात का बखूबी स्थापित करती जा रही थी कि क्रांति की भावनाओ से विश्वासघात किया गया। या कम से कम सोवियत सघ अकेला ही क्रांति का वाहक नहीं बन सकता। सात्र के सामने दो ही रास्ते थे कम्युनिस्ट पार्टी के सिद्धाता म सुधार और या फिर अपने लेखकीय अलगाव की स्वीकृति। आर० डी० आर० कुछ समय के लिए यानी १९४८ ४९ तक सात्र के लिए, अपने मता को सही रूप से प्रस्तुत करने की दिशा मे एक सार्थक मच बना। सात्र ने मार्क्सवाद एव अस्तित्ववाद का सश्लेषण कर उसे एक जीवित राजनीतिक गतिशीलता प्रदान की। कम-से कम अब वे कह सकते थे कि व्यक्ति एव समाज के पुराने द्वद्व का समाधान हो चुका था।

सात्र पुन लिखते है

'जैसा कि मार्क्स ने कहा था कि आदमी अलगाव की अवस्था म है क्योंकि उसके पास उसकी अपनी नियति, उसकी अपनी जिन्दगी एव उसका कम तथा विचार इनमे से कुछ भी स्वय उसके द्वारा सीधे रूप म निहित नही होते। बुर्जुवा समाज, आदर्शवादिता के नाम पर प्रत्येक मानवीय परियोजना का वैचारिक स्तर पर 'रहस्यमय मिथक' बनाकर रख देता है और सामाजिक स्तर पर प्रत्येक प्रकार के शोषण को जो आदमी का अलगाविन करता है रहस्यमय ही बनाए रखता है।

अत 'आर०डी०आर०' का उद्देश्य मार्क्स के मानवीय स्वरूप को पुन प्रस्थापित करता है। वह आदमी की उस क्षमता को स्वीकार करता है, जो अपना इतिहास स्वय बनाने का दावा रखती हो। अत इतिहास की स्वी-

कृति मिलते ही अस्तित्ववाद और मार्क्सवाद काफी करीब आ जाते हैं। जहा मार्क्सवाद के इतिहास मे व्यक्ति की भूमिका पहचाननी पडती है, वही अन्त मे अस्तित्ववाद उन सही स्थितियो को पा जाता है, जिनमे रहकर व्यक्ति को वरण की स्वतन्त्रता मिल सके। सार्त्र के अनुसार 'आर० डी० आर०' को उस झूठी बुर्जुवाजी व्यवस्था का अन्त करना है, जिसमे रहकर श्रमिक बुर्जुवाजी सिद्धातो का आभ्यतरीकरण कर लेता है।

पूजीवाद की सस्कृति और खुले रूप से पूजीवाद की शिक्षा को नइ क्रातिकारी सस्कृति से जीतना होगा।

किन्तु एक गहरे अवसाद के साथ सार्त्र ने अपने सपनो को टूटते हुए देखा। उनपर कम्युनिस्टो की आलोचना की भारी बौछार पडी। सदस्य सख्या मे वृद्धि बहुत कम हो रही थी और 'आर० डी० आर०' का नेतृत्व तटस्थ रहकर साम्यवाद विरोधी होता जा रहा था। सार्त्र स्वय चुप होते जा रहे थे और अपनी राजनीतिक अनुभवहीनता के कारण अपनी असफलता से दुखी। बडे कडवेपन से सार्त्र ने शिकायत भी की कि पश्चिमी खेमे म कुछ लेखक उन्हें साम्यवाद विरोधी उद्देश्यो मे व्यवहृत करन का प्रयास कर रहे हैं। जहा तक 'आर० डी० आर०' की असफलता का सवाल है, उसका कारण सार्त्र की राजनीतिक अनुभवहीनता या नेतत्व की असफलता नही थी, बल्कि ऐतिहासिक रूप से यदि देखा जाए तो अस्तित्व वादी मार्क्सवाद की राजनीति को पनपने के लिए एक 'ज्यादा तकनीकी समाज' की जरूरत थी। एक ऐसे सवहारा वग की जरूरत थी, जो अपने अलगाव के प्रति सचेत हो और अपने अलगाव को न केवल भौतिक, अपितु अन्य स्तरो पर भी समझ पाये। फ्रास की सामाजिक, आर्थिक एव राजनीतिक स्थिति 'आर० डी० आर०' के अनुकूल नही थी। यह सामाजिक स्थिति १९६० के बाद उभरती है, जब दगाल एक प्राविधिकृत राजनीति का सस्थापन करने मे सफल होते हैं और पारम्परिक पूजीवाद के स्थान पर नए विशाल आर्थिक निगमो की स्थापना होती है।

मौरिस मार्लो पोन्ति के अनुसार, हमारी प्रत्येक क्रिया, द्विअर्थी (एम्बीवैलेन्ट) होती हैं। एक हमारी वैयक्तिक अयवत्ता और दूसरी जागतिक। अपनी-अपनी जगह दोनो ही वास्तविक हैं। त्रासदी का जन्म

उस समय होता है, जब एक ही व्यक्ति, एक ही समय में यह अनुभव करता है कि उसके कम का एक सामाजिक पक्ष है जिसपर दूसरे निर्णय लेंगे तथा एक उसका अपना निजी अनुभव का संसार है, जिसमें की गई क्रियाओं का वह स्वयं मूल्यांकन करेगा, व्यक्ति के जीवन में यह एक द्वन्द्वात्मक संबंध है। सत्य में निहित एक ऐसा विरोधाभास, जिसमें एक ही व्यक्ति दो स्तरों पर दो विभिन्न सन्दर्भों में स्वयं को पाता है।

अतः सार्त्र का 'अकेला व्यक्ति' अपने संताप के साथ अब जगत में, दूसरे व्यक्तियों के साथ संपात के सम्बन्धों में अवस्थित हो जाता है।

मार्लो पोंति के लिए विचारों का 'प्रस्थान बिन्दु' भी यही होता है। वे साम्यवादियों के वैचारिक विरोधाभास को समझते हुए और कम्युनिस्ट पार्टी की सीमा को परिलक्षित करते हुए धीरे धीरे हुसल और हेडेगर के और करीब हो जाते हैं तथा १९५५ में आकर वे यह कहते हैं कि 'सर्वहारा सामाजिक क्रांति करने में सक्षम नहीं।'

१९५० से ६० के दशक में सोवियत समाज के लेबर कैम्प का अस्तित्व १९५२ में जनरल रिगवे के विरोध में प्रदर्शन करते हुए (फ्रेंच कम्युनिस्ट पार्टी) के नेताओं की गिरफ्तारी, १९५३ में हेनरी मार्टिन की घटना, १९५६ में सोवियत रूस का हंगरी पर आक्रमण १९५० में उठा हुआ अल्जीरिया का प्रश्न फ्रांसीसी सरकार की उपनिवेशवादी नीति आदि ये सभी घटनाएं ऐसी थीं, जो मार्क्सवाद एवं अस्तित्ववाद का ही नहीं, बल्कि अस्तित्ववादी खेमे में भी आपसी मतभेद का कारण बना। सार्त्र और कामू का झगड़ा खता के एक लम्बे सिलसिले द्वारा प्रकाश में आया, जिसे पूरा बौद्धिक जगत आश्चर्यचकित होकर पढ़ता-सुनता रहा। केवल यही नहीं, सार्त्र का वैमनस्य क्लाउडी, लफार रोजा गरौदि तथा पियरे नाभिल आदि प्रमुख साम्यवादी विचारकों से भी हुआ। यह समय सार्त्र के लिए मानसिक रूप से पीड़ादायक दार्शनिक रूप से अनिर्णायक एवं राजनीतिक रूप से बड़ी ही उलझी हुई मनःस्थिति का था, किन्तु सार्त्र जहां इस संघर्ष के दौरान अपने लेखन के लिए प्रतिदिन अधिकाधिक रूप से प्रतिबद्ध हुए वहीं मार्लो पोंति की प्रतिबद्धता साम्यवादी लेखन के प्रति घटी। मार्लो पोंति साम्यवादी खेमे से पूरी तरह

समाज की आलोचना करना तथा पूजीवाद के हाथ मे अपनी कमजोरियो को और अधिक शोषित होने के लिए छोड देना ।

सात्र का कम्युनिस्ट पार्टी के प्रति एक बार फिर पुराना मोह जागता है, जब १६५२ म 'पिने' की सरकार अमरीकियो का स्वागत करने के चक्कर म २८ मई को पार्टी के कुछ प्रमुख नेताओ को गिरफ्तार करती है, जिसम डयुक्लॉस का मामला सरकार की स्वेच्छाचारिता का जीता-जागता प्रमाण था। इसके विरोध मे ४ जून को कम्युनिस्ट पार्टी हडताल करती है, किन्तु उसे श्रमिको का पूरा सहयोग नही मिलता। इस घटना मे कुछ बुद्धिवादी श्रमिको म पार्टी के प्रति निष्ठा के अभाव का भी अनुमान लगाते हैं। सात्र इसी अभिकथन के विरोध मे लिखते हैं। उनका प्रभाव दोनो ही खेमो पर पडता है।

सरकार की इस बचकानी हरकत की घोर निन्दा करते हुए प्रताडना मे सार्त्र कम्युनिस्ट विरोधियो को 'चूहा' तक कह डालते हैं।

सात्र पूरे आवेश के साथ यह घोषणा करते हैं, 'बुर्जुवाओ के प्रति मेरी घृणा मेरे साथ ही मरेगी।' क्योकि सात्र की नजर म बुर्जुवा समाज अपनी मानवता के खिलाफ काम रहा था। स्वतन्त्रता, समानता और भाई-चारे का जो मन्त्रोच्चार, बुर्जुवा समाज रात दिन करता रहता था, वही निजी स्वार्थ के यज्ञ की आहुति मे वह जीवित मानवता को हविषा की तरह स्वाहा कर रहा था। सात्र की यह घृणा, इस बात से और भी अधिक उबलती है, क्योकि वे स्वय को भी एक बुर्जुवा होने के नाते अपराधी पा रहे थे। सात्र के लेखन का ही नतीजा था कि सरकार को ड्यूक्लॉस तथा अन्य लेखको को रिहा करना पडा। अपने अभिलेख 'द कम्युनिस्ट एण्ड द पीस मे सात्र पूर्वस्थापित अवधारणाओ का थोडा सशोधन करते हैं। वे लिखते हैं कि

"ऐतिहासिक पूर्णता किसी भी दिए हुए क्षण मे हमारी शक्तियो का नियमन करती है। यह हमारे वास्तविक भविष्य एव कार्यक्षेत्र की सीमा विवेचित करती है। हमारी सभव तथा असभव की धारणाए, वास्तविक एव काल्पनिक धारणाए क्या है और क्या होनी चाहिए का निर्णय करती हुई देश और काल की धारणाओ को अनुकूलित करती है।'

यह अभिलेख सात्र की पत्रिका 'ल तौं मोदेन' म प्रकाशित हुआ था, जिसका अनुवाद अंग्रेजी म अप्रैल १९५३ मे हुआ। वास्तव मे सात्र व्यक्ति की वरण की स्वतत्रता, उसके चुनाव एव उपलब्धियो के बीच, बहुत-सी मध्यस्थताओं को स्वीकार करते हैं। एक मजदूर अपने अलगाव को दूर करने का स्वतत्र निणय ले सकता है, किन्तु जरूरी नही कि उसका उद्देश्य उसके जीवन-काल मे पूरा हो जाए। यहा सात्र, जिए गए निणय की गुणात्मता का स्वीकार करते हैं, पर उसकी प्रभाविता की सीमा भी निर्धारित करते हैं, क्योंकि अपने-आप को बदलने के लिए मजदूर को अपनी सम्पूर्ण वर्गीय स्थिति का बदलना पडेगा। इस प्रकार यहा पर सात्र के लिए यह जरूरी हो जाता है कि वे उन तमाम अन्त सबधो की सरचना को समझें, जो श्रमिक वग का गठन करती है।

सात्र अब पूजीवादी समाज की सरचना को समझना शुरू करते हैं। उनकी समझ मे आता है कि पूजीवादी समाज म बुर्जुवा अधिक सगठित है और एक श्रमिक 'अकेला' निष्कासित भीड का टुकडा तथा दूसरे श्रमिको स केवल बाह्य यांत्रिक रूप से ही जुडा हुआ रहता है। अत श्रमिक के लिए पहले अपनी परमाणुवीय स्थिति से उबरना जरूरी हो जाता है। उसकी सामूहिक परिकल्पना सबसे पहले इस अलगाव स छुटकारा पाना है और जितना वह बुर्जुवा सस्थाओ म रहता है वोट देता है या श्रम के अनुबधो पर हस्ताक्षर करता है उतना ही वह उस सामाजिक व्यवस्था का पोषक बनता है, जो व्यवस्था निजी पूजी पर आधारित है और उसकी पोषक है। अत श्रमिक के लिए पहला काम यह हो जाता है कि अपनी स्वतत्रता प्राप्ति हेतु सबसे पहले वह बुर्जुवा समाज के उन हथियारो को भोथरा कर जो उसे टुकडो म बाटते रहते हैं। इसीलिए सात्र पार्टी की मध्यस्थता स्वीकार करते हैं।

सात्र अब वग विश्लेषण करते हैं। मार्क्सवाद म वर्गीय धारणा एक केन्द्रीय मुद्दा है। मार्क्स पूजीवादी समाज का समूह का सगठन कहते हैं। 'यह वह आन्दोलन है जिसमे विभिन्न तत्वो का समेकित या एकीकृत किया जाता है। यह एक प्रवहमान गतिशील व्यवस्था है। यदि यह व्यवस्था कभी टूटती है तो व्यक्ति वापस अपनी जडता एव सगाव मे

पुन लौट जाता है। अत वग अपना सगठन स्वय करता रहता है। इसके आदोलन अभिप्रेरणा, व्यावहारिकता एव दिशा-बोध के लिए सगठनो की जरूरत पडती है। सार्त्र यहा सामाजिक श्रेणियो मे बड़े नाटकीय तरीके से व्यक्तिपरकता स्थापित करते हैं। वग के सगठित होने म पार्टी की मध्यस्थता की जरूरत पडती है क्योंकि इसी कारण व्यक्ति सगठित होकर अपनी व्यक्तिपरकता एव सजनात्मकता को हासिल कर सकता है। पार्टी के नेतत्व मे ही व्यक्ति श्रमिक मानवता के लिए एक सामूहिक परियोजना म शामिल होता है।"

इसम कोई सन्देह नही कि सवहारा ही क्राति का प्रणेता है, वही मानवीय मूल्यो का वाहक भी है, किन्तु स्वय अपने लिए वह जो मूल्य स्थापित करना चाहता है, वही मूल्य इस दूसरो के लिए भी स्थापित करना पडेगा। लेकिन सार्त्र कम्युनिस्ट पार्टी के नेतत्व म जहा सवहारा की मानवता से एकात्मकता स्थापित करते हैं वही वे पार्टी के किसी भी विशेष क्रिया कलाप की आलोचनाओ के लिए स्थान भी नहीं रहने देते। इससे तो यही सिद्ध होता है कि १९५६ मे रूस न हगरी पर जो आक्रमण किया, वह समूची मानवता के हित मे था। सार्त्र शायद अपने समय से आगे देख रहे थे। उनके अनुसार वग-सरचना म श्रम के स्थान का महत्त्व कम हो जाता है। कल-कारखाने केवल श्रमिको को एक निष्क्रिय सामूहिकता म बदल कर रख देते हैं। यह पजीवाद की विजय है, जो श्रमिको की एकता को रोज रोज तोडती रहती है। अतएव, व्यक्ति की इसके खिलाफ आवाज एक ऐतिहासिक आवाज बन जाती है जिसकी पुकार केवल पार्टी ही सुन सकती है। पहचान से वह अपनी अहवादिता का अतिक्रमण करता है। प्रामाणिक परियोजना के लिए यह जरूरी हो जाना है कि व्यक्तियो म अन्योन्याश्रित भाव रहे। अत ४ जून की हडताल मे श्रमिक भाग नही लेते या पूरा सहयोग नही देते, तो इसमे उनका कोई दोष नहीं। पजीवाद के दमन म टूटता हुआ श्रमिक यह जरूरी नही कि प्रत्येक अवसर पर सक्रिय हिस्सा ले। उसका भाग्य पार्टी के हाथ मे रहता है।

यहा पर एक बडी विचित्र स्थिति हम पाते हैं। जहा स्तालिन ने विकास के लिए पार्टी को सर्वोपरि माना था और व्यक्तियो का दमन किया

रही थी और न ही पथ की बाधाओं को विश्लेषित कर सही नाम दिया जा सकता था। हम सात्र में एक लेखक और एक क्रियाशील व्यक्तित्व का तथा संस्कृति एवं राजनीति दोनों ही आयामों का सम्मिश्रण देखते हैं। सात्र अब अपनी उस परियोजना के लिए प्रतिबद्ध थे, जो सर्वहारा के हित में अधिक प्रामाणिक भी थी। सात्र की इस स्वतन्त्र स्थिति का ही परिणाम था कि फ्रांस की मार्क्सवादी राजनीति में पुनः जान आ जाती है। सबसे प्रमुख बात यह है कि सात्र का अस्तित्ववादी मार्क्सवाद उस समय और भी विकसित होकर सामने आता है, जब नव वामपंथी छात्र सात्र को बौद्धिक नेतृत्व के लिए स्वीकार करना चाहते हैं। उनकी पत्रिका में छात्र आन्दोलन के प्रमुख नेताओं ने लेख लिखे और आन्द्रे गार्ज तथा कावेज, प्रिंस जैसे प्रमुख नेताओं ने उनके साथ काम किया।

यहाँ पर सात्र का मार्क्सवाद पर अस्तित्ववादी रंग चढ़ाना, उनके दो अभिन्न साथियों को काफी खल गया, जिनमें एक थे, अल्बेयर कामू तथा दूसरे रेमण्ड ऐरन।

अस्तित्ववादी मार्क्सवाद की व्याख्या करते हुए, सात्र सबसे पहले अपनी स्वतन्त्रता की मौलिक अवधारणा पर जोर देते हैं। उनकी राजनीतिक गतिविधि इतिहास के सम्मुख व्यक्ति परियोजना को बचाये रखने की पूरी चेष्टा पर आधारित थी। जैसा कि वे लिखते हैं

"मेरा प्रत्येक राजनीतिक प्रयास एक ऐसे समूह का निर्माण करना चाहता है जो मेरी अनुभवहीनता को अर्थ प्रदान कर सके कि मेरी विरोधाभासी स्थिति सही थी यदि मैं कहीं कुछ गलत कहूँ तब मुझे अपनी आशावादिता छोड़ देनी चाहिये कि आदमी किसी भी परिस्थिति में आदमी की तरह ही जी सकता है। यह विचार मेरे मन में 'रेजिस्टेंस' के समय उपजा था कि कम से कम किसी भी यन्त्रणादायक स्थिति में आदमी, आदमी ही रहता है, वह बन्दर या बेर नहीं बन जाता।'

क्रिटीक आफ डायलेक्टिकल रीजन में सात्र स्वयं अपने अतीत से ही प्रश्न पूछते नजर आते हैं। वर्षों से संजोये हुए विचार सात्र को छोड़ने पड़ते हैं।

चतुर्थ अध्याय

'क्रिटीक' का आगमन—समकालीन मार्क्सवाद की सार्त्र दो भागों मे आलोचना करते हैं। जहा 'सच फॉर ए मेथड' मे वे ऐतिहासिक विश्लेषण की नयी प्रणाली को विकसित करना चाहते थे, वही अब उनकी सबसे बडी जरूरत यह थी कि 'मार्क्सवाद में आदमी को कैसे बचाया जाये, क्योंकि सार्त्र के अनुसार, मार्क्सवाद कुछ अमूर्त फार्मूलो मे सीमित होता जा रहा था और उन मध्यस्थताओ की अवज्ञा कर रहा था, जो ठोस क्रियाओ को आर्थिक नियताओं से जोडता है। सार्त्र चाहते थे कि मार्क्सवाद व्यक्ति के मानस का भी विश्लेषण करे और मनोविश्लेषण की पद्धति भी अपने दर्शन म समाहित करे। वे लिखते हैं कि आज के मार्क्सवादी केवल वयस्क लोगों की ही बात करते हैं, जबकि आदमी अपने अलगाव को, अपने बचपन मे ही पारिवारिक रूप से भोगता है। अनुभव के प्रत्येक स्तर की अपनी विशेषता है और विभिन्न समाजो मे, विभिन्न समयो मे वह अलग-अलग तरीके से अपना वजन रखता है। मार्क्सवादी इतिहास के लिए जरूरी हो जाता है कि वह व्यक्ति विशेष की इन अत सरचनाओ का अध्ययन करे और इसी अध्ययन पर अपने सिद्धातो की अधिसरचनाओ (सुपर स्ट्रक्चर्ज) को प्रस्थापित भी करे।

व्यक्ति एव समाज मे मध्यस्थता को स्वीकारते हुए एव उसका विश्लेषण करते हुए सार्त्र सामाजिक इतिहास की प्रगतिगामी प्रतिगामी प्रणाली (प्रोग्रेसिव रिग्रेसिव मेथड) की स्थापना करते हैं। मानवीय परियोजनाओं की जो बात सार्त्र 'बीइग एण्ड नथिगनेस' म उठाते हैं उनके ऐतिहासिक सन्दर्भ को समझने के लिए एक प्रणाली की अवधारणा सामने रखना जरूरी हो जाता है। सार्त्र एक जगह पर लिखते हैं, 'केवल परियोजना ही एसी मध्यस्थता है, जो वस्तुपरकता के दो क्षणों के बीच [illegible] का लेखा-जोखा दे सके मानो यह वे क्षण हैं, जिनमें व्यक्ति [illegible] है। यहा चुनाव करना जरूरी हो जाता है। या तो हम दाखि[illegible]

वाद यानी अध प्रकृति की द्वद्वात्मकता को स्वीकार करें, जो ऐतिहासिक प्रक्रियाओ से ऊपर का नियम बन जाये या फिर हम व्यक्ति को वह क्षमता प्रदान करें, जिससे वह अपने श्रम एव काय-व्यापारो द्वारा परिस्थिति का अतिक्रमण कर सके। केवल यही निणय हमे समग्रता के आदोलन का (जो कि वास्तव पर आधारित है) आधार प्रदान कर सकेगा। अत सात्र व्यक्ति को सामाजिक स्तरीकरण की सापेक्षिक स्वायत्तता या 'रिलेटिव ऑटोनॉमी' से ऊपर रखते हैं और ऐतिहासिक प्रक्रियाओ के दौरान व्यक्ति परियोजनाओ को महत्त्व प्रदान करते हैं। 'सच फॉर ए मैथड' मे सात्र ऐसे आदमी का सवाल उठाते हैं, जो इतिहास तथा समाज को झेलता है, अपनी स्थिति को अन्तकृत करता है और अपने क्रिया कलापो को समग्रता प्रदान करता है। ज्ञान मीमांसा (एपिस्टमॉलॉजी) की दृष्टि से यहा झूठी वस्तु-परकता का त्याग होता है और सत्ता मीमासा (आण्टॉलॉजी) की दष्टि से व्यक्ति की शाति करने की सृजनात्मक क्षमता की रूपरेखा तयार होती है। सार्त्र लिखते हैं

ये सारे विचार जो मार्क्सवादी अन्वेषण हमारे ऐतिहासिक समाज के वणन हेतु विनियोजित करते हैं, वास्तव मे सबसे पहले वे अपनी अस्तित्व वादी सरचना का निर्देश देते हैं। अत जो भी मार्क्सवाद के दिये हुए विचार हैं, जसे शोषण अलगाव, प्रतीकात्मक-भक्ति, जडता इत्यादि, ये हमारे प्रस्थान बिन्दु है और यहा से इतिहास की द्वद्वात्मक व्याख्या शुरू होती है।

द्वद्वात्मक प्रणाली और उसकी सीमा का उल्लेख करते हुए सात्र के लिए सबसे जरूरी दाशनिक प्रश्न था कि वे मार्क्स के ऐतिहासिक सिद्धान्त के बीच द्वद्वात्मक प्रणाली का उपयुक्त स्थान स्थापित करें। सात्र द्वद्वात्मक प्रणाली को हीगेल की तरह वचारिक प्रणाली की द्वद्वात्म-कता के बीच मे भी रखते हैं और मार्क्स के दष्टिकोण से वस्तुजगत की सरचना की द्वद्वात्मकता की तरह भी देखते हैं। हालाकि द्वद्वात्मकता जगत म अवस्थित है, किन्तु यह व्यक्ति ही है, जो अपने अनुभव की समग्रता की प्रक्रिया के दौरान इसका सगठन करता है। सात्र के अनुसार, द्वद्वात्म-

हमेशा पुन निर्मित और विघटित और फिर सस्थापित होती रहती

है और सवत्ति इसका स्वभाव है। यह एक खुला हुआ भविष्य है, जहा कभी कोई परिसमाप्ति नही होती। सात्र यहा पर प्राकृतिक द्वद्वात्मक प्रणाली की बात नही करते, जैसा कि माक्सवादी करते रहे हैं। अपने 'क्रिटीक' मे वे लिखते हैं कि

"जो प्रकृति मे द्वद्वात्मकता की वैज्ञानिक जाच करना चाहते हैं, वे शायद सख्या को गुण मे यानी 'पदाथ मे विरोध नियम लागू होते हैं' इसे प्रमाणित करने की चेष्टा करते हैं, किंतु आदमी प्रकृति के बारे मे जितना जानता है, उस ज्ञान की अपनी सीमा है। इससे बाहर प्रकृति उसके लिए कोई अलग ज्ञान का अस्तित्व नही रखती। जिस हद तक आदमी अपने-आप को जानता है, उससे ज्यादा वह प्रकृति को नही जान सकता है। अत यह मानवीय युक्ति है, जो द्वद्वात्मक है। अपने-आप मे प्रकृति नही। हम यदि प्राकृतिक द्वद्वात्मकता से मानवीय घटनाओ का नियमन करेंगे, तो मनुष्य को बाह्य घटनाओ एव ताक्तो के सामने असहाय बना देंगे, फिर उसकी अपनी सकल्प शक्ति का कोई प्रभाव नही रह जाता। सात्र यहा पर इस बात को नही नकारते कि आदमी प्रकृति मे अवस्थित है और प्रकृति के नियमो के अनुसार चलता है। वे सिफ इतना ही कहना चाहते हैं कि पदाथ जगत की वास्तविकता से मानवीय वास्तविकता भिन्न है। बोधगम्यता के इसके अपने सिद्धात हैं। यहा पर जो लोग प्रकृति की द्वद्वात्मकता को स्थापित करना चाहते हैं वे अपने विचारो द्वारा ही प्राकृतिक नियमो की रूपरेखा तैयार कर रहे हैं, जैसा कि वैज्ञानिक ज्ञान मे होता है, किंतु फिर यही लोग अपने ज्ञान को मानव-वास्तविकता पर यह कहकर आरोपित करना चाहते हैं कि उनका ज्ञान, प्राकृतिक द्वद्वात्मक प्रणाली की उपज है। अतएव ऐसे माक्सवादी अपने विचारो की हठधर्मिता के कारण यहा पर भौतिकवादी न होकर, आदशवादी बन जाते हैं। प्रकृति की द्वद्वात्मकता को स्वीकार करने का अथ यह हुआ कि हम उस व्यक्ति चेतना एव उसके चिंतन को नकार दें, जो कि वास्तव मे क्राति करने के लिए सक्षम है।

द्वद्वात्मक प्रणाली को समझने के लिए हमे पहले समग्र (टोटलिटी) को समझना होगा। वह समग्र, जो अपने म प्रकृति को भी समाहित किए हुए है। सात्र जब मानवीय स्वायत्तता की बात करते हैं, तब इसका अथ यह नही हुआ कि वे वास्तविकता के उस आयाम को नकारते है, जहा प्रकृति मानवीय दश्यो पर तथा मानवता स्वय अपने आप को प्रकृति पर

आरोपित करती हैं। अत प्राकृतिक वास्तविकता उसी हद तक द्वन्द्वात्मक समझी जा सकती है, जिस हद तक यह समग्र के अन्दर अवस्थित हो। उन सभाओं मे, जहा प्रविधि या 'टेक्नॉलॉजी' अपनी प्रारंभिक अवस्था में थी, प्रकृति व मनुष्य के जीवन मे सदैव भिन्नता थी। इसलिए मनुष्य प्रकृति से आतंकित रहता था। आज आदमी और प्रकृति के बीच की दूरी काफी कम हो गयी है। यहा तक कि इसके कारण प्राकृतिक घटनाए किसी हद तक अन्यवस्थित भी होने लगी हैं। जहा तक आदमी के प्रकृति पर अधिकार का सवाल है यानी वह मानवीय क्रियाशीलता, जिसके द्वारा प्रकृति प्रभावित होती है, वहा तक उसे अस्तित्ववादियो द्वारा स्वीकार किया जाता है। वे इस नय द्वन्द्वात्मक सबध को, नये समग्र को शब्द देने की कोशिश करते हैं, किन्तु सार्त्र प्रकृति के उन लौह नियमो को नकारते हैं, जो आदमी की समझ मे बाहर हैं।

अत प्रकृति की द्वन्द्वात्मकता की अवधारणा को खारिज करने के बाद सार्त्र अब मानव विज्ञान मे द्वन्द्वात्मक प्रणाली के तथ्य का पूरी तरह से परीक्षण करना चाहते हैं। वे 'क्रिटीक' मे लिखते हैं

'हमारा उद्देश्य है कि द्वन्द्वात्मक प्रणाली के अन्वेषक मूल्यो का अध्ययन करें, ताकि वे मानवीय विज्ञानो पर नियोजित हो सकें।"

सार्त्र यह देखना चाहते थे कि क्या द्वन्द्वात्मक प्रणाली से हम उन स्थितियो को प्रस्थापित कर सकते हैं जिनसे इतिहास की सभावनाओ को समझा जा सके। वे कहते हैं कि

"हमारे इतिहास म इसके पहले आलोचनात्मक अनुभव को स्थान नहीं दिया जा सकता क्योंकि स्तालिन के आदर्शवाद मे ज्ञान मीमासीय व्यावहारिकता और ज्ञान मीमासा प्रणाली का बड़ा ही स्थिर वर्गीकरण किया जा चुका था।'

सार्त्र अब द्वन्द्वात्मक प्रणाली का मूल्य 'आलोचनात्मक अनुभव' के द्वारा स्थापित करना चाहते हैं। पहले वे इस बात को स्वीकारते हैं कि अस्तित्व का एक आयाम सत्ता मीमासा है जो केवल द्वन्द्वात्मकता के माध्यम मे बोधगम्य हो सकता है। दूसरे, इस बोध यानी ज्ञान की अपनी सीमा है, ज्ञान मीमासा या 'एपिस्टेमोलॉजी'। मार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवाद

की अवधारणा इन प्रश्नों की विवेचना नहीं कर पाती। सार्त्र द्वन्द्वात्मक विवेचना से सामाजिक ऐतिहासिक संरचना को समझने की चेष्टा करते हैं। यदि द्वन्द्वात्मक प्रणाली में कोई तथ्य है, तो वह इस बात में निहित है कि यह मानवीय क्रिया कलापों को समग्र में समन्वित करे। समाज के ऐतिहासिक आन्दोलनों के द्वारा ही व्यक्ति की क्रियाओं को समझा जा सकता है। १९६० में 'क्रिटीक' का लेखन शुरू होता है व्यक्ति क्रियाओं के सन्दर्भ में और खत्म होता है सामाजिक समूह या संयुक्त समष्टीकरण में। सार्त्र व्यष्टि (इंडिविजुअल) और समष्टि (सोसायटी) के संरचनात्मक संबंधों की संभावना के प्रति ज्यादा अभिरुचि रखते थे। क्रिटीक' के द्वितीय खण्ड में वे इतिहास में इन संरचनाओं की सम्भावनाओं का आधार खोजते हैं।

'क्रिटीक' के प्रथम खण्ड में सार्त्र लिखते हैं कि मानवीय क्रियाएँ केवल समष्टीकरण के सन्दर्भ में समझी जा सकती हैं। समष्टीकरण और समष्टि में भेद है। समष्टि एक जड, स्थिर एवं वस्तु-रूप में है। जैसे कि यह मेज और कुर्सी। जबकि समष्टीकरण एक जीवन्त प्रक्रिया है। प्रत्येक कार्य व्यापार, अवस्थाओं का व्यावहारिक जगत है। द्वन्द्वात्मक प्रणाली से हम व्यक्ति क्रियाओं के उन वृहत्तर सामाजिक जगत के संबंधों की अवस्था को पकड़ने की कोशिश करते हैं जहां व्यक्ति अपनी क्रियाओं में अधिकतम रूप से समष्टीकृत होता जाता है। सार्त्र यहां यह दिखाने की चेष्टा करते हैं कि समष्टीकरण को समझने के लिए द्वन्द्वात्मक युक्ति की जरूरत पड़ती है। दूसरी ओर समष्टि के अध्ययन हेतु विश्लेषणात्मक युक्ति (एनालिटिकल रीजन) वस्तुओं को उनके विश्लेषण के दौरान टुकड़ों में बांटती है, अतः उन टुकड़ों में निहित जीवन्त अन संबंधों को नहीं समझ पाती। वह व्यक्ति एवं संस्थाओं की उन घटनाओं को तो समझ लेती है, जो यान्त्रिक हैं, लेकिन इनसे प्राप्त परिणामों को और अधिक विस्तृत द्वन्द्वात्मकता में सम्मिलित नहीं कर पाती। सामाजिक अपने मूल में कभी जड नहीं होती चाहे प्रत्यक्षदर्शी को ये किन्तु प्रतीत हो। किसी दिये हुए क्षण में, ये विलगावित एवं अलग तो हो सकती हैं, लेकिन प्रत्येक क्रिया की अभिप्रेरणा में हुई है, जो सारी गतिशीलता को समष्टि की ओर

सार्त्र ने इसी को समष्टीकरण की संज्ञा दी है। अभिप्रेत क्रियाओं को राज मर्रा की जिन्दगी में द्वन्द्वात्मक प्रणाली के द्वारा ही प्रस्तुत किया जा सकता है। समष्टीकरण की इस अवधारणा से 'बीइग एण्ड नथिगनेस' में वर्णित 'स्थिति' की अवधारणा और अधिक गहरी हो जाती है। अब व्यक्ति की वरण की क्षमता एवं संभावनाओं में से किसी एक का वरण, अपनी बोध गम्यता को बनाये रखने हेतु सामाजिक जगत में ही अन्तर्निहित हो सकता है। चूंकि व्यक्ति परियोजना समष्टीकरण के हेतु है, अतः इसका क्रम इतिहास के साथ जुड़ा हुआ है। यह परियोजनाओं की विविधता को सोपानीकृत करना है ताकि एक वैश्विक एकात्मकता की संभावना प्रस्तुत की जा सके और घटनाओं को एकल ऐतिहासिक दिशा प्रदान की जा सके। मानवीय परिकल्पनाएं अन्ततः उस समष्टीकरण के साथ संबंधित हैं, जिसको हम प्राप्त करना है और जो इतिहास की विश्वव्यापी प्रकृति है। इसीलिए वह समष्टीकरण जो वैश्विकता को प्रोत्साहित करता है, अपने-आप में सार्वभौमिक महत्त्व लिये हुए हैं। सार्त्र के अनुसार, वैश्विक-समष्टि को हम अस्तित्ववादी प्रामाणिकता एवं साम्यवाद द्वारा ही पा सकते हैं, इसीलिए 'क्रिटीक' को मूल्य मीमांसा की परियोजनाओं का आधार कहा गया है।

सार्त्र यहां पर इस बात पर जोर देते हैं कि निरीक्षक को निरीक्षण की क्रिया में अपने-आप का निहित करना पड़ता है। वे व्यक्ति को इतिहास से बाहर नहीं रखते। व्यक्ति इतिहास में रहकर ही प्रत्यक्ष व्यवहार की क्रिया परिधि को अर्थ प्रदान कर सकता है। समष्टीकरण की अवधारणा के साथ सार्त्र अपने ऊपर लगाये गये व्यक्तिवाद के आरोपों का काफी सफलता से खंडन कर पाते हैं। 'क्रिटीक' वह पहला प्रयास था, जिसके द्वारा हम व्यक्ति एवं सामाजिक जगत की मध्यस्थता को समझ सकें।

सार्त्र के अनुसार 'तात्कालिक घटनाओं से हम आलोचनात्मक अनुभव प्राप्त होता है। वह हमारी समष्टि का दूसरों के साथ व्यावहारिक सम्बन्ध स्थापित करने में मदद करता है। इन व्यावहारिक अनेकताओं की विभिन्न संरचनाओं, उनके विरोधाभासों एवं संघर्ष के दौरान साकार व का ऐतिहासिक व्यक्ति स्वरूप ग्रहण करता है।"

सात्र की 'क्रिटीक' का पहला सिद्धात था 'समष्टीकरण की अवधारणा।' इन अवधारणाओ को क्रमानुसार समझने के लिए उन सारे सम्बन्धो को समझना होगा, जो व्यक्ति और प्रकृति म अवस्थित ह। व्यक्ति चीजो से उसी हद तक मध्यस्थ होता है जिस हद तक चीजें व्यक्ति से मध्यस्थ होती हैं। व्यक्ति और वस्तुओ का अपरिभाषित व्यावहारिक जगत, अपनी पहली समष्टि उस समय प्राप्त करता है, जब आदमी की कोई जरूरत पैदा होती है और इस जरूरत को पूरा करने हेतु वह कोई प्रयास करता है।"

'बीइग एण्ड नथिगनस' मे सात्र जिस 'अभाव' (निगेशन) का जिक्र करते हैं, 'क्रिटीक' मे वही 'जरूरत' (नीड) मानवीय क्रिया-कलापो का पहला मौलिक आधार है। पदाथ के निष्क्रिय जगत को मानवीय जरूरत से ही अथवत्ता दी जा सकती है। यानी वस्तु एक जड अवरोधक की तरह सामने है, *जिसका व्यवहार करके हम उसे अथ प्रदान करते हैं।*

मानवीय सम्बन्धो को समझने के लिए भी हमे यह समझना होगा कि कसे अकेला व्यक्ति अपने व्यावहारिक जगत मे अपनी जरूरता का पूरा करने के लिए प्रकृति के साथ क्रियाशील हाता है। सात्र यहा एक बडा जीवन्त उदाहरण देते हैं। वे अपनी खिडकी से बाहर बगीचे की तरफ देखते हैं, जहा पर फूलो की क्यारी मे एक माली काम कर रहा है और बगीचे मे सडक की मरम्मत एक मजदूर कर रहा है। यहा माली तथा मजदूर का अपना अलग-अलग काय क्षेत्र है, किन्तु सात्र अपनी खिडकी से जब इन दोनो को देखते हैं, तब दोनो का काय जगत एकात्मक होकर एक अकेली समष्टि बनती है। यहा जिस तीसर व्यक्ति की चर्चा सात्र करत हैं, उनके अनुसार यह 'तीसरा व्यक्ति' पहल दोनो व्यक्तियो को एक समूह मे परिणत करता है। प्रत्येक श्रमिक यहा पर अपनी क्रिया द्वारा मानवीय रूप ग्रहण करता है। अत प्रत्यक 'दो का सम्बन्ध किसी 'तीसरे' से और फिर इस दूसरे तथा तीसरे का सबध किसी 'और तीसरे' से निर्मित होता है। *समष्टीकरण की यह क्रमश विशद होती हुई प्रक्रिया है।* 'तीसरे की यह अवधारणा व्यक्ति की उस उप-अवधारणा का खडन करती है, जो यह कहती है कि अपने निजीकृत जीवन मे व्यक्ति बिल्कुल अकेला है। सार्त्र

कहते हैं कि "आदमी बिल्कुल अकेला कभी नहीं होता, क्योंकि उसका यह अकेलापन भी एक विशेष प्रकार का सामाजिक सम्बन्ध है। दूसरे उसके निजीकृत विचार एवं भावनाओं में भी सामाजिक जगत का माध्यम रहता है। विषयक रूप से तीसरे का मह[illegible] व्यक्तिगत क्रियाओं का वह पक्ष है, जो सामाजिक मध्यस्थता का काम करता है। इसीलिए सामाजिक अन्तःक्रिया की पारस्परिकता हमेशा 'तीसरी पार्टी' की मध्यस्थ पारस्परिकता लिए हुए होती है।" यहां फिर एक बार सार्त्र व्यक्ति की परमाणवीय चेतना को समाजीकृत करने में सफल होते हैं। अतएव 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' में सार्त्र अपनी बात व्यक्ति से शुरू करते हैं। व्यक्ति की स्वतंत्रता, उसकी स्वायत्तता जनित संभावनाएं और फिर किसी एक संभावना का वरण। 'क्रिटीक' तक आते-आते वरण के कारण उत्पन्न होने वाले सामाजिक सम्बन्ध सार्त्र द्वारा पुनः द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया के जाल में बुन दिए जाते हैं।

वस्तुओं की जरूरत तथा स्वल्पता तथा उनके अपने परिवेश से सम्बन्ध के विषय में लिखते हुए सार्त्र पदार्थ की द्वन्द्वात्मकता से बात प्रारम्भ करते हैं कि कैसे उसे सामाजिक जगत की समष्टि में ढाला जाये तथा उसे स्थापित किया जाये। पदार्थ की दृष्टि से देखा जाए, तो मनुष्य प्रकृति से जो कुछ भी उपलब्ध कर पा रहा है वह उसके लिए पूरा नहीं बैठता। उसकी जरूरतें, उसकी निजी जरूरत बनी रहती हैं। सार्त्र यहीं पर अपनी स्वल्पता की अवधारणा को पेश करते हैं। वस्तुओं की स्वल्पता एक ऐसा क्रूर तथ्य है, जिसे हम नकार नहीं सकते। इसी स्वल्पता के कारण बहुसंख्यक व्यक्तियों का व्यावहारिक जगत पारस्परिक सम्बन्धों का एक निषेधात्मक जगत हो जाता है। व्यक्ति जब किसी वस्तु को भोगता है तब उसका यह उपभोग किसी आंतरिक रूप से प्रत्येक व्यक्ति के विरोध में होता है। उसकी अपनी जरूरत की परितुष्टि अनभिप्रेत रूप से दूसरों के लिए एक धमकी है। हम जिस ज़मीन पर खड़े होते हैं, वह किसी और की जमीन भी हो सकती है जिस मकान में रहते हैं, वही मकान किसी दूसरे के रहने के लिए भी व्यवहृत हो सकता है और जिस रोटी को हम खा रहे हैं, — जाने-अनजाने बहुतों की भूख लिए होती है। समाज अपने खर्चों का

चुनाव स्वय कर लेता है और किसी एक समूह की परितुष्टि का अर्थ है कि उसे किसी दूसरे समूह से खतरा हो। सार्त्र यहा पर स्वल्पता को केवल पदार्थों क उपभोग से ही सम्बन्धित नही करते, बल्कि यह कहने का प्रयास करते ह कि उपभोग द्वन्द्वात्मक रूप से उत्पादन के साथ सम्बन्धित है और उत्पादन हेतु कठिन श्रम की जरूरत पडती है। श्रम का विभाजन समाज मे एक-सा नही। अभाव तभी दूर हो सकता है, जब वस्तुओ का उत्पादन प्रचुर हो और सभी को यह समान रूप से उपलब्ध हो तथा उत्पादन हेतु मानवीय श्रम की जगह यान्त्रिकी का पूरा प्रयोग होने लगा हो। सार्त्र के लिए स्वल्पता प्रत्येक मानवीय सम्बन्ध की जडता का अमूर्त एव मौलिक आधार है। मानवीय घटनाओ के बीच मे जब वस्तु-स्वल्पता अवस्थित होती है, तब वह प्रत्येक प्रकार की हिंसा, शोषण एव अमगल का स्रोत हो जाती है।

इस अभिकथन के कई पक्ष हैं। पहला तो यह कि स्वल्पता के कारण व्यक्ति का क्रिया-कलाप विकसित हो जाता है, क्योकि प्रत्येक व्यक्ति एक दूसर के लिए वस्तुपरक रूप से खतरनाक हो जाता है। आदमी वस्तु को बनाने के लिए जो श्रम करता है, उसका अर्थ खत्म हो जाता है। परिणाम-स्वरूप वह दूसरे व्यक्तियो को भी 'चीज' की तरह प्रयुक्त करने लगता है।

उदाहरणार्थ, एक मशीन को लें, जो श्रमिक के लिए काम करने का एक उपकरण मात्र है। श्रमिक एव मशीन की एक-दूसरे पर परस्पर निर्भरता है, किंतु इस निर्भरता के कारण अन्त मे होता यह है कि व्यक्ति स्वय मशीन की तरह हो जाता है। उसकी चेतना जो दूसरे व्यक्ति पर निर्भर करने हेतु एक पारस्परिकता को प्राप्त कर सकती थी एव अन्य चेतनाओ के साथ मिलकर एक क्रातिकारी सगठित चेतना को जन्म दे सकती थी, उसकी सारी सम्भावनाए मशीन की मध्यस्थता के कारण खत्म हो जाती हैं। सगठन बनने से पहले ही टूट जाता है। स्वल्पता के क्षेत्र का मापदड, सख्यामूलक नही हो सकता, बल्कि यह व्यक्तियो के बीच एव विधेयक पारस्परिकता (पाजिटिव रेसिप्रासिटी) से उपजता है। सार्त्रीय मानवता निषेध मे उभरती है। प्रत्येक 'दूसरा हमारे लिए एक धमकी भरी चुनौती' है, एक बाह्य घटना मात्र। इस बाह्यता के साथ हमारा

सम्बन्ध जड है। इन सारी बातो को सम्बन्धो की जडता के साथ ही मुझे अपने आभ्यांतर जगत म शामिल करना होगा। मानव जीवन का सारा दद सारी पीडा, स्थितियो के इन सारे विरोधाभासों को सार्त्र बडे ही सुन्दर ढग से चित्रित करते हैं, क्योंकि इच्छित वस्तुओ का अभाव है और व्यावहारिक रूप से स्वल्पता के कारण परितुष्टि सभव नही। अत दूसरे म मानव मूल्यो को समझते हुए भी हम अपनी इस समझ को बनाये रख नही पाते। इसीलिए मानवीय श्रम के अथ की व्याख्या करते हुए सार्त्र कहते हैं कि अपनी भौतिक जिन्दगी को बदलने के लिए एव पदाथ पर भौतिकी रूप से क्रियाशील होने के लिए आदमी अपने-आप को अन्ययी भौतिकता अथवा आर्गेनिक फडामेन्टलिज्म मे न्यूनीकृत कर देता है।

और चूकि अब मानवीय सम्बन्धो की सरचना मे पदाथ प्रवेश कर चुके हैं और मानवीय क्रियाए 'जरूरत' से नही उपजती, वे जरूरतो पर आधारित नही, इसलिए य क्रियाए स्वय मनुष्य के द्वारा निर्मित वस्तु-जगत के हाथो बाह्य रूप स सचालित होने लगती हैं। सक्षेप मे, मानवीय क्रिया कलाप के जगत का सचालन उसकी आन्तरिक जरूरत नही करती बल्कि 'बाह्य वस्तु जगत' करने लगता है।

अल्प वस्तुए ही आखीर म व्यक्ति को उन समुदायो मे मरचित करती हैं जिन्हे हम पदार्थ से परिभाषित कर सकते हैं। सार्त्र इन समुदायो को इस प्रकार क्रमिकता (सीरियलिटी) म रखते हैं।

उदाहरणाथ, बस स्टाप पर लोग खडे हैं उनके आपसी सम्बन्धो का पर्याय क्या है? उनका सामूहिक उद्देश्य है, 'बस पर चढना', यानी इसी के माध्यम से वे इस वक्त सगठित हो सकते हैं। किन्तु बाह्य रूप से स्वीकृत होते हुए भी वास्तव म वे सब अकेले हैं। उनकी पारस्परिकता एव अन्योन्यता निषेधक है। वे एक-दूसरे की बिल्कुल चिन्ता नही करते। सम-रूप होते हुए भी यहा प्रत्येक व्यक्ति अपने-आप मे, बिल्कुल अकेला' बस की प्रतीक्षा कर रहा है। रोजमर्रा की जिन्दगी मे इस प्रकार के आचरणो के अनेकानेक अनुभव हमें होते हैं, जहा लोग ऐसे समुदाय बनाते हैं जिनमे मानवीय सन्दभ कम रहता है और सम्बन्धो का यह साख्यिकीय पक्ष अधिक उभरता है।

जैसे ही बस के आने का समय होता है, लोग लाइन में खड़े हो जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को मालूम है कि बस मे सीटें कम हैं, इस कारण आपसी होड एव प्रतियोगिता म, जो कि उनकी निर्जी जरूरत से उपजती है, प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे के लिए महज एक व ु बन जाता है। सबसे घृणित पक्ष तो यह है कि स्वल्पता, मानवीय सम्ब धो को उजागर ही नही होने देती, जहा हर एक व्यक्ति अपने मानवीय गुणो से पहचाना जाए। यहा पर तो हम यह पाते हैं कि अधिकृत रूप से हर व्यक्ति, अपने-आप मे बिल्कुल अकेला है, सबके साथ रहते हुए भी। पारस्परिक सम्बन्धो के बावजूद हम सभी इस अमानवीय पक्ष को झेलते हैं। शारीरिक रूप से निकटतम होते हुए भी, क्रमानुसार सख्या मे प्रत्येक व्यक्ति अपरिमित रूप से एक-दूसरे से अलग है। क्रिया जगत म ऐसे मानवीय अलगावो के बहुत-से उदाहरण हमारे सामने आते हैं। दुकानो मे लोगो का खरीदारी करना, फुटपाथ पर चलना या फिर अखबार पढते हुए दिखाई देना, जनमत गणना आदि घटनाओ के ऐसे ही कई उदाहरण दिए जा सकते हैं।

मानव समाज मे पदाथ तथा मानवीय समष्टीकरण का यह सबसे अधेरा पहलू है। यहा पर सात्र मानव स्वातश्र्य एव उसके अलगाव का बडा ही सुन्दर उदाहरण देते हैं। अलगाव के लिए या महज अपने स्वय के प्रति दूसरा होने के लिए, यह जरूरी हो जाता है कि व्यक्ति वह 'अवयवी' हो, जो द्व द्वात्मक क्रिया कर सके। क्रिया वित वस्तुओ की जरूरत की बाध्यता के कारण तथा इन स्वतत्र क्रिया कलापो की मध्यस्थता की वजह से जो अनिवार्यता प्रकट होती है, वह यह है कि व्यक्ति 'उत्पाद' का रूपातरण करने की प्रक्रिया के दौरान, स्वय इस उत्पाद से रूपा तरित होता जाता है यानी स्वय उससे अलगावित होता जाता है। उसकी स्वतत्र क्रियाए अपनी स्वतत्रता मे उन सभी वस्तुओ को आत्मसात कर लेती हैं, जो उसका दमन करती हैं, जैसे उबाऊ एव थकाने वाले काम, शोषण, बढती हुई कीमतें इत्यादि। जहा व्यक्ति स्वय वस्तु का उत्पादन करता है, वही ये वस्तुए एव प्रत्येक दूसरा व्यक्ति भी उस पर हावी हो जाता है। यानी वह स्वय व्यक्ति के नरक मे परिणत हो जाता है। यह ठीक है कि कायजगत मे श्रमिक के लिए कोई और उपाय भी नही। यहा चुनाव

असम्भव है, लेकिन फिर भी काय जगत से वह सम्पर्कित तो है।

स्थितिग्रस्त श्रमिक का अलगाव सामूहिक सामुदायिक क्रिया एव सकल्प की मध्यस्थता से ही खत्म हो सकता है। व्यक्ति स्वतत्रता कभी खत्म नहीं होती। परिस्थिति को सहन करने एव अलगावित सरचना का आभ्यतरीकरण करने हेतु वह हमेशा स्वतत्र रहता है। स्वतत्रता हर क्षण उसका पीछा करती रहती है, क्योंकि 'वह स्वतत्र है' अपनी इस त्रासद स्थिति को नकारने के लिए भी, इसीलिए उसकी यह स्वतत्रता 'यथास्थिति' के लिए हर समय एक चुनौती लिए होती है। शांति कोई भविष्य की आशा नहीं है। इसे समाज हर क्षण व्यक्ति-चेतना द्वारा जीता रहता है। क्रमागत सरचना, लाइन म खडे हुए व्यक्तियो का नियमन एव निर्धारण ठीक उस प्रकार नही करती, जसा कि एक बिलियड बॉल दूसरा बिलियड बॉल से टकराकर करती है। इसके बदले क्रमागत रेखा एक ऐसी द्वद्वात्मक अनिवार्यता पैदा करती है ताकि व्यक्ति उसको आन्तरीकृत कर ले। पूजीवाद का अन्तिम विरोधाभास स्वय उसके ही क्रिया कलापो के परिधि जगत म उभरता है। जिस यान्त्रिकी के कारण आदमी स्वय से अलगाव मे जा गिरता है, वही यांत्रिकी एव विकसित स्थिति मे मानव-मुक्ति का पगाम लिए हुए होती है। यह प्रगतिशील विकास ही है, जो क्रमश उत्तरोत्तर रूप से श्रम के शोषण से आदमी को मुक्ति दिला पाता है। सात्र के अनुसार मार्क्सवादियो ने द्वद्वात्मक गतिशीलता के उन व्यक्तिगत क्षणो को दबाकर रखा, जिनके माध्यम से वे अपने अलगाव को बखूबी समझ सकते थे। अस्तित्ववादी मार्क्सवाद, हमारे सामने व्यक्ति के इस अलगावित पक्ष पर काफी विवेचनाए रखता है कि कैसे एक व्यक्ति जीवन जीने की प्रक्रिया मे स्वय से अलगावित होता जाता है। सार्त्र अपनी 'क्रिटीक' मे दोनो ही पक्षो का स्पष्टीकरण करते हैं, जैसे व्यक्ति पदार्थ का रूपान्तरण कर सकता है, उसे बदल सकता है, व्यवहृत कर सकता है, वसे ही पदार्थ की भी अपनी एक निजी क्षमता होती है, जिसके द्वारा वह व्यक्ति का अलगाव मे रूपान्तरण कर सकता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या आदमी अपने अलगाव को खत्म कर सकता है? हीगेल ने यह बतलाया था कि जब चेतना की वस्तु से सबधित

होने की चाह के कारण मनुष्य की अपनी एकात्मकता खण्डित होती है, तभी जीवन में अलगाव पैदा होता है। इसके बदले, मार्क्स ने जो अलगाव की संभावना सामने रखी, वह यह थी कि चेतना का अलगाव वस्तुजगत में विमर्श होने से नहीं होता। अलगाव सम्बन्धों की संरचनाओं से तब पैदा होता है जब उत्पादित वस्तुएं अपना मौलिक स्रोत एवं अर्थ खो देती हैं, लेकिन दोनों ही लेखक अलगाव को मानवीय यथार्थ का एक प्राथमिक पक्ष मानते हैं। इसके बदले सार्त्र यहां पर एक और मौलिक अवधारणा सामने रखते हैं। उनके अनुसार, पदार्थ की मध्यस्थता की वजह से अलगाव आदमी के अस्तित्व को अपने में लपेट लेता है, उसकी चेतना को भ्रष्ट करता है, किन्तु किसी न किसी स्तर पर, कभी न कभी आदमी अपने को एवं दूसरे को, आदमी की तरह पहचानता जरूर है। इसीलिए अलगाव के मूल में वस्तु की स्वल्पता निहित है। सार्त्र अलगाव के विभिन्न स्तरों की विवेचना करते हैं। एक अलगाव होता है—वस्तुकरण की प्रक्रिया में। यहां उत्पादित वस्तुएं अपने-आप में काफी महत्वपूर्ण होकर व्यक्ति के सामने अवरोधक रूप में खड़ी हो जाती हैं। कारण यह है कि श्रम की प्रकृति ही ऐसी है कि वह व्यक्ति को उसके स्वयं में अन्य उपकरणों के साथ एक उपकरण की तरह ही प्रयुक्त करता है। अलगाव के साथ एक और घटना भी जुड़ी हुई है। वह है दूसरेपन (अदरनेस) की। व्यावहारिक जगत में वस्तुगत स्वल्पता के कारण, जो अभाव पैदा होता है, उसके कारण आदमी अपने अकेलेपन में बिखर जाता है। ऐसी स्थिति में कमोवेश रूप से वह एक-दूसरे के लिए अजनबीपन का भाव लिए हुए होता है। प्रश्न उठता है कि क्या अलगाव, पदार्थीकरण एवं बदलाव तथा जड़ता आदि सामाजिक बुराइयां दूर नहीं हो सकतीं ? चूंकि सार्त्र एक ऐसे समाज की कल्पना कर रहे थे, जहां पर अभाव न हो। अतः उन्हें इस बात को तो स्वीकार करना ही पड़ा कि अलगाव के ये सारे पर्याय ऐतिहासिक हैं, अपरिवर्तनीय नहीं। वे जितने भी प्रकार के अलगावों का विश्लेषण करते हैं व सभी वस्तु स्वल्पता से सम्बन्धित हैं, इसीलिए जरूरी नहीं कि प्रत्येक मानवीय स्थिति पर वे लागू हों। सार्त्र स्वयं १९५९ में अपने इस कथन को इस प्रकार परिवर्तित करते हैं

"विकसित पूंजीवाद मे (आय की यह समानता होते हुए भी) अधिकांश श्रमिकों की प्रारंभिक जरूरतें तो पूरी होती ही हैं।'

यदि सत्तामूलक रूप से एक स्वतंत्र व्यक्ति और स्वतंत्र जड प्रकृति का सम्बन्ध बदले, तो सारा समाज, इसका स्वरूप, सब कुछ बदल जाता है। सच तो यही है कि द्वन्द्वात्मक तर्कीय प्रणाली भविष्य मे किसी भी प्रश्न का उत्तर नही दे सकती, क्योकि इस प्रणाली की बोधगम्यता ऐतिहासिक सरचना पर निर्भर होती है।

समुदाय का विकास—सात्र सांख्यिकीय क्रमागत या 'सीरियलिटी' को ज्यादा पारस्परिक एवं साथ ही सहधर्मी सम्प्रदाय से भिन्न रखते हैं। जहां महज श्रमिक सम्बन्धो मे पदार्थीय जडता होती है, वही समुदाय मे स्वतंत्र परियोजना का अधिक सामथ्य होता है। समुदाय की रचना और उसकी यह यान्त्रिकी, एकता के बदले अवयवी एकात्मकता लिए होती है। आदमी के लिए श्रमिक जडता मे रहना बडा दुष्कर है, इसीलिए वह और अधिक सामुदायिक एकता की सरचना करने हेतु प्रेरित होता है। साथ ही, वास्तविक समुदाय के सगठन के लिए बाहरी खतरे का होना भी जरूरी है। जो समुदाय बिना किसी खतरे का सामना किए क्रमागत रूप से स्वत सम्बन्धित होते हैं, उन समुदायो मे क्रांतिकारी भूमिका का अभाव होता है। श्रमिकता मे एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपने से भिन्न 'दूसरे' की तरह देखता है किन्तु खतरे के समय अचानक पूरा समुदाय कहीं पर एकात्म हो जाता है। इसका प्रत्येक सदस्य, हर 'दूसरे' को भी 'अपनी' ही तरह देखने लगता है। 'दूसरे' के लिए उसकी दृष्टि ही बदल जाती है। वह बहुत 'अपना' हो जाता है। हम यहा पर एक पारस्परिक भवित भाव पाते हैं। ऐसा समुदाय काय जगत की निरपेक्ष पारस्परिकता की वजह से बनता है। क्रिया कलापो का यह ऐसा जगत है, जहा प्रत्येक व्यक्ति दूसरे की परियोजना भी अपनी परियोजना की तरह करता है। यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति मे प्रतिक्रिया होती है, किन्तु अपनी अपनी प्रतिक्रिया के बदले एक 'सह-अस्तित्व' का अवतरण हो जाता है। साथ ही निर्वैयक्तिकता, विलगाव, परमाणवीय अवस्था आदि का विकास 'क्रमबद्धता' के कारण होता है, जहा व्यक्ति केवल बाहरी रूप से जुडा हुआ होता है। समुदाय, एकरूप समुदाय

(ग्रुप इन फ्यूजन) ज्यादा गहन व्यक्तिगत सम्बन्धों से गठित होता है। ऐसे समुदायों से आदमी अपनी खोई हुई मानवता को दमित एवं कुंठित स्वतन्त्रता को पुन हासिल करता है। इसमे जहा आदमी खुद ही उन सबधो की सरचना करता है, जिनमे उसका आत्म-स्वरूप शीशे जैसा पारदर्शी हो जाता है, वही इन समुदायो मे प्रत्येक दूसरे व्यक्ति को भी अपनी स्वतन्त्रता पाने का अधिकार होता है।

"सात्र ने यह भी कहा कि केवल एकरूप सामुदायिक सरचना मे ही स्वतन्त्रता को पुन हासिल करना सम्भव होता है।

"अन्तिम त्रासद स्थिति ही एक विस्फोटक क्रांति चेतना का निर्माण करती है।"

'बीइग एण्ड नथिंगनेस' मे सात्र हम लोग (वी सब्जेक्ट) की सत्ता-मीमासा करते हुए, जिस दुविधा का अनुभव करते हैं, वह यहा नही है। बुर्जुवा व्यक्तिवाद के बदले अब आदमी की जो तस्वीर वे खींचते हैं, वह ऐसे आदमी की है जो एक सामुदायिक क्रिया (कॉमन एक्ट) द्वारा अपनी स्वतन्त्रता को उस व्यवस्था के खिलाफ विनियोजित करता है, जो उसे निरतर टुकडो मे तोडती हुई परमाणवीय टुकडो मे परिवर्तित करती है। रीनसा के बाद केवल निजीकृत चेतना की स्वायत्तता की जो बात लॉक एव बगसा जसे दार्शनिको ने उठायी थी, सात्र पूरी तरह उसका विरोध करते हैं। अत सात्र पर यह आरोप कि वह देकार्ते की निजीकृत चेतना (कॉजिटो) के घेरे से बाहर नही निकल पाये, यहा लागू नही होती। 'क्रिटीक' मे सात्र पूरी तरह उस प्रभाव से मुक्त होकर एक 'अस्तित्व-वादी मार्क्सिस्ट' की तरह सामने आते हैं।

व अब भी क्रियाकलापो से समुदाय को परिभाषित करते हैं और इसका कारण स्पष्ट भी है। व्यक्ति स्वतन्त्रता एव उससे जनित क्रिया कलापो के अलावा किन्ही और सन्दर्भों का उल्लेख करने का अर्थ होता है, किसी परामानवीय अस्तित्व की वास्तविकता को स्वीकारना, जबकि सार्त्र स्वायत्तता को व्यक्ति से बाहर बिल्कुल नहीं रखना चाहते। जहां वे कहते हैं कि नैसर्गिक अधिकार व्यक्ति मे निहित है वही 'क्रिटीक' मे उनका कहना है कि अपने मानवीय अधिकारो को प्रत्येक व्यक्ति एक स्वतन्त्र

हैसियत से जनवादी सामुदायिक सरचना की मध्यस्थता द्वारा ही पा सकता है।

पारम्परिक दृष्टिकोण मे तो हम केवल निजीकृत चेतना की यह अवधारणा पाते हैं कि भीड म लाइन म खडा हुआ आदमी दूसरे व्यक्ति की स्वतत्रता को नही स्वीकार कर पाता, क्योकि यहा प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के प्रति उदासीन, विरोधात्मक और बिलगाव की स्थिति म है। 'क्रिटीक' की स्वतत्रता की अवधारणा यह चाहती है कि प्रत्येक व्यक्ति की साधारण परियोजना मे स्वतत्रता को मूत रूप मिले। एकरूप समुदाय स एक वस्तुगत सामाजिक सरचना हो जाती है और जगत का गठन एक स्वतत्र मानवीय जगत के रूप मे उभरता है। सात्र यहा व्यक्ति एव समाज के द्वैत को खत्म करते हैं। उनका अस्तित्ववादी मार्क्सवाद, आदमी की व्यक्तिगत स्वतत्रता को स्वीकार करता है। यह सामाजिक जगत ही है, जो व्यक्ति को स्वतत्रता की सही गारटी दे सकता है। सात्र ऐलान करते हैं कि मानवता का अभ्युदय समुदाय मे होता है। इस स्वतत्रता का भौतिक आधार है श्रम का यात्रिकीकरण और प्रकृति से प्रविधि की एकात्मकता। बिना इसके एकरूप समुदाय की सरचना सतही एव अस्थिर होगा। सक्षेप मे, सात्र का यह जनवादी एकरूप समुदाय ही वास्तविक और सही क्रांतिकारी सगठन होगा लेनिन पार्टी का अभिजन समुदाय नही।

इस समुदाय का यह स्वरूप होगा कि
यह जनमत पर आधारित होगा।
इसम खुले वाद विवाद की सभावना होगी।
इसमे आत्माभिव्यक्ति के लिए पूरी स्वतत्रता होगी।
एव दूसरा के प्रति सहिष्णुता भी होगी।

बिना बाध्यकारी नियमन के यह स्वतत्रता समुदाय के सदस्यो को प्राप्त होगी। सार्त्र यहा पर बुर्जुवाजी अमूत मानवता की बात नही करत, जहा पर प्रत्येक घटना अनासक्त रूप से विश्लेषित की जाती है। सात्र यहा पर केवल व्यक्ति के ठोस अस्तित्व की बात करते हैं, जो पूरी तरह से सामुदायिक अनुभव म सलग्न और अभियोजित है। वह व्यक्ति की बौद्धिकता की बात नही उठाते। उनके अनुसार बुद्धि अस्तित्व का एक

आयाम मात्र है, समूचा अस्तित्व नही।

अब प्रश्न यह उठता है कि इस समुदाय का स्तर क्या होगा ? सार्त्र यहा पर अपने पूर्ववर्ती लेखको के अनुसार, समुदाय को व्यक्ति की क्रिया से भिन्न अस्तित्व प्रदान करने के लिए पूरी तरह सहमत हैं। सामुदायिक एकता अपने सदस्यो के सामान्य क्रिया कलापो का अतिक्रमण नही करती। यदि करती है, तो इसकी अपनी एक स्वतन्त्र स्थिति होती है, जो कि बाद मे सदस्य व्यक्तियो की स्वतन्त्रता का दमन करने से बाज नही आती। अत सार्त्र यहा पर एक ऐसे खुले समुदाय की बात करते हैं, जो सारी सम्भावनाओ को लिए हुए होता है और जिसके सदस्य निरतर अपनी क्रियाओ का पुनर्गठन एव पुन समष्टीकरण करते रहते हैं। अधिक-से-अधिक समुदाय वह स्थिति है, जिसमे व्यक्ति अपनी सत्तामूलक नियति को प्राप्त करता है किन्तु उससे मानवीय स्वतन्त्रता के सदर्भ मे समुदाय का अपना महत्व खत्म नही हो जाता, क्योकि समुदाय के लोगो के क्रिया-कलापो के समष्टीकरण का यह एक अनिवार्य हिस्सा बन जाता है। सार्त्र यहा पर किसी भी अधिसस्थान (सुपर-स्ट्रक्चर) की बात नही उठाते न ही व्यक्ति के विरोध मे समाज की कोई अलग तस्वीर रखना चाहते हैं। समुदाय का नियमन आन्तरिक रूप से होता है, जबकि श्रमिक का नियमन बाह्य रूप से होता है। समुदाय के जितने भी सदस्य हैं, वहा पर प्रत्येक दो के बीच का सम्बन्ध उसी के भीतर अवस्थित 'तीसरे' का दृष्टिपात ही करता है। व्यक्ति अपने समुदाय की सदस्यता का आतरीकरण करता है। एकरूप समुदाय का मौलिक सम्बन्ध यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने-आप मे, अपने किन्ही दो सदस्यो के लिए 'तीसरे' की भूमिका निभाता है। सार्त्र यहा अपनी को समग्र (टोटैलिटी) मे जोडते हैं। यह एक ऐसी समग्रता है, जिसमे निहित गत्यात्मकता उसे क्रमश समग्र से समग्रतर की ओर विकसित करती रहती है। सार्त्र यहा पर एक व्यक्ति मानव से दूसरे व्यक्ति मानव को जोडते हैं। वे हीगेलियन सामाजिक पूर्णता के सदर्भ मे व्यक्ति को अन्त के रूप मे नही रखते।

क्रमागत समष्टि की जिस गत्यात्मक धारणा का सार्त्र ... करते हैं, वह समाजशास्त्रियो के सामाजिक सगठन की अवधारणा

मिलती-जुलती है। दुर्खीम के अनुसार, यूरोपीय समाज यान्त्रिकता के अवयवी रूप की ओर क्रमश विकसित होता हुआ दिखाई देता है तथा वेबर के अनुसार, विकास के इस दौरान इतिहास मे हम दफ्तरशाही की प्रवत्ति की ओर अधिक झुकाव पाते हैं, जिसके कारण यूरोप का भविष्य अधकारमय लगता है। सात्र का सिद्धात हमे इसीलिए अधिक क्रांतिकारी लगता है, क्योंकि 'क्रमिक्ता' का जो विरोध वे करते हैं, उससे आपसी मानव पहचान की जरूरत पैदा होती है। सामाजिक सम्बधो मे औद्योगिक समाज, चाहे वह रूस का हो या फिर पूजीवादी अमेरिका का, दफ्तरशाही प्रवृत्ति का ही परिचायक होता जा रहा है। पश्चिमी यूरोप का मार्क्सवादी आदोलन कम-से-कम सामाजिक सम्बधो पर प्रश्न तो उठाता है।

समुदाय मे व्यक्ति का अलगाव—सात्र कहते हैं,"सत्ता के सोपानीकरण मे व्यक्तित्व का ह्रास होता जाता है। केद्रीभूत सत्ता अपने क्रमिक विकास के दौरान, व्यक्तिगत मानव पर जो उसकी सबसे पहली सीढी की नीव है, आघात करती है, उसकी स्वतन्त्रता का दमन करती है।' व्यक्तिगत परियोजना की इच्छा आकाक्षाओ को निजीकृत कहकर वह जीवन मे 'सहज सृजनात्मकता' को कुठित करती है। सात्र एक प्रौद्योगिकी समाज मे कम-से-कम उस विकसित रूपातर की कल्पना तो करते हैं, जो कि व्यक्ति को बचाये रखने मे समर्थ होगा। यही कारण है कि १९६० मे जब नव वामपथी श्रमिक छात्र, व्यवस्था के विरुद्ध आदोलन की बात उठाते हैं, तो सात्र का मानववाद इस आदोलन की नीव पर पत्थर बन चुका था।

सात्र अपनी अवधारणा का कमजोर पक्ष जानते थे। वे यह भली भाति जानते थे कि उनका क्रियाशील समुदाय जड क्रमिकता के सागर मे महज एक मानवीय टापू की तरह रह जाएगा। उनके सिद्धात की सबसे बडी चुनौती होगी, आदमी का यान्त्रिकी मे विलयन। आदमी के स्वभाव के इस अधेरे पक्ष से वे भली भाति परिचित थे इसीलिए वे कहते हैं

"ज्यो ज्यो दलगत सदस्य अपनी स्वतन्त्रता के प्रति अधिक सजग होते जाएगे, त्यो-त्यो 'क्रमिकता' के विरुद्ध किसी न किसी प्रकार की प्रतिबद्धता की आवश्यकता महसूस होगी।"

समुदाय को बनाए रखने की तथा उसे और अधिक विकसित करने

की पूरी क्षमता उसके सदस्यों मे है। उन्हे अपनी स्वतत्रता को बनाए रखने हेतु समुदाय को सत्ता प्रदान करनी ही होगी। उनके समुदाय को खतरा न केवल बाह्य जडता से है, वरन् अपने सदस्यों से भी है क्योकि व्यक्ति यदि अपना समुदाय बनाने के लिए स्वतत्र है, तो इसे तोडने के लिए भी वह स्वतत्र है और यही कारण है कि समुदाय के अपने स्वार्थ, व्यक्ति-स्वार्थ से भिन्न हो जाते हैं। अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिए सदस्यों को विघटनकारी होने से रोकने के लिए उसे आतक का सहारा लेना पडता है।

अन्तिम विश्लेषण मे सात्र लिखते है कि 'हिंसा का आतक' 'क्रमिक यान्त्रिकता' के खिलाफ पैदा होता है। स्वतत्रता इसका कारण नही। समुदाय का अन्तिम खतरा है, आसपास की स्वल्पता पर आधारित परिवेश का। स्वल्पता एक ऐतिहासिक परिवेश मात्र है फिर भी समुदाय का क्रमश यान्त्रिक होना एक अपरिहार्य तथ्य की तरह सामने आता है। समुदाय की विशिष्ट कार्य शैलियो के कारण समुदाय मे विशिष्ट जीवन शैली तथा हैसियत आदि को प्रश्रय मिलना लाजिमी है। तब क्या वही सगठित समुदाय व्यक्ति के खिलाफ नही हो जाता? क्या यहा पर आदमी फिर ठगा नही जाता? क्या व्यक्ति का अपना ही कर्मजगत, उसकी स्वय की अपनी अभिप्रेरणा के विपरीत सगठित नही हो जाता? हम यहा पाते हैं कि समुदाय रूपान्तरित होकर बहुधा एक व्यवस्था बन जाता है। यहा निम्नाकित प्रक्रिया घटती है

पहले समुदाय के सामूहिक उद्देश्य के हित मे व्यक्ति को अपनी इच्छाओ एव उन पर आधारित व्यक्तिगत कार्यव्यापारो को सकुचित करना पडता है। 'सामूहिक उद्देश्य' यहा पर क्रमश अमूर्त अनिवार्यता का रूप ग्रहण करने लगता है। व्यक्तियो को अपनी-अपनी भूमिकाओ मे तादात्म्य खोजना पडता है। इसके कारण अत क्रिया मे बन्धाव और बाह्य पारस्परिकता का जन्म होता है।

दूसरे समुदाय को प्रभुता की जरूरत इसलिए होती है
देखा जा सके कि प्रत्येक सदस्य अपना-अपना कार्य ठीक तरह से
किन्तु सस्था की यह क्रमिक गुणवत्ता ही आदमी को दायित्व

अधिकाधिक परिचायक होने लगती है। श्रम विभाजन के कारण आदमी शक्तिहीन होने लगता है। उसकी निर्णायक क्षमता घटती है और इन सबके पहले सोपानीकरण पर आधारित केन्द्रीय सत्ता का विकास होता है। अधिनायक इसीलिए समुदाय की एकात्मकता बनाए रख पाता है क्योंकि उसमें अब जनतंत्र के बदले अल्पतंत्र का महत्व अधिक हो जाता है। सत्ताधारी अभिजनों के लिए सार्त्र किसी सत्ता मीमांसा की जरूरत नहीं समझते। उनके अनुसार, ज्यों ही हम अभिजनों की अनिवार्यता सिद्ध करते हैं, त्यों ही पारस्परिकता का अलगाव शुरू हो जाता है।

व्यक्ति-समग्रता से व्यक्ति का अलगाव, जागतिक सह-अस्तित्व का सबसे घिनौना पहलू है। यही कारण है कि ऐसे नियंत्रित समुदायों से व्यक्ति को अलग छिटकना बड़ा आसान होता है। विघटन का भय ही है, जो समुदाय को इस बात के लिए बाध्य करता है कि वह कुछ लोगों को दिन प्रतिदिन और अधिक जड़ता प्रदान करता जाए।

वृहत संगठन, जैसे सामाजिक वर्ग को, राज्य को, यहां तक कि पूरे मानव समाज को रोजमर्रा के इन्हीं छोटे छोटे समुदायों से समझा जा सकता है। सार्त्र यहां पर मानवीय अंत:क्रिया पर प्रकाश डालने के लिए इन छोटे छोटे समुदायों का संरचनात्मक विश्लेषण करते हैं। सामूहिकता को वे छोटे छोटे समुदाय एवं समेकित क्रमिकता (इंटीग्रेटिड सीरियेलिटी) कहते हैं। सामूहिकता की इकाई को वे कम परिभाषित करते हैं। उनके अनुसार सामाजिक वर्ग और राज्य समाज की प्राथमिक संरचना नहीं है। 'द कम्युनिस्ट एण्ड पीस' में वे जिस सामाजिक वर्ग की धारणा हमारे सामने रखते हैं वह सतही सम्बन्धों पर आधारित छोटी छोटी इकाइयों का गुच्छा मात्र है। इन वर्गों में राजनीतिक चेतना का अभाव होता है, क्योंकि वे केवल संख्या, भीड़, वृहत आकार धारण करके ही निर्णायक क्षमता नहीं उत्पन्न कर सकते। इस तरह तो हम पूरे शहर को क्रियारत एकरूप समुदाय (ग्रुप इन फ्यूजन) की संज्ञा दे सकते हैं। यह प्रश्न सामुदायिक गुणवत्ता का भी है। सर्वहारा वर्ग, श्रमिक समुदाय में प्रक्रियारत पदार्थ यानी उत्पादन के पर्याय और अन्य श्रमिकों के क्रिया कलाप के जगत, इन दोनों के द्वारा ही परिभाषित होता है। जब हम दोनों

समष्टीकरणो को साथ रखते हैं, तब पाते हैं कि इस वग के लिए इतिहास का प्रत्यक्ष अभिकर्ता (एजेण्ट) होने की सम्भावना विशाल है। अत सामाजिक जगत मे वग की भूमिका इतनी जल्दी स्वीकृत नही हो सकती, इसका निणय काफी सोच विचार कर पूरे विश्लेपण के बाद ही किया जा सकता है। हमे अन्य ठोस और वास्तविक निर्णायक तत्त्वो को विशिष्ट 'श्रमिकताओ' एव समुदायो के सन्दभों म समझना होगा। इसीलिए, किसी भी समय की राजनीतिक स्थिति को समझने के लिए हम श्रमिक वग की तात्कालिक सरचना एव चेतना को समझना जरूरी हो जाता है। इनकी ऐतिहासिक भूमिका पूर्वानुमानित रूप से नही स्वीकारी जा सकती। हम इस अनुभव निरपेक्ष मिथक स उवरना होगा कि सवहारा प्रत्येक समय विस्फोटक स्थिति म रहता है कि वह क्रातिचेतना जेहाद वालने की पूरी तयारी के साथ मौजूद है।' अक्सर तो यह दखने म आता है कि सामाजिक वग एकता के बदले विशिष्टताओ म ज्यादा विभाजित रहता है और ये सब विशेपज्ञ अपनी-अपनी विभिन्न भूमिकाओ को निभाते हुए, आकस्मिक रूप से किसी एक खास स्थिति म क्रातिकारी विस्फोटक चेतना म परिणत हो जाते हैं। यदि हम फ्रास म १६६८ के श्रमिक वग का विश्लपण करें तो पाएगे कि इस क्राति म केवल सवहारा वग ही शामिल नही था चरन वकीलो, डाक्टरो एव स्त्री समुदाय का भी इसमे विशेष रूप से योगदान था।

पार्टी की मध्यस्थता—यहा 'पार्टी को सात्र सामूहिक रूप स कुछ व्यक्तियो का झुण्ड मात्र कहते हैं।' पार्टी श्रमिक वग को ऐतिहासिक चेतना है', १६५२ म अपनी स्वय की कही हुई इस बात को सात्र बिल्कुल खारिज कर देते हैं। पार्टी वर्गीय अभिकर्ता नही हो सकती क्योकि व्यवस्थित रूप से सस्थापन द्वारा यह वर्गीय अभिप्रायो के बिल्कुल विरुद्ध हो जाती है। सात्र अब पार्टी को सस्था की सज्ञा देते है जिसके सदस्य क्रमश अलगावित होते जाते हैं। यह विरोधाभास सस्था मे निहित रहता है। बहुधा पार्टी का उद्देश्य तथा श्रमिक का उद्देश्य एकदम विरोधी दिशाओ म चला है। अत सबसे बडी राजनीतिक समस्या यह है कि किस प्रकार ऐसे क्रातिकारी समुदाय का सगठन किया जाए जिसमे व्यक्ति

अराजकता को दूर किया जा सके। व्यक्ति को बचाना आवश्यक है। एक सामूहिक हित के लिए ऐसा सगठन जरूरी है, जिसमे उसका व्यक्तिगत हित भी निहित हो। और साथ ही यह भी देखते रहना है कि कालिक विकास के दौरान व्यक्ति कही खो न जाए। उसके निजी उद्देश्य तथा पार्टी के उद्देश्य एकदम विसर्जित न हो जाए। यदि यह विभेद रहता है तो अराजकता का होना स्वाभाविक है।

क्रिटीक' म सार्त्र की आलोचना का केन्द्रीय मुद्दा था, स्वल्पता। चूकि वस्तु स्वल्पता है, अत प्रत्येक की जरूरतें पूरी नही हो सकती। व्यक्ति का शोषण अनिवार्य है और क्राति का विस्फोटक तत्त्व यही मानवीय शोषण है। १९६८ के बाद सार्त्र एक विकसित पूजीवाद को देखते हैं उपभोक्ता सस्कृति को समझते हैं— 'जहा व्यक्ति की भौतिक जरूरतें तो पूरी हो जाती हैं, लेकिन उसका सृजनात्मक पहलू अधूरा ही रहता है। स्वय से अलगावित व्यक्ति सारी जरूरतो की तुष्टि के बाद भी महज एक भीड की तरह जीता है।' सार्त्र इसी 'मानवीय अलगाव को नई क्राति का सबसे बडा आधार मानते हैं।' अत क्राति का प्रेरक तत्त्व विकसित पूजीवाद म शोषण नही, बल्कि 'अलगाव होगा। अपने स्तर मे विभाजित श्रेणियो मे, विशिष्ट भूमिकाओ मे आदमी जब इस अलगाव को झेलता है, तब क्राति का वाहक केवल सर्वहारा ही नही बल्कि भरे पेट-वाला भी होगा। अपनी-अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए आदमी की तरह जिन्दा रहने के लिए वह क्राति की बुनियाद मजबूत करेगा।

सार्त्र यहा पर राज्य की सत्ता और भूमिका के सम्बन्ध मे प्रश्न उठाते है, "राज्य अपने समाज के अस्तित्व हेतु समुदायो से मिलकर बना है चूकि इन समुदायो म एकता का अभाव है, राज्य का सबसे पहला एव बडा काम है, इनके एकल सगठन को बनाए रखना। राज्य का उद्देश्य है, इन मानवीय सामूहिकताओ की जोड तोड करते रहना। वह इन समुदायो को 'यान्त्रिक क्रमिकता' से नही उबारता, बल्कि अपनी स्थिति एव ताकत को बनाए रखने के लिए वह इनकी विषमता एव क्रमिकता का लाभ उठाता हैं।'

मार्क्स की तरह सार्त्र भी राज्य का यह केन्द्रीय विरोधाभास हमारे

सामने रखते हैं कि वह पूरे समाज पर अपनी एकल प्रभुता स्थापित करना चाहता है। प्रभुता, जो बाहर से व्यक्ति पर थोपी जाएगी और जिसे स्थापित करने के लिए दफ्तरशाही को एक वर्गीय उपकरण (क्लास एपारेटस) की तरह व्यवहृत किया जाएगा।

यहा पर हम एक नए प्रकार का काय जगत पाते हैं। यह राज्य की दफ्तरशाही का जगत है, जो समाज के प्रत्येक स्तर पर दखल अन्दाजी के कारण पैदा होता है। राज्य आदमी के निजत्व से, उसकी प्रत्येक वस्तु से छेडछाड किए बिना नही रहता। पूरा सचार जगत इसकी दफ्तरशाही के नियत्रण मे है। इसके पास अगणित हथियार हैं और यह नित नए हथकडे अपनाता हुआ बाह्य रूप से व्यक्ति चेतना को अनुकूलित करता रहता है। उसका यह बाह्य अनुकूलन (एक्सटीरियर कडीशनिग) हम हर जगह पाते हैं। जहा भी राज्य हैं, व्यवस्था है, लिखे गए सविधान हैं, वह चाहे पूव का समाजवाद हो या पश्चिम का पूजीवाद, प्रत्येक जगह बडी क्रूरता से व्यक्ति स्वतत्रता का दमन किया जाता है। सात्र का सारा आक्रोश राज्य के इस वचक रूप से है, जहा रक्षक गण व्यक्ति चेतना को मिटाने पर तुल जाते हैं। सात्र कहते हैं, 'बाह्य अनुकूलन व्यक्ति को बदलाव की उस सीमा तक ले जाता है, जहा पर क्रमबद्ध व्यक्ति वही काम करने लगता है, जो कि दूसरे भी करते हैं, क्योकि उसे उन्ही मे से एक होना है। जब किसी राशन की दूकान या टेलीफोनबूथ के सामने व्यक्ति लाइन मे खडे होते है, तब वे किसी गुमनाम आदेश को आत्मसात कर रहे होते हैं। उन्ह लाइन म खडा होना है, वही करना है, जो कि दूसरे कर रहे हैं, ताकि वे भी उन्ही लोगो मे से एक हो सकें।

"दूसरे से सम्बन्धित होना या दूसरे की तरह होना,' सात्र इसे गलत नही मानते। वे इसे आदमी की सबसे बडी मौलिक जरूरत मानते हैं, क्योकि जन्म से आदमी सामाजिक है। समुदाय बनाना उसका मानवीय धर्म है। सार्वभौमिकता की चाह उसकी आन्तरिक इच्छा है, इसीलिए गलत कुछ भी नही है। गलत तो तब हो जाता है जब राज्य अपनी दफ्तरशाही की मध्यस्थता से इसकी निर्दोष एव मासूम चालाकी एव दोगलेपन से जोड-ताड करने लगता है। आदमी

वनकर रह जाता है और उस भीड़ का नियंत्रण राज्य में आतंक से, बाह्य-अनुकूलन से किया जाता है। हालांकि समाज की तात्कालिक संरचना में जहां समुदाय एवं 'श्रमिकता' निहित है, राग तथा दफ्तरशाही का जन्म बाद में होता है। इसीलिए व्यक्ति के क्रिया कलाप का जगत वह प्राथमिक स्थिति है, जो वर्ग-संघर्ष को जन्म देती है।

सात्र यहां पर बाह्य अनुकूलन से मानवीय पारस्परिकता, आतंक से हिंसा से मानव प्रेम के द्वैत की चर्चा करते हैं। समष्टीकरण का यह परिणाम रोजमर्रा की जिन्दगी जीते हुए आदमी को भोगना पड़ता है। इतिहास से उसे मुक्ति नहीं मिलती। फ्रांस की राज्य क्रांति का उदाहरण सामने है, जहां १८वीं सदी में बुर्जुवा वर्ग (सामाजिक न्याय एवं समता को प्रस्थापित करने हेतु) सामंती व्यवस्था के खिलाफ क्रांति करता है।

१९६० के उत्तरकाल में सात्र ने बढ़ती हुई तकनीकी तथा प्रौद्योगिकी सभ्यता देखी, साथ ही उपभोक्ता संस्कृति में आदमी के बनते हुए अलगाव को समझा। जिस साहित्य और भाषा को वे जन-जीवन का उद्घोष मानते थे उसी को उन्होंने सत्ता के हाथ बिकते हुए भी देखा। ऐतिहासिक और सामाजिक स्थिति को साहित्य एक सर्जनात्मक तथा विनियोजक अर्थवत्ता प्रदान करता है। भाषा चेतना की अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम है। उन्हें लगा कि वर्गहीन समाज को एक प्रामाणिक भाषा की जरूरत है जो व्यक्ति से व्यक्ति का संवाद स्थापित कर सके, लेकिन जो सामने आ रहा था, वह बड़ा भयंकर तथा त्रासद था। व्यक्ति से व्यक्ति का संवाद समाप्त हो रहा था। भाषा की निरपेक्षता और ठोसपन का स्थान एक सतही वार्तालाप ले रहा था। उपभोक्ता संस्कृति ने जहां आदमी को एक चीज की तरह खरीदना-बेचना शुरू किया वहीं भाषा का भी संस्थापन शुरू कर दिया। सत्ता ने भाषा के औजार को वर्गहित में व्यवहृत करना शुरू किया, अतः प्रतिक्रिया स्वरूप हिंसा, आतंक एवं दमन का साहित्य सामने आया। एक आयामी संवाद के जरिए सत्ताधारी वर्ग अपने वर्गहितों को ही सर्वोपरि रखने लगा। उसके लिए बाकी सारी महज एक भीड़ बन गई। अतः कोई आश्चर्य नहीं कि श्रमिक वर्ग

दिशाहारा हो गया।

श्रमिक वर्ग से उपभोक्ता सस्कृति ने उसके जीवन का उद्देश्य, उसकी अथवत्ता छीन ली। यान्त्रिकी भौतिकता के य एसे अदृश्य हाथ थे, जो प्रत्येक व्यक्ति को केवल विनिमय योग्य औसत मे परिणत करते जा रहे थे। अत सृजनात्मकता के बदले पनप रहा था, भोगवाद। विज्ञापन की दुनिया, जिन्दगी के प्रत्येक क्षण का नियन्त्रित कर रही थी। जनता को केवल भोग सिखाया जा रहा था। विज्ञापन की मध्यस्थता से आदश और यथाथ मे सबध स्थापित किया जा रहा था। इन विरोधाभासो म सामाजिक सतुलन का ह्रास होने लगा।

और हमारे सामने आई एक बाजारू सस्कृति। अलगाव की एक गैमी विभीषिका, जहा मूल्यो का ह्रास हुआ। दूसरी ओर सामाजिक राजनीतिक उलझनें तथा उपभोग के प्रति व्यक्ति का अभियाजन बढता गया। व्यक्ति चेतना, इतिहास क प्रति अचेतन और स्वय के प्रति निषेधात्मक ध्येय लिए हुए थी। अत ऐसे सक्रांति-काल मे दश का मानवीकरण असम्भव होता जा रहा था।

सात्र का पहला और आखिरी प्रश्न यही था कि क्या अलगाव का खत्म किया जा सकता है ?

सात्र कहते हैं कि, "पदार्थीकृत होता हुआ जड निष्क्रिय व्यक्ति भी इस प्रक्रिया के प्रति सचेत है। अलगाव की स्थिति मे भी व्यक्ति किसी-न-किसी तरह एक-दूसरे को व्यक्ति के रूप म पहचानता है। आदमी की यह आदमी होने की पहचान ही उसकी सबसे मजबूत जमीन है।

सक्षेप मे कहें तो सात्र ने इतिहास को निर्मित करने की मानवीय-क्षमता को बनाए रखा और अलगाव के विभिन्न प्रमुख रूपो को वस्तुनिष्ठता की सीमा मे निर्धारित किया। व्यक्ति प्रधान है, किन्तु वस्तु स्थिति भी वास्तव उसके व्यक्तित्व को सीमित भी करता है। दूसरी ओर वस्तु स्थिति का परिवतन भी स्वय व्यक्ति ही करता है, अत विभिन्न स्तरों पर मानवीय अनुभवों की सापेक्षिक स्वायत्तता (रिलेटिव ऑटोनामी) स्थापित होती है। मानवीय अनुभव सावभौमिक तथा विशिष्ट दोना ही प्रकार म

होते हैं। सार्त्र ने अनुभव किया कि व्यक्तिगत जीवन की ऐतिहासिक समग्रता ऐसी ठोस मानवीय स्थितियां हैं, जिनकी विशद विवेचना मनो-विश्लेषण की मध्यस्थता से की जानी चाहिए।

यहां पर हम देखते हैं कि क्रमश 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' की स्वतन्त्रता की अवधारणा अनिर्णित नहीं रही। आदमी का सामना जब ठोस सामाजिक एवं आर्थिक वस्तु स्थितियों से होता है, तब वह बड़े आंशिक रूपों से ही जगत का परिवर्तन कर सकता है। संभावनाएं सीमित होने लगती हैं और चुनाव संकुचित, किन्तु फिर भी अपनी सीमा-रेखा में व्यक्ति को चुनाव करना पड़ता है। यही उसकी नियति है। अतः आन्तरिक एवं बाह्य अनुभवों की इस समकक्षता में सार्त्रीय स्वातंत्र्य की अवधारणा बिना अपना मूल-स्वरूप बदले और अधिक समृद्ध होती है।

किन्तु सक्रिय राजनीतिक जीवन के मध्य तक आते-आते सार्त्र ने सृजन का एक और पूर्णतः चिन्तनशील कार्य प्रकाशित किया। ये २८०० पृष्ठों में छपे, तीन वृहद् ग्रन्थ थे जिन्हें उन्होंने फ्रांस के महत्त्वपूर्ण बुर्जुवा लेखक गस्ताव फ्लॉबेअर के जीवन पर लिखा। पुस्तक को पढ़ने से यह और समझ में आता है कि 'तीसरे खंड' के अन्त में जो प्रश्न अनुत्तरित रह गए, शायद इन प्रश्नों के उत्तर में सार्त्र की एक योजना 'चौथे खंड' को लिखने की थी, जिसकी पृष्ठ संख्या पहले तीन खंडों के समान ही होती। १९७४ में जब वे बीमार हो गए, आंखों की रोशनी जाती रही, तब यह काम अधूरा रह गया।

प्रश्न उठता है कि फ्लॉबेअर की जीवनी में ऐसा क्या था, जिसने सार्त्र की हरक्युलियन ऊर्जा शक्ति को इस प्रकार सन्निहित कर लिया? अपने नए-पुराने दोस्तों से बातचीत करते हुए इस पुस्तक के प्रति वे कभी विनय-शील और लज्जालु हो जाते थे तो कभी क्षमा याचना सहित चुप हो जाते थे। 'बीइंग एण्ड नथिंगनेस' या 'क्रिटीक' से अधिक महत्व उन्होंने इसे कभी नहीं दिया।

सन् १९७२ के प्रारम्भ में सार्त्र ने ब्रसेल्स में जो भाषण दिया, उसमें फ्लॉबेअर परियोजना के बारे में, अपनी नकारात्मक भावनाओं का संक्षिप्त रूप वे प्रस्तुत करते हैं। वे कहते हैं कि पिछले १७ वर्षों से वे फ्लॉबेअर पर

यह काम कर रहे हैं' जिसमें कामगारों की कोई रुचि नहीं हो सकती। जटिल बुर्जुवा शैली म लिखा गया यह ग्रन्थ केवल बुर्जुवा वग एव बुर्जुवा सुधारवादियों, प्रोफेसरो तथा विद्यार्थियों द्वारा खरीदा तथा पढा गया। न यह जनहित के लिए था और न ही यह जन-मानस को उजागर कर रहा था। पुस्तक जब प्रकाशित हुई, उस समय सार्त्र ६७ वर्ष के थे। सार्त्र कहते हैं

"जब मैं ५० वष का था, तब मैंने यह काम शुरू किया था और इससे पहले मैं इसके स्वाब देखा करता था। बुर्जुवा पाठकों से यह ग्रथ मुझे जोडता है। इसके माध्यम से मैं भी एक बुर्जुवा हू और जब तक मैं इस पर काम करूगा तब तक मैं बुर्जुवा बना रहूगा। बहरहाल, मेरा दूसरा पक्ष यह भी है, जो मेरी इन आदर्शवादी रुचियो को नकारता है और शास्त्रीय बौद्धिकों की भूमिका म मेरी इस पहचान के खिलाफ लड रहा है। मैं अभिजातवर्गीय लेखक नहीं बनना चाहता, जो अपने आपको गभीरता से लेता है। मैं स्वय को चुनौती दे रहा हू और उस सर्वहारा मे अपने आप को पाता हू जो बुर्जुवा तानाशाही के खिलाफ लड रहा है। मैं अपनी बुर्जुवा स्थिति छोड देना चाहता हू, अत मेरे अन्दर एक खास तरह का विरोधाभास है। मैं अब भी बुर्जुवा भाषा में बुर्जुवा के लिए लिख रहा हू, किन्तु उन कामगारो के साथ पारस्परिकता अनुभव करता हू, जो इसे मिटा देना चाहते हैं।" ये कामगार वही लोग हैं, जिनसे १९६८मे बुर्जुवा वर्ग इतना ग्रस्त था। सार्त्र की इस आत्मालोचना का कारण यह खुद की कि फ्लॉबेट कामगारों के लिए नहीं लिखता। फ्लॉबेट पर लेखन आखिरकार एक पराजय का उत्पाद था। 'क्रिटीक' के विध्वस पर ' द ईडियट ऑफ द फमिली' की इमारत खडी हुई थी। यह साहित्य वैराग्य का साहित्य था। इसम जगत को छोडकर सार्त्र का चितन एक अन्य बौद्धिक के जीवन और सृजन पर लग जाता है। वे लिखते हैं

"ईश्वर हुए बिना एक आदमी होकर किसी दूसरे आदमी के बारे में सब कुछ ज्ञात किया जा सकता है, बशर्ते उस आदमी के बारे मे हम सभी अनिवार्य जानकारियां हासिल हो सकें।"

अपनी पुरानी प्रतिबद्धता से हटकर सार्त्र की बौद्धिक ऊर्जा अब

शिद्दत के साथ फ्लॉबर्ट के बारे मे सब कुछ कहने-सुनने की दिशा मे सक्रिय हो गई। सात्र कहते हैं कि आज के आदमी के बारे मे कितना कुछ जाना जा सकता है, इस सवाल का जवाब देने के लिए एक व्यक्ति विशेष का पूरा अध्ययन जरूरी है तथा वह व्यक्ति विशेष फ्लॉबर्ट भी हो सकता है। फ्लाबर्ट को सहायक की भूमिका दिए जाने पर आलोचक बौखलाए, लेकिन सात्र के अध्ययन का उद्देश्य जीवनी-सम्बन्धी प्रणाली (मेथड) का विकास करना था। फ्लॉबर्ट की विशिष्ट रुचियो से अलग उन्होने एक व्यवस्थित आत्मसृजक निबन्ध भी लिखा। जीवनी-अध्ययन के सन्दर्भ में इसका प्रयोग कहीं भी किया जा सकता है।

हम देखते हैं कि सात्र ने मार्क्सवाद और मनोविश्लेषण दोनों का विकास अपनी जीवनी सबधित इस परियोजना मे किया है। उनके प्रारंभिक चिंतन का पराकाष्ठावाद (एब्सॉल्यूटिज्म) इसमे सुरक्षित और गहन दिखाई पडता है। न्यूनीकृत स्वातंत्र्य की उनकी मूल धारणा यहा अपना आकार ग्रहण कर लेती है। असभव मागा और दमनकारी स्थितियो मे भी सात्र कहते हैं, अपने को बचाने के लिए हम स्वय उत्तरदायी हैं। जीव अपनी पूरी एकता मे जीवन के लिए अनुपयुक्त स्थिति मे भी जीवित रहने का रास्ता खोजता है।

फ्लाबर्ट का आत्म-सजन दिखाने मे क्या सात्र सफल हुए ? नैतिक और सामाजिक मिशन की भावना से मुक्त सात्र ने अपनी समस्त बौद्धिक ऊर्जाए समेटकर उन्हें इस महती कार्य मे लगा दिया। सात्र ने वे सभी सीमाए तोड दी जिनमे वे सीमित तथा अनुशासित रह सकते थे। सात्र के आम-नीतिवाद से मुक्त यह पुस्तक किसी गतव्य तक पहुचने की सासारिक अनिवार्यता से अभिप्रेरित नही थी।

इस पुस्तक के विलक्षण विस्तार के अनेक कारण दिए जा सकते हैं। सात्र इस पुस्तक मे यह साबित करना चाहते थे कि जीनियस कोई उपहार नही, बल्कि निराशाजनक परिस्थितियो मे भी अपनी राह खोजने वाला व्यक्ति होता है। उस तत्त्व का चुनाव करने वाला होता है, जिसे लेखक अपने लिए या मानव-जीवन के लिए या फिर इस पूरे ब्रह्माड का अर्थ समझने के लिए अनिवार्य मानता है। दूसरे शब्दो मे, लेखक अपनी शैली की

विशिष्टताओ उसके सगठन, अपनी कल्पना की सरचना और अपनी रुचियो की विविधताओ म अपनी मुक्ति का इतिहास प्रस्तुत करता है। लेखक अपनी सामाजिक परिस्थितियो का आत्मसात करता है। वह उत्पाद के सम्बधो को भी आत्मसात करता है। उसकी समकालीन व्यवस्थाएं एव सस्थाए—उनका इतिहास और उसके बचपन का परिवार आदि य सारी परिस्थितिया उसके आभ्यतर का निर्माण करती हैं। लेखक पुन अपनी इन सभवनाओ म से किसी एक का वरण और अपने वरण से सम्बधित काय व्यापारो को पुन बाह्यकृत करता है। जहा बीइग एण्ड नथिगनस और क्रिटीक' म सात्र बौद्धिकी अधिक थे—जीवन के आतरिक अनुभवो के बदले जागतिक विश्लेषण पर जोर अधिक देते थे—वही फ्लाबट मे वे इसका विशद विवेचन प्रस्तुत करते हैं कि एक लेखक कसे अपने सर्जन की भूमिका के माध्यम से अपने आभ्यतर का निर्माण करता है।

फ्लाबट म सात्र यह दिखाना चाहते हैं कि आदमी इतिहास तथा ऐतिहासिक घटनाओ का उत्पाद है। 'जीनियस म भी कोई अत वर्ती प्ररणा, कोई विशेष प्रतिभा या विरासत म मिली हुई कोई खास चारित्रिक विशेषता नहीं होती। 'जीनियस पैदा नही होता, बल्कि ऐतिहासिक विकास के दौरान स्वरूप ग्रहण करता है। वह जिन परिस्थितियो म जन्म ग्रहण करता है, उन्ह आत्मसात करते हुए एक समग्रता हासिल करता है। अपनी समग्रता को वह पुन वाह्यकृत करते हुए कायरूप म परिणत करता है। कोई भी लडका उस परिवार म इतिहास की उस तारीख म पैदा होता तो वह गस्ताव फ्लॉबट ही बनता और मदाम बवारी जैसी अनन्य कृति का सजक होता।

किन्तु, 'द ईडियट ऑफ द फमिली' को असफल होना ही था। सात्र ने जिस फ्लॉबट को देखा, वह असफल था, उसकी कथा पराजय की कथा है। पष्ठ दर पष्ठ पढने के बाद हम फ्लाबट की निराशा कल्पना [illegible] उसका सिमटना, एक पूरी पीढी की पूव निर्धारित असफलता [illegible] साहित्यिक बधुत्व ही देख पाते हैं। खोया कुछ [illegible]
सात्र ने 'फ्लॉबट' का इतना विशद अ [illegible]

क्योकि वे अपने-आपको समझना चाहते थे। अपनी उन साहित्यिक अवधारणाओ को भी, जो उन्हें विरासत मे मिली थी। जिनका मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक तथा सामाजिक पहलू उनके अस्तित्व की जडो मे विद्यमान था। उन्होने अपने आपसे प्रश्न किया—अपनी अभिधारणाओ का सामना किया—किन्तु, इन सारे विश्लेषणा के बावजूद अन्त तक वे अपनी वचारिक सीमा का अतिक्रमण नही कर पाए। आन्तरिकता के प्रति जो रुझान हम शुरू से उनके लेखन मे पाते हैं—कल्पना की छतें या वास्तव की जमीन, व्यक्ति की एकलता या फिर समाज की सावभौमिकता, अमूत बौद्धिक चिन्तन या सक्रिय राजनीतिक जीवन, इन सबका द्वैत, द्वन्द्व तथा तनाव हमेशा उनके लेखन मे बना रहता है।

सार्त्र अपने युग की ऐतिहासिकता मे खोए रहते हैं। इतिहास की जडो को टटोलते हैं कि शायद अपने इस बौद्धिक चिन्तन से वे अस्तित्व की समग्रता को समझ लें। यहा पर किसी भी प्रकार का निणय देना, यह कहना कि सार्त्र की यह महती परियोजना अन्त मे विफल रही, सार्त्र के प्रति बडा अन्याय होगा। यह हमारी नासमझी कही जाएगी। कोई दाशनिक लेखक यदि अपनी स्थिति से उबरने का, उसके अतिक्रमण का प्रयास करता है और अपने इस प्रयास के प्रति इन प्रचेष्टाओ मे निहिताथ विरोधाभासो के प्रति यदि वह सजग है, ईमानदार है और अपनी मानवीय सीमाओ का स्वीकरता है, तो उसकी सबसे बडी उपलब्धि यही कही जाएगी।

सार्त्र से हमें बहुत कुछ सीखना है। हमारी आनेवाली पीढी को बहुधा अपनी समस्याओ पर, मानवीय समझ के लिए सार्त्र के पास लौटना होगा, उनके लिखे गए शब्दो को नया सदभ, नई अथवत्ता प्रदान करनी होगी।

मई आन्दोलन मे जिन राजनीतिक तथा सैद्धातिक समस्याओं को छात्र उठाते हैं उनका निराकरण नही होना था, किन्तु सार्त्र ने 'मई आन्दोलन' को विश्व-ऐतिहासिकता के परिप्रक्ष्य में देखा और इसके वैयक्तिक महत्व पर जोर दिया। छात्र आन्दोलन केवल फ्रास की सीमा में घटित होने वाली एक 'विशिष्ट वर्गीय घटना नही थी। यह आदमी की वह आखिरी लडाई' थी, जो आज भी लडी जा रही है और आगे भी लडी जाएगी, क्योंकि आदमी अपने-आप को एक आदमी की तरह ही बचाना

चाहता है। यह क्रांति यान्त्रिक सभ्यता में निरन्तर जड़ होती हुई चेतना की क्रांतिकारी आवाज थी। सत्ता के विरोध में यह एक स्वतंत्र चेतना की पुकार थी। 'सत्ता' जो प्रत्येक मानवीय सृजनात्मक क्षमता को जड़ भौतिकी में बदलकर रख देना चाहती है।

सार्त्र का आखिरी सवाल था कि—"आखिर आदमी अपने-आपको कैसे बचाए रखे?"

वे किसी भी तरह के तन्त्र को मानने से इन्कार करते हैं। व्यवस्था आदमी ही बनाता है—अपने होने के लिए, दूसरों के साथ जीने के लिए, समग्र से समग्रतर विकास हेतु।

ऐतिहासिक विकास के दौरान समय के साथ जब यही व्यवस्था आदमी को तोड़ने लगती है तब फिर आदमी की चेतना व्यवस्था को नकारती है, अपनी स्वतंत्रता पहचानती है। व्यक्ति अगणित संभावनाओं में से कुछेक का चुनाव करता है और अपने वरण के लिए प्रतिबद्ध होकर उन्हें क्रियान्वित भी करता है। एक और नये समाज का गठन होता है।

सार्त्रीय स्वातन्त्र्य की अवधारणा परमाणवीय नहीं थी। वह सामूहिक थी—साथ-साथ कदम बढ़ाते हुए, निरंतर क्रांति करते हुए, अपने विरोधाभासों से परिचित होते हुए भी हम इस स्वातन्त्र्य को हासिल कर सकते हैं।

अतः हम देखते हैं कि क्रमशः विकास के साथ १९६८ के बाद सार्त्र कर्मयोगी बन गए।

न केवल वैचारिक रूप से बल्कि अपनी सक्रिय जीवन-शैली में भी उन्होंने इसी बात का परिचय दिया।

इसके बाद फिर १९६८ की मई क्रांति थी। जो कुछ भी हुआ, उससे सार्त्र ने यही समझा कि छात्र वर्ग जो प्रश्न उठा रहे थे वह साम्राज्यवाद, पूँजीवाद, समाजवाद आदि किसी भी व्यवस्था के सन्दर्भ में निहित था। हम सभी उन प्रश्नों में सम्मिलित थे। सार्त्र कहते हैं, "१९४० से १९६८ तक मैं वामपंथी बुद्धिजीवी था और अब १९६८ से बौद्धिक वामपंथी हो गया हूँ। फर्क पड़ा है, मेरी अपनी क्रियावादी मांगों में। भ्रमों को तोड़ने के लिए अपने व्यामोह से छुटकारा पाने के लिए हमें विचारों को कार्य में,

पचम अध्याय

पिछले अध्याय मे हम देखते हैं कि एक राजनीतिक-बुद्धिजीवी के रूप मे सात्र की भूमिका प्रस्फुटित होती है कि तु, लम्बे अरसे से प्रतीक्षित साम्यवाद जब आया तो सात्र की पहली प्रतिक्रिया थी—यह वह नही जिसका हमे इ तजार था। यह साम्यवाद जन के खिलाफ था।

सात्र अपने प्रयासो की सामथ्य पर इतने निराश हो चुके थे कि वे कहते हैं

''पचास वर्षों तक इस पिछडे हुए प्रा त मे रहना बहुत अपमानजनक है जो फ्रास बन चुका है हम चिल्लाए, हमने विरोध किया अपने चि तनवश हमने घोषित किया—'यह स्वीकाय नही है' या 'सवहारा इसे सहन नही करेगा' और अब अ त मे, हम यहा हैं, हमने सब कुछ स्वीकार कर लिया है। अपने ज्ञान की बात, अपन अनुभवो का गरिमापूण फल क्या हम इन युवा अजनबियो को समझा पायेंगे ? क्रमश तलहटी तक डूबकर हमने कवल एक बात सीखी है—अपनी भूल पौरुषहीनता। कारण का यही प्रारभ है। जीवन की इस लडाई से मैं सहमत हू। लेकिन हमारी हड्डिया पुरानी हैं और इस उम्र मे जब दुनिया अपनी विरासत देने की बात सोचती है, हमे यह पता चलता है कि हमने कुछ नही किया।''

अन्त मे सात्र एक सभावनापूण सद्धातिक राह ढूढ लेते हैं। वे अपने दो अलग पहलू प्रस्तुत करते हैं। एक सक्रिय बुद्धिजीवी का, दूसरा पलायट के लेखन का। १९७२ मे उनके जापान मे दिए गए भाषण 'प्ली फॉर एन इण्टेलेक्चुअल' शीषक मे फ्रास मे प्रकाशित हुए। इनकी भूमिका म सात्र लिखते हैं कि, ''बुद्धिजीवी वस्तुनिष्ठ रूप से आम आदमी का दानु है। आज मैं अन्तिम रूप से यह समझ गया हू कि बुद्धिजीवी उदास के रूप मे आदशवादिता और अयोग्यता की विशिष्टता के साथ रह सकता। अगर वह लोकप्रिय स्थान चाहता है तो उसे क्षणो को नकारना होगा और अपनी समस्याओ का सक्रिय नि

होगा। दूसरे शब्दो मे, बुद्धिजीवी को अपनी बौद्धिक भूमिका छोडकर जन सेवा करने लगना चाहिए।

आखिरकार इस महान परिवर्तन का परिप्रेक्ष्य क्या है और इसका अर्थ क्या है ? परिवर्तन दरअसल १६६८ के बाद आया। यह वर्ष अत्यधिक उपद्रवी वर्षों मे से एक साबित हुआ क्योकि इलेक्ट्रॉनिक सचार-माध्यमो की शुरुआत हुई। साल की शुरुआत वियतनाम मे आक्रमण से हुई। अमरिका के राष्ट्रपति को गद्दी से नीचे उतरना पडा। मार्टिन लूथर किंग तथा रॉबर्ट कैनेडी की हत्या कर दी गई। युद्ध विरोधी प्रदर्शनों और नीग्रो विद्रोह से सयुक्त राज्य अमेरिका उत्तेजित हो गया। अमेरिकन विद्यार्थी आन्दोलन का अति नाटकीय प्रदर्शन तब हुआ जब विद्यार्थियो ने कोलबिया विश्वविद्यालय पर कब्जा कर लिया। चीन की सास्कृतिक क्राति ज्वार-भाटे की तरह उफन रही थी। वसत ऋतु के आगमन के साथ ही ऐसा लगा मानो प्राहा पुन एक मानवीय समाजवाद को जन्म देने की तैयारी कर रहा है। सोवियत रूस ने चेकोस्लोवाकिया पर हमला कर दिया और जब पूरा ससार दूरदर्शन पर ये गतिविधियां देख रहा था तब शिकागो मे 'डेमोक्रेटिक कन्वेंशन' के सामने प्रदर्शनकारी पीटे जा रहे थे और अन्दर यूजेन मेकार्थी को राष्ट्रपति का नामाकन पत्र भरे जाने की अनुमति नहीं मिली थी। पर लेखक जिन सार्वभौम सत्यो को अपनी भाषा के माध्यम से उजागर करना चाहता है उनके बदले वह कुछ एक प्रासगिकताओ मे सिमटकर रह जाता है। इसका मतलब यदि हम यह लगाए कि लेखक बेतुका ही बोलता है, तब यह बात सच नही होगी। लेखक का उद्देश्य है अ-सकेतन को सकेतित करना। मौन को शब्दो मे उच्चारित करना।

सार्त्र यहा पर लेखकीय स्थिति के विरोधाभासो को हमारे सामने रखते हैं कि कैसे एक लेखक सम्प्रेषण के उद्देश्य से, अपनी अस्तित्वजनक सीमा और भाषा की सरचनात्मक सीमा के कारण असम्प्रेषित होकर रह जाता है। लेखकीय कला और शैली सज्ञान को प्रेषित नही करती। यह लेखक का एक जागतिक नजरिया ही सम्प्रेषित करती है। भाषा के माध्यम से लेखक परिवेश से सबध स्थापित करता है और अपनी तथ्यता मे अनुकूलित होता है। लेखक एक अन्वेषक है, एक ऐसा खिलाडी जो अपनी

भाषा की कमजोरियो को इसलिए भी स्वीकारता है ताकि वह व्यावहारिक विशिष्टता का साक्षी बना रहे और शब्दों की भौतिक उपस्थिति मे जगत से सम्बन्धित होने का जीवित अनुभव प्राप्त कर सके।

अपनी पुस्तक 'बिट्वीन एक्जिस्टेंशियलिज्म एण्ड मार्क्सिज्म' म पृष्ठ २८० मे सात्र उदाहरण देते हैं कि, ' लेखक कहना चाहता हैं कि तुम घृणास्पद हो, तुम अपनी इस घृणा को छिपा सकते हो किन्तु उसका उन्मूलन नही कर सकते। वाक्य का अथ यहा सावभौमिक है किन्तु एव विशिष्ट शैली मे इसकी अभिव्यक्ति होने के कारण लेखक स्वय भी विशिष्टता का परिप्रेक्ष्य हासिल करता है। जगत मे स्थित होने का लेखक का यह एक मौलिक तरीका है। अत लेखन की शली बाह्य को अन्त कृत और आन्तर को बाह्यकृत करने मे निहित है। यही विशिष्ट चेष्टाए जब मानवीय अधिकर्ता की ओर उन्मुख होती हैं तब इन्हे ऐतिहासिक क्षणो का स्वाद या एक पूरे युग की जीवनगध कहा जाता है। यानी लेखक की कृति म इतिहास का सार्वभौम वैयक्तिक विशिष्टताओ मे प्रकट होता है।'' उपयुक्त कथन से यह बात सिद्ध होती है कि आज का लेखन काय-जगत मे स्थित होने के दो पहलुओ को समानुक्रम रूप से सिद्ध करता है। एक तो आशिक इकाइयो की मध्यस्थता के द्वारा जगत का आत्म-प्रकाशन इस प्रकार सगठित होता है कि प्रत्येक जगत सावभौम को ही विशिष्टता के जनक के रूप म प्रस्तुत सीमा की तरह घेर लेता है। दूसरे, लेखकीय काय मे वस्तुपरकता प्रत्येक पृष्ठ पर इस प्रकार दृष्टिगोचर होनी चाहिए कि वह विषय-वस्तु की अभिव्यक्ति बन जाए। काय का जब यह दोहरा अभिप्रत होगा तब इसकी औपचारिक सरचना क्या रूप ग्रहण करेगी इसकी चर्चा करने की जरूरत नही। जैसे काफ्का के वस्तुपरक तथा रहस्यात्मक विवरणो मे हम एक प्रकार का बिना प्रतीकों का प्रतीकवाद पाते हैं तथा जिसमे अपरोक्ष रूप स भी रूपक कोई सूचना नही देता है किन्तु जहा लेखन निरन्तर जीव के जगत मे स्थित होने की घटना पर एव दुर्बोध्यता जाहिर करता रहता है।

अत लेखक को अपने पूरे युग से सबधित होना होता है। सामाजिक जगत मे उसकी स्थिति उसके लेखन-काय की इस विशिष्ट सं नि

होगा। दूसरे शब्दो मे, बुद्धिजीवी को अपनी बौद्धिक भूमिका छोडकर जन सेवा करने लगना चाहिए।

आखिरकार इस महान परिवतन का परिप्रेक्ष्य क्या है और इसका अथ क्या है ? परिवतन दरअसल १९६८ के बाद आया। यह वष अत्यधिक उपद्रवी वर्षों मे से एक साबित हुआ क्योकि इलेक्ट्रॉनिक सचार-माध्यमो की शुरुआत हुई। साल की शुरुआत वियतनाम मे आक्रमण से हुई। अमरिका के राष्ट्रपति को गद्दी से नीचे उतरना पडा। मार्टिन लूथर किंग तथा रॉबट कनडी की हत्या कर दी गई। युद्ध विरोधी प्रदशनो और नीग्रो विद्रोह से सयुक्त राज्य अमेरिका उत्तेजित हो गया। अमेरिकन विद्यार्थी आन्दोलन का अति नाटकीय प्रदशन तब हुआ जब विद्यार्थियो ने कोलबिया विश्वविद्यालय पर कब्जा कर लिया। चीन की सास्कृतिक क्राति ज्वार-भाटे की तरह उफन रही थी। वसत ऋतु के आगमन के साथ ही ऐसा लगा मानो प्राहा पुन एक मानवीय समाजवाद को जम देने की तयारी कर रहा है। सोवियत रूस ने चेकोस्लोवाकिया पर हमला कर दिया और जब पूरा ससार दूरदशन पर ये गतिविधिया देख रहा था तब शिकागो मे 'डेमोक्रेटिक कवेंशन' के सामने प्रदशनकारी पीटे जा रहे थे और अदर यूजेन मेकार्थी को राष्ट्रपति का नामाकन पत्र भरे जाने की अनुमति नही मिली थी। पर लेखक [illegible]न सावभौम सत्यो को अपनी भाषा के माध्यम से उजागर करना चाहता है उनके बदले वह कुछ एक प्रासगिकताओ मे सिमटकर रह जाता है। इसका मतलब यदि हम यह लगाए कि लेखक बेतुका ही बोलता है, तब यह बात सच नही होगी। लेखक का उद्देश्य है अ-सकेतन को सकेतित करना। मौन को शब्दो मे उच्चारित करना।

सात्र यहा पर लेखकीय स्थिति के विरोधाभासो को हमारे सामने रखते हैं कि कैसे एक लेखक सम्प्रेषण के उद्देश्य मे, अपनी अस्तित्वजनक सीमा और भाषा की सरचनात्मक सीमा के कारण असम्प्रेषित होकर रह जाता है। लेखकीय कला और शैली सज्ञान को प्रेषित नही करती। यह लेखक का एक जागतिक नजरिया ही सम्प्रेषित करती है। भाषा के माध्यम से लेखक परिवेश मे सबध स्थापित करता है और अपनी सभ्यता मे अनुकूलित होता है। लेखक एक अन्वेषक है, एक ऐसा खिलाडी जो अपनी

भाषा की कमजोरियो को इसलिए भी स्वीकारता है ताकि वह व्यावहारिक विशिष्टता का साक्षी बना रहे और शब्दो की भौतिक उपस्थिति मे जगत से सम्बधित होने का जीवित अनुभव प्राप्त कर सके।

अपनी पुस्तक 'बिट्वीन एक्जिस्टेंशियलिज्म एण्ड मार्क्सिज्म' मे पृष्ठ २८० मे सात्र उदाहरण देते हैं कि, "लेखक कहना चाहता हैं कि तुम घृणास्पद हो, तुम अपनी इस घृणा को छिपा सकते हो किन्तु उसका उन्मूलन नही कर सकते। वाक्य का अर्थ यहा सार्वभौमिक है किन्तु एक विशिष्ट शैली मे इसकी अभिव्यक्ति होने के कारण लेखक स्वय भी विशिष्टता का परिप्रेक्ष्य हासिल करता है। जगत मे स्थित होने का लेखक का यह एक मौलिक तरीका है। अत लेखन की शैली बाह्य को अन्त कृत और आन्तर को बाह्यकृत करने मे निहित है। यही विशिष्ट चेष्टाए जब मानवीय अधिकर्ता की ओर उन्मुख होती हैं तब इन्ह ऐतिहासिक क्षणो का स्वाद या एक पूरे युग की जीवनगध कहा जाता है। यानी लेखक की कृति मे इतिहास का सार्वभौम वैयक्तिक विशिष्टताओ मे प्रकट होता है।" उपर्युक्त कथन से यह बात सिद्ध होती है कि आज का लेखन काय-जगत मे स्थित होने के दो पहलुओ को समानुक्रम रूप से सिद्ध करता है। एक तो आशिक इकाइयो की मध्यस्थता के द्वारा जगत का आत्म-प्रकाशन इस प्रकार सगठित होता है कि प्रत्येक जगत सार्वभौम को ही विशिष्टता के जनक के रूप म प्रस्तुत सीमा की तरह घेर लेता है। दूसरे, लेखकीय काय मे वस्तु परकता प्रत्येक पृष्ठ पर इस प्रकार दृष्टिगोचर होनी चाहिए कि वह विषय वस्तु की अभिव्यक्ति बन जाए। काय का जब यह दोहरा अभिप्रेत होगा तब इसकी औपचारिक सरचना क्या रूप ग्रहण करेगी इसकी चर्चा करने की जरूरत नही। जैसे काफ्का के वस्तुपरक तथा रहस्यात्मक विवरणो मे हम एक प्रकार का बिना प्रतीको का प्रतीकवाद पाते हैं तथा जिसमे अपरोक्ष रूप से भी रूपक कोई सूचना नही देता है किन्तु जहा लेखन निरन्तर जीव के जगत मे स्थित होने की घटना पर एक दुर्बोध्यता, जाहिर करता रहता है।

अत लेखक को अपने पूरे युग से सबधित होना होता है। सामाजिक जगत म उसकी स्थिति उसके लेखन-काय की इस विशिष्ट सन्निविष्टता के

आधार पर ही सस्थापित होती है। लेखक का यह सन्निविष्ट होना अन्य साधारण व्यक्तियो के अवस्थित होने के समान एक ठोस वस्तु स्थिति है, जिसमे वह अपने अस्तित्व एव उससे जनित सारी सम्भावनाओ के बारे मे प्रश्न पूछता रहता है। सभाव्य के सदर्भ मे लेखक एक अलगाव, जडता, ऊब, अकेलापन तथा सत्रास की स्थितियों को झेलता है। लेखन कार्य से प्राप्त यह जो समग्रता है, वह वास्तव मे एक व्यापक समग्रता की ऐतिहासिक विशिष्टता भर है। एक लेखक आज जगत मे अपने अस्तित्व को एक विशिष्ट प्रकार के अस्तित्व मे ही जी सकता है। दूसरे शब्दो म, सारे विश्व का जो विरोधाभास है जैसे अणुयुद्ध और जनसग्राम का विरोधाभास यानी आदमी को खत्म करने की आदमी की यह बबर चेष्टा या फिर कुल मिलाकर साथ चलते हुए समाजवाद की सस्थापना—इन सारे विरोधाभासो से लेखक प्रभावित हुए बिना नही रह सकता। जो लेखक अपने अनुभव के दायरे मे इन बातो को नहीं महसूसता, जो आदमी की इस लडाई मे बिलकुल निष्क्रिय तथा नपुसक है वह वास्तव मे एक अभूत जगत मे रह रहा है और अपने लेखन के माध्यम से या तो लोकरजक है या फिर कोई जादूगर। किन्तु वह ठोस वास्तव जगत की बात बिल्कुल नही कह रहा। यह जरूरी नही कि लेखक इस मानवीय सकट का पूरा ब्यौरा अपने लेखन मे दे। बस इतना ही काफी है कि पष्ठ-दर पष्ठ उसका यह दद अस्पष्ट होते हुए भी लिखा जरूर जाए। चूकि जीवन ही जगत का अन्तिम आधार है और कोई भी बात जो अतिरिक्त रूप से जीवन के खिलाफ है उसकी यहा जरूरत नही अत किसी भी लेखन काय मे जो यह उभयवादीयता पाई जाती है उसका मालरो ने अपनी इस उक्ति मे कहा, "लाइफ इज वथ नथिग एण्ड नथिग इज वर्थ लाइफ। लेखक की प्रतिबद्धता यह हुई कि लेखक जगत मे स्थित होने के अपने जीवित अनुभवो को साधारण भाषा के माध्यम से सम्प्रेषित करे। समग्रीकरण और समग्रता तथा जगत और जीव के जगत में स्थित होने के तनाव को वह अपने काय की साथकता मे रखे। अपने लेखकीय पेशे मे लेखक के लिए यह अनिवाय होता है कि विशिष्ट और सावभौम के बीच जो विरोधाभास है वह उस पर पूरी पकड रखे। लेखन का काय, अपने अनुभवो के धरातल पर रहते हुए भी अपने जीवन के निशान्त पर

सावभौमिक स्वीकृति की याद लिए हुए होना है। इसलिए किसी खास घटना की वजह से लेखक बौद्धिक नहीं हुआ करता। वह अनिवायत और पूणत एक बौद्धिक है। लेखक के लिए यह जरूरी होता है कि वह इन दोनो ही धरातलो का प्रत्याख्यापन करे। एक तो अज्ञान का धरातल जहा जगत मे होने का अथ हुआ जगत से अनुकूलित होना तथा दूसरी ओर जगत मे पूरी तरह विमश होते हुए भी इस बात का विश्वास एव स्वीकृति कि जीवन एक निरपेक्ष मूल्य है और लेखक का अपना स्वातन्त्र्य सबक स्वातन्त्र्य मे निहित है।

मई १६६८ के बाद फ्रास म हम देखत है कि वामपथी बौद्धिको की पारपरिक अवधारणा मे और नए क्रातिकारी बौद्धिको की अवधारणा म एक वैचारिक दूरी आई है। सात्र ने बौद्धिक की परिभाषा करते हुए कहा कि केवल बौद्धिक कमरत मे ही कोई बौद्धिक नहीं हो जाता। एक इजीनियर बौद्धिक हो सकता है जबकि उसका सारा काय श्रम पर निभर करता है। व्यवहारिक ज्ञान के प्रविधिकारी अथवा टक्नोक्रट उस समय बुद्धिजीवी हो जाते है जब उनका ज्ञान सावभौमिक उद्दश्य रखत हुए भी किसी विशिष्ट वग या कुछेक विशिष्ट व्यक्तियो की सवाथ प्रयुक्त होन लगता है। अत व्यावहारिक ज्ञान का प्रविधिकारी डाक्टर, इजीनियर, वैज्ञानिक, लेखक या प्राध्यापक कोई भी हो सकता ह। इनम स कोई भी व्यक्ति अपनी-अपनी कायपरिधि म जब इस विरोधाभास को परिलक्षित करने लगता है कि सावभौम का विनियोजन सावभौमिकता क बजाय विशिष्ट व्यक्तियो क हित मे प्रयुक्त हो रहा है तब विरोधाभास का शिकार न केवल परिलक्षित स्थिति है बल्कि प्रविधिकारी स्वय भी है। अपने पेशेवर काय म प्रविधिकारी का ज्ञान प्राप्ति का तरीका सावभौमिक होने हुए भी वह सत्ता और सुविधा प्राप्त वग के हितो म जड जाता है। यहा स्वय उसका अस्तित्व सकट म है। वह दखता है कि उसर कालीमा ने या तो स्वय को अपने-अपने विरोधाभासो म लिया है या फिर स्वय को इन सबो म विरोधाभास दूर हो रखा हुआ है। किन्तु जब कभी ज्ञान के किसी न अपने इस विरोधाभास का अवबोध होता है तब उसकी

परिभाषित होना अस्वीकार कर रहा था। वह यह समझ गया था कि शिक्षा व्यवस्था मे सावभौमिक ज्ञान नही पढाया जाता, बल्कि बुजुवा ज्ञान को ही सावभौमिकता प्रदान की जानी है। वास्तव मे ज्ञान के आधार पर ही तथा ज्ञान से प्रारूप मे ही समाज का निर्माण होना चाहिए। छात्र वग को इसलिए आघात लगता है। क्योकि उसे पता चल जाता है कि वह एक विशिष्ट सस्कृति (बुर्जुवा सस्कृति) के सचालक तथा सहायक की भूमिका मे सलग्न होता जा रहा है।

मई क्राति सवथा अपने-आप मे एक नवीन घटना थी, जिसके लिए कोई भी बौद्धिक कोई पूव कल्पित एव पूर्वावधारित अवधारणा नही रख सका था।

शास्त्रीय बुद्धिजीवियो के लिए सात्र यह कहते हैं कि उनका पुन सस्कार तथा उनकी पुन शिक्षा सभव नही। यह बुद्धिजीवी अपनी वैयक्तिक पूजी की कमाई खाते हैं। इनकी पूजी है इनके द्वारा लिखित कुछ पुस्तकें। वस्तुपरक रूप से ये पुस्तकें एक ठोस परिस्थिति मे अवस्थित है और इन्ही सपुजित पुस्तको की वजह से बौद्धिक एक आम आदमी से बिल्कुल अलग हो जाता है। जहा एक आम आदमी अपनी कही हुई बात की परतो पर और नयी परतो को चढ़ाने से हिचकता नही, वही बौद्धिक ऐसा कुछ भी कहने मे हिचकता है, जो उसके लेखन से भिन्न विचार धारा लिए हुए होता है। यानी बुद्धिजीवियो का वचारिक अतीत उनकी लिखी हुई पुस्तको मे है, जिसे वे पूरी तरह नकार नही सकते। पुस्तकें इन बुद्धिजीवियो का उत्पादन है, उनकी पूजी हैं और वे इन पुस्तको की ब्याज की कमाई खा रहे हैं। अपनी ठोस वस्तुस्थिति मे उनका यह अतीत वतमान के किसी भी परिवतन को यथास्थिति के प्रति एक चुनौती की तरह ही लेता है।

तब बुद्धिजीवी का मिशन क्या हो? सात्र यहा पर एक बडी ही उग्र बात कहते हैं। वे बुद्धिजीवियो से यह अपील करते हैं कि वे अपनी बौद्धिकता भूल जाए। यानी अपने-आप को बुद्धिजीवी कहलाना छोड दें। बुद्धिजीवियो को उस सावभौमिकता को समझना होगा, जिसे जन-समाज वास्तव मे चाहता है। सार्त्र इसे ठोस सार्वभौम की सज्ञा देते हैं। सात्र के

लिए सबसे बडी घटना थी फ्रांस की छात्र क्रांति। अचानक सार्बो और नैनितेर के औद्योगिक क्षेत्र मे नव वाम के अस्तित्व का विस्फोटन हुआ तथा गैस आन्दोलन का जन्म हुआ, जिससे द गॉल की सत्ता खतरे मे पड जाती है। पहली बार सार्त्र पूरी तरह किसी आन्दोलन म सम्मिलित हाते हैं और बडी विनम्रता स छात्र नेता डेनियल कोहिन बेन्दित का साक्षात्कार लेते हैं। फिर से एक बार सार्त्र निस्वार्थ रूप से तथा बडे साहस और प्रतिबद्धता के साथ, एक प्रमुख ऐतिहासिक आन्दोलन का हिस्सा बनते हैं। जिस वामपंथी विचारधारा का वे अब तक मनन करते आए थे, जिसकी उन्होंने प्रतीक्षा की थी और सन १९४० के बाद जिन सिद्धान्तो को उन्होंने अपने जीवन मे जिया था, अचानक वही वामपंथी जगत ठोस आकार ग्रहण करता है। पहली बार किसी आन्दालन के दौरान उन्होंने समाजवाद के उन सब रूपो को मूर्तिमान पाया, जिनकी विशेषताओ से वे अब तक आकर्षित थे। पाप्युलर फ्रण्ट को उन्होने दूर से ही देखा था। 'रेजिस्टेंस' के दौरान एक लेखक की हैसियत से उनका अनुभव उपजा था और जहा अब तक वे द गाल की नीतियो के विरोध मे अल्जीरिया और क्यूबा के मुद्दे पर अकेले पड जाते थे वही अब व एक एस आन्दालन के बीच थे, जा उनसे पूर्णाहूति की माग कर रहा था। यह आन्दालन अपने आप मे बिल्कुल क्रांतिकारी और गण समर्थक था। यह किन्ही पूर्व निर्धारित सिद्धान्तो से प्रतिपादित नही हुआ था किन्तु इसमे एक नवजागरण की आशा, कल्पना की सशक्तता तथा विराट जन-जीवन की ताकत अंतर्निहित थी। इसका उद्देश्य अभिजन विरोधी था और यह आन्दोलन प्रत्येक स्तर के व्यक्ति के लिए समान रूप से स्वायत्त-सत्ता की माग कर रहा था।

सार्त्र ने कोहेन बेन्दित से वार्तालाप के समय कहा कि आपके सारे क्रिया-कलापो का रुचिकर पहलू तो यह है कि आप अपनी ताकत मे कल्पना का प्रयोग कर रहे हैं। आपके पास अपनी पहली पीढी से अधिक कल्पना है। हमारी पढाई ता इस तरह से हुई थी कि हम पहले से ही इस बात के लिए अनुकूलित कर दिया गया था कि क्या सभव है क्या नही। मसलन एक प्राध्यापक से यदि यह पूछा जाए कि 'क्या परीक्षा की विधि को हटा देना चाहिए ?' तब वह कहेगा, 'नहीं, आप परीक्षा की विधि मे

परिवतन तो ला सकते हैं, किन्तु आपकी इससे मुक्ति नही हो सकती।' 'क्यो ?' इसलिए कि वह प्राध्यापक अपनी सारी जिन्दगी परीक्षा लेता रहा है। युवा वर्ग की *कल्पना-शक्ति बहुत अधिक उवर है और यही कारण* है कि इस आन्दोलन मे सत्ता को हिलाकर रख दने की ताक्त निहित है। आपन उन सब बातो को नकारा है, जिनसे आज का समाज निर्मित है।

आने वाले साल और महीनो के दौरान सात्र फ्रासीसी तथा सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी से पूरी तरह कट जाते हैं। कारण पार्टी छात्रा क इस आन्दालन से पूरी तरह सहमत नही थी। शास्त्रीय बुद्धिजीवियो से सात्र कहने हैं कि सक्रियता लाना उनका प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए। राजनीतिक क्रियाओ के लिए महज विचारो का होना ही काफी नर्ह । न उन परिस्थितियो का निर्माण करना होगा, जिनमे जन अपने वि ारा का अनुभव प्राप्त कर सके।

किन्तु दूसरी ओर सात्र स्वय भी एक शास्त्रीय बौद्धिक थे। छात्र-वग युवा नेता चाहता था। उसकी नजर मे सात्र के पास केवल शब्द थे, विश्लेपण की क्षमता या क्राति के वास्तविक अनुभव का बिल्कुल अभाव था। सात्र इस बात को समझने लगे थे। १९६९ मे प्रोफसरो तथा विद्यार्थिया की एक सभा मे उन्ह वक्ता के रूप म नाया गया। विचार का विषय था कि क्राति म सरकारी दमन के विरुद्ध कसा आन्दोलन किया जाए ? अपने इस अनुभव के बारे मे सात्र लिखत हैं

"एक कमरा था विद्यार्थियो तथा प्रोफेसरो से भरा हुआ। वहा केवल घटनाओ का विश्लेपण नही करना था, निणय लेना था। मेरे सामने एक चिट पर लिखा था, 'सात्र, सक्षेप मे बोलिए।' सात्र के श्रोताओ का ध्यान उन्हें सुनने की ओर नही था और जब युवा वग की आम समस्याओ पर उन्होने अपना वक्तव्य समाप्त किया, तब कुछ लोग उन्हें 'हूट' कर रहे थे। कुछ अनमनी तालिया भी बजी। सात्र यह समझने लगे, इस तरह की मीटिंगो मे बोलने के लिए उनके पास कुछ भी नही बचा है। वे न विद्यार्थी थे और न सवहारा। वे तो स्वय स्टार सिस्टम' के एक सितारा थे। एक भेंटवार्ता मे उन्होने कहा भी, "शास्त्रीय बौद्धिको का दौर अब समाप्त चुका है। बुद्धिजीवियो को भी अपना चुनाव लडना होगा।'

सात्र का यह नया रूप तेजस्वी और उत्तेजक था, किन्तु प्रश्न उठता है कि बुद्धिजीवियो से सात्र जिस सक्रियता की माग करते हैं, उसमे कही स्वय अपने प्रारभिक लेखन के प्रति निषेध तो निहित नही ? १९४७ मे सात्र ने कहा था कि शब्द अगर बीमार पड गए हो, तो लेखक उनका इलाज करें, लेकिन अब वे कह रहे थे कि मौलिक बुद्धिजीवी बनने हेतु लेखको को अपनी तथागत बौद्धिकी परियोजनाए छोड देनी चाहिए। जन-आन्दोलन के सन्दर्भ मे वे सिद्धान्तवादियो की भूमिका को पूरी तरह नकारते हैं। उनके इस प्रकार के आत्म-बलिदान का एक और उदाहरण था, उनका क्रातिकारी अखबारो को चलाने के लिए काम करना।

जिस किसी भी क्रातिकारी अखबार ने सात्र का नाम चाहा, उन्होंने उसे अपना नाम दिया। चूकि सात्र स्वय 'स्टार सिस्टम' का एक ध्रुव-तारा थे, इसीलिए उन्होंने चाहा कि उनके नाम का उपयोग करके अखबार निकाले जाए, ताकि इन अखबारो की बिक्री बढे। असल मकसद तो यह था कि इन सभी अखबारो को एकीकृत किया जाए और जन-आन्दोलन को और अधिक प्रेरित किया जाए। 'सपादकीय' का अर्थ था आन्दोलन करने वालो को सहायता देना, उनके अनुभवों को शब्दो मे व्यक्त करना। सात्र कहते हैं, "हमारा काम यह नही कि हम मजदूरो से यह बताए कि उन्हें आन्दोलन कैसे करना चाहिए या हम आन्दोलन की अवधारणा उनके सामने रखें। हमारा तो बस इतना ही काम है कि हम ऐसी भाषा का सजन करें जो अनिवार्य राजनीतिक यथार्थ को स्पष्टत या प्रत्येक तक पहुचा सके।' बौद्धिको से सात्र आगे कहते हैं

"मेमोरेण्डम पर दस्तखत करके, जुलूस निकालकर या वियतनामी युद्ध की निन्दा करने से क्या होगा ? चाहे लाखो लोग इसमे लगे रहें—कहीं कुछ नही होगा, किन्तु अगर कुछ चुने हुए बौद्धिक गन्दी बस्तियों मे जाए ऑक्लड पोर्ट पर जाए, युद्ध फैक्टरियो मे जाए तो फर्क जरूर पड़ेगा। मैं समझता हू कि अपने दफ्तर मे बैठकर जो बौद्धिक लड़ाई करता है, वह प्रतिक्रातिकारी है, चाहे वह कुछ भी लिखे। बौद्धिक का दायित्व केवल बौद्धिक होना ही नही बल्कि उस सक्रियता मे है, जहा वह अपनी को दमितो के लिए समर्पित करता है।"

मिसाल के तौर पर उस जमन बौद्धिक को लीजिए, जो एक ओर हिटलर को छोडकर भाग गया और नाजीवाद की निन्दा करता रहा तथा दूसरी ओर हॉलीवुड के लिए 'स्क्रिप्ट' लिखकर पैसे भी कमाता रहा। हिटलर के कृत्यो के लिए वह उतना ही जिम्मेदार है, जितना वह जमनी मे सब कुछ देखकर भी आखें बन्द किए रहा।

इसी प्रकार वियतनाम युद्ध की निन्दा करके या राजनीतिक बौद्धिको के भाग्य की विडम्बना देखकर अमेरिकन बौद्धिक उन विश्वविद्यालयो मे पढाते रहे, जहा युद्ध पर शोध काय होते हैं। सात्र की नजर मे बौद्धिक, दमन और हत्या के लिए उतने ही जिम्मेदार हैं, जितनी कि सरकार है या सरकारी सगठन है। उसी प्रकार सात्र कहते हैं "बौद्धिक अगर तन-मन से व्यवस्था के विरोध मे नही लगता, तो इसका मतलब यह है कि वह व्यवस्था का समथन कर रहा है और उसे इसकी सजा मिलनी चाहिए।

इन बातो से हमे सात्र की शक्ति का पता चलता है। उनके सुधार-वादी उद्देश्य का पता चलता है। यह सात्र की ही हिम्मत थी कि वे ऐतिहासिक विकास के प्रति खुले रहे और नयी आवाज भी सुनते रहे। बौद्धिक की भूमिका के प्रति उनका एक निश्चित दृष्टिकोण बना रहा। बाहरी माग, सामूहिकता मे शामिल होना, जनमानस को समझना इन तथ्यो को सात्र आत्मसात कर लेते हैं। छठी मजिल पर रहने वाले सात्र अब जमीन पर भीड के साथ चलते हैं और कही भी वे भीड से अलग अपने-आप को 'विशिष्ट' नही कहते। वे तो कहते है

"आज मैं सोचता हू कि अकेले सोचने से वर्ग मे सोचना बेहतर है। राजनीतिक कम के लिए हम बौद्धिको की विचारधारा बेकार है। हमे तो वह स्थिति पैदा करनी होगी जहा जन स्वय अपनी विचारधारा का अनुभव करे। बुद्धिजीवी अपने कौशल के लिए उपयोगी हैं। वे लोगो को सगठित कर सकते हैं, अपनी बात दूसरो तक पहुचा सकते हैं और सबसे बडी बात यह है कि कामगारो की अपेक्षा वे प्रेस तथा पुलिस के सामने चजनी पडते हैं।'

हर्बर्ट मार्कुस से बात करते हुए सार्त्र कहते हैं कि बौद्धिको को अब

श्रमिक और छात्रों की जरूरतों का ख्याल रखना होगा। उन्हें जन के साथ सम्मिलित होना होगा। क्योंकि जन स्वयं अपनी राह खोज सकता है। जहां मार्क्स कहते हैं कि प्रगतिशील आन्दोलन में बुद्धिजीवी या बौद्धिक हमेशा मूर्तिमान कर सकता है या उनमें निहित अवधारणाओं का विपरीकरण कर सकता है, वहीं सार्त्र कहते हैं कि जन अपने बारे में खुद ही सोचने में सक्षम है। बुद्धिजीवी को जन की सोच के दायरे का बढ़ाने की जरूरत नहीं और न ही उसके विचारों का प्रतिपादन करने की आवश्यकता है। यह सही है कि परम्परा में श्रमिक और बुद्धिजीवी दुनिया साथ रहे हैं, किन्तु अब श्रमिक वर्ग के विकास के साथ यह स्पष्ट है कि बौद्धिक सर्वहारा के विचारों को चमका तो सकता है, किन्तु उनका उत्पादन नहीं कर सकता।

मार्क्स कहते हैं, "मैं इससे सहमत नहीं क्रांतिकारी समाज में जो समस्याएं सामने आती हैं, जैसे प्रेम की समस्या, मनोवेग की समस्या, या फिर एक आनन्दमय जगत की अनिवार्यता का महसूस होना, ये सारी ही बातें पुरानी श्रेणी के बुद्धिजीवियों द्वारा ही प्रतिपादित की गई थीं। क्या हम इन सबको झुठला दें?"

सार्त्र—हां, मैं इन सबको बदलना चाहता हूं। वैयक्तिक रूप से यह ठीक है कि मैं स्वयं भी एक पुराने प्रकार का बुद्धिजीवी हूं।

मार्क्स—हां, मैं भी, किन्तु मैं इसको चुनौती नहीं देता। मुझे इससे कोई गिला नहीं। मुझे शिकायत है अपने-आप से।

सार्त्र—किन्तु मैं, मैं स्वयं अपनी चुनौती हूं। मेरी समझ में शास्त्रीय बुद्धिजीवी वह बुद्धिजीवी है, जिसको विलुप्त हो जाना चाहिए।

अतः सार्त्र ने 'साहित्य क्या है' अपनी इस पुस्तक में २० साल पहले शब्द की जिस शक्ति को समझा था और जिसका व्यवहार वे अब तक करते आए थे अचानक मानो वह व्यवहार बदल जाता है। शब्द की सीमा लेखक की समझ में आ जाती है। जहां तक सार्त्र का फ्लॉबेट पर काम करना था, इसको वे एक समय बिताने का साधन भर कहते हैं। शास्त्रीय बुद्धिजीवी अब अपना छः मंजिला परिवेश छोड़कर सड़क पर था। वह अब जन का एक हिस्सा था। सार्त्र के तर्कों में एक अजीब तरह का

विरोधाभास दृष्टिगोचर होता है। सार्त्र अब उन सभी बुर्जुवा मूल्यों के प्रति आक्रामक हो जाते हैं जो कि स्कूल तथा घर में सिखाए जाते हैं और संचार जगत के माध्यम से जिनका प्रचार किया जाता है।

तब क्या सार्त्र ने लिखना बन्द कर दिया ? एक ओर जहां वे बौद्धिकता से जनहित और जनसेवा में लगने को कह रहे थे, जहां वे बौद्धिकों के युग की समाप्ति का ऐलान कर रहे थे वहीं वे स्वयं फ्लाबट पर काम भी कर रहे थे। एक ऐसा भीमाकार ग्रन्थ जिसको आम पाठक शायद ही पढ़े। अपने इस विरोधाभास से दोहरी भूमिका की उलझन से सार्त्र स्वयं परिचित थे। वे पूरी ईमानदारी से अपनी इस कमजोरी को अपने आत्मकथन में स्वीकार करते हैं।

सार्त्र के बौद्धिक कैरियर में अभियोजित साहित्य के प्रति उनका आग्रह अपने आप में एक मिसाल था।

५० वर्षों तक किसी धार्मिक कृत्य की तरह लेखन धर्म निभाने के बाद एक के बाद एक मानव जगत के आयामों को अभिव्यक्त करने के बाद अपने पाठकों, अपने प्रेक्षकों को चिन्तन तथा क्रिया का निर्देशन देने के बाद, सार्त्र में एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया। सार्त्र अब आदर्शवाद से जाग चुके थे, जैसा कि वे अपनी आत्मकथा वर्ड्स में लिखते हैं "मैं बदल गया हूं। मैं अब यह बताऊंगा कि अपने लेखन की एप्रेंटिसगिरी से मैंने हिंसा की कब और कितनी सेवा की। किस तरह मेरा कृतित्व में मेरी कुरूपता सामने आई जो कि एक लम्बे समय तक मेरा नकारात्मक आशय बनी रही थी—एक अनबूझ जीव चूणक जिसमें एक बेहतरीन बच्चा लुप्त हो गया वास्तविकता के तेजाब का वह सैलाब जिसमें मेरे भ्रमों के झीने पर्दे एक एक कर गलते चले गए। मैं वह कारण भी बताऊंगा कि इतने व्यवस्थित रूप से क्यों मैं अपने खिलाफ सोचने लगा ? वह सच्चाई सामने रखूंगा, जिसने मुझे इतना दुख दिया अतीत पर छाए रहने वाले भ्रम टुकड़े-टुकड़े हो गए। अमरत्व शहादत और मुक्ति का खूबसूरत भवन, बस अब ध्वस्त होने ही वाला है। मैंने तहखाने में बन्द 'होली घोस्ट', अपनी पुरानी आस्था के उस पवित्र भूत का गला पकड़ लिया है, जिसे अब बाहर फेंकने ही वाला हूं। नास्तिकता एक लम्बी और

कठिन यात्रा है, किंतु मैं अब अपने आखिरी पड़ाव पर पहुच चुका हू। मेरा वास्तविक काय गया है, मैं यह निर्भ्रान्त रूप से जानता हू। पिछले दस वर्षों से मैं जाग रहा हू। मैं अपने खट्टे-मीठे पागलपन से जाग चुका हू। मैं अपने आप से नही भाग सकता। सच्चाइयो से कौन इन्कार कर सकता है? उन बातो को सोचकर केवल हसा जा सकता है। मैं फिर एक बिना टिकट यात्री बन गया हू जैसा कि मैं सात साल की उम्र मे था। टिकट कलेक्टर मेरे डिब्बे मे घुस आया है। वह मेरी ओर देखता है। उसकी नजर का तीखापन कम हो गया है। मुझे देखकर वह आगे बढ़ जाना चाहता है। अपना ट्रिप वह भी शान्ति से पूरा करना चाहता है। मुझे न छेड़ने का कोई भी बहाना उसे मिल जाए, बस वह सन्तुष्ट हो जाएगा, कोई भी बहाना। दुर्भाग्य से मुझे भी कुछ नही सूझता मैं अब अपने बहानो को ढूढने की कोशिश भी नही करना चाहता। हम बेचैन एक-दूसरे को देखते रहते हैं, जब तक ट्रेन गन्तव्य तक नही पहुच जाती है, जहा मैं अच्छी तरह जानता हू कि कोई मेरी प्रतीक्षा नही कर रहा है।''

यह एक ईमानदार और खूबसूरत आत्म चित्रण है। लेखन से निर्वाण की पुरानी हुडक अब नही है, लेकिन सात्र को कोई नयी दिशा नही मिली। शब्दो की सीमित शक्तियो का भ्रम टूट चुका है। अब समय चूकता जा रहा है। वे जानते हैं उन्हे क्या करना चाहिए किन्तु, पुरानी आदत से लाचार हैं। 'मैंने ऑफिस छोड दिया है, लेकिन बासा नही छोडा। मैं अब भी लिखता हू और क्या कर सकता हू?''

भ्रम टूट चुके हैं, लेकिन वे लिखते रहेंगे बिना किसी पूर्ण विश्वास या निश्चित धारणा के। वे बदल भी गए और नही भी बदले।

आत्म-स्वीकृति चलती रहती है धीरे धीरे वह पूरे वक्त मे आ जाती है, ''यह एक आदत है और फिर मेरा यह व्यवसाय है। एक लम्बे अरसे से मैंने एक तलवार की तरह कलम उठा ली है। मैं जानता हू-अब हम शक्तिहीन हो चुके हैं। कोई बात नही मैं लिख रहा हू और किताबें लिखता रहूगा। उनकी जरूरत है, जो भी हो उससे कुछ तो पूरा होता है। संस्कृति कुछ नही बचाती, न व्यक्ति, न वस्तु, औचित्य भी नही, लेकिन यह मानव की एक परियोजना है, जिसमे वह स्वयं का प्रक्षेपण करता है। वह इसमे

स्वय को पहचानता है। वह दोषदर्शी दपण ही उसे सही तस्वीर दिखाता है। वह पुराना, ठहरा हुआ छद्म और वचक रूप मेरा चरित्र भी है। आदमी को किसी मनोरोग से छुटकारा मिल सकता है, अपने-आप से नही।"

हालाकि अब वे चूक गए हैं, धुधले पड गए हैं, अपमानित हैं, उपेक्षित हैं, एक ओर रख दिए गए हैं, कितु पाच साल के बच्चे की सभी खासियतें उस प्रौढ और परिपक्व लेखक मे ढूढना अभी बाकी है। अधिकाशत वे दबी रहती हैं, वक्त टालती हैं किंतु ध्यान जैसे ही हटता है, वे दूसरे रूप मे उभर आती हैं।

"मैं ईमानदारी से अपने समय के लिए लिखूगा लेकिन अपनी वतमान प्रसिद्धि पर मुझमे आक्रोश जागता है। यह मेरी मुहिम नही है। मैं जीवित हू, क्या इसीलिए पुराने सपनो को भुला देना उचित है ? क्या यह नही हो सकता कि मैं अब भी उन्हे सभाले हुए रहू ? मैंने उन्हे अनुकूलित कर लिया है। चूकि अनाम मरने का अवसर मैं खो चुका हू, इसलिए अपने-आप को खुश करने के लिए कभी-कभी यह भी सोचने लगता हू कि मुझे मेरे जीवन-काल मे गलत समझा जा रहा है। ग्रिसेल्डा मरा नही, पार्डेलन जीवित है, स्त्रॉगाफ भी। मेरी जवाबदेही उनके प्रति है, मैं ईश्वर मे विश्वास नही करता। अत हिसाब लगाइए—जहा तक मेरा सवाल है, कभी कभी हैरानी होती है कि कही मैं हार-जीत का खेल तो नही खेल रहा हू ? पूरी मेहनत से खेल रहा हू कि शायद हजारो पहलुओ से जीतने की मेरी उम्मीद कभी पूरी हो कि शायद सब कुछ ठीक हो जाए और वैसी स्थिति मे फिलोक्तेतीज बन जाऊगा—वह महान् अपग, जिसने अपना सब कुछ बिना शत के दिया, लेकिन हमे यह मान लेना चाहिए कि अपने पुरस्कार का उसे भी इतजार है।'

सात्र ने अचानक दिशा बदल दी है, ईमानदारी से बौद्धिक छल-कपट छोड दिया है। वे बदल गए हैं, लेखन के माध्यम से। निर्वाण का भ्रम छोडकर अब बिना किसी भ्रम के वे आदत वश लिखते रहेंगे। लेखन जैसा भी हो किन्तु एक दपण तो प्रस्तुत करता है। वह मोड अब आया, जब हमे एक पचास साल के आदमी मे बच्चे की विशेषता ढूढदी है। पुराने सपने

थ। बचपन के हीरो को सात्र याद करते हैं—प्रिसेरडा, पार्डेलन, स्त्रोगाफ, फिलोमेतेर्तीज। वे कहते हैं

"आप हिसाब लगाइए, मैं नही लगा सकता। एक स्तर पर य भ्रम समाप्त हो चुके हैं, लेकिन दूसरे स्तर पर जीवित हैं। भ्रम टूट गए है, लेकिन सात्र अब भी नही बदला है। उसने अपनी कमजोरियो को स्वीकार किया है, आत्म विश्लेषण किया है। अपनी आलोचना की है, लेकिन लिखना नही छोड़ पाया है।"

सात्र शब्दो से सम्मोहित रहे और अत तक शब्दो का मोह नही छोड पाए। भाषा चेतना की अभिव्यक्ति का औजार है, इस विश्वास के साथ व जिन्दगी भर अभिप्रेत सत्य को भाषा म ढालने का प्रयास करते रहे, पर क्या वे सफल हो सके ? क्या व जगत के प्रति अपने लेखन के माध्यम से अपनी अनिवार्यता हासिल कर पाए ? विभिन्न धरातलो पर उन्होंने हमे जिता दिया है, जोखिम उठाने का उनका फैसला, उसके फल, गम्भीर अध्ययन को प्रोत्साहित करते रहेंगे, आज भी और आने वाली अनेक पीढियो तक। निर्विवाद रूप से हम यह स्वीकार करते है कि सात्र का सजन, उनकी कृतियां, अपने समय के व्यक्ति क साहसिक कारनामो, उसके चिन्तन के आयामो को पूर्णत प्रस्तुत करती हैं। कल्पना एव यथार्थ के बीच का तनाव सामूहिक राजनीतिक क्रिया-कलापो के बीच उनकी प्रतिबद्धता सात्र के जीवनकाल मे उनके अंतर्भाग म थी।

समस्याओं का निदान नही हो पाया, उनके प्रयासो पर असफलता की मुहर लगी। उन्होने स्वीकार किया, फिर इसका मुकाबला किया, वे बार-बार प्रयत्नशील रहे। व्यक्तिगत बौद्धिक उपलब्धियो का यह एक ऐसा पडाव था, जो अपने समय का अपूर्व असमानान्तर काय है, इतिहास से विरक्त।

सामाजिक बहुलता से विमुख सात्र इतिहास मे अपनी पीढी के किसी भी लेखक से अधिक वयक्तिक प्रतिबद्धता की सभावनाओ पर प्रकाश डालते हैं। विकास के दौरान सात्र को यह विश्वास हो गया था कि अपना गतव्य उन्हें अपने जीवनकाल मे ही हासिल हो गया है। फ्लाबर्ट का तीसरा खड प्रकाशित होने के तीन वर्ष पश्चात्, उनके सत्रहवें जन्मदिन पर मिशेल

कातात ने उनसे मुलाकात की। मिशेल सात्र की नजदीकी थी। बडी अतरगता से गहराई मे उतरकर उन्होंने सवाल किए।

सात्र से उनकी वृद्धावस्था के बारे मे पूछते हुए उन्होंने उनके सारे जीवन के परिप्रेक्ष्य, इन्द्रियो की शिथिलता और दष्टिहानि की बात की। भावुकताहीन तिक्त सात्र लगभग अधे हो चुके थे। उनकी आत्मदृढता वरकरार थी। उनमे कोई अहकार नही था, न उनका व्यवहार अभद्र था।

उन्होने जो उत्तर दिए, उनम उन्होने अपनी शक्ति या अपने महत्त्व का लगातार खडन किया।

१६७३ मे सात्र के हाथ मे एक नया दायित्व आया, 'दैनिक लिबरशन' के सपादन का। पूजी नही, सहयोग नही, विज्ञापन नही, फिर भी वह जनमानस का पत्र था।

प्रकाशन परियोजना सफलता की ओर अग्रसर होती है। सात्र उससे अत तक जुडे रहे, हालाकि बीमारी के कारण अब वे मुख्य सपादक की भूमिका नही निभा पाते थे। उन्हे एक अन्य परियोजना भी छोडनी पडी थी, फ्लॉबर्ट के चौथे खड की। आख काम कर नही रही थी लिखना अब सभव नही था, काम करने की उन्हें मनाही थी और जब स्थिति यहा तक पहुच गई, तब भी पूरे मन प्राण से वे दूरदर्शन कायक्रम की योजना मे जुट गए, जिसमे इस शताब्दी के पहले पिचहत्तर वर्षों का हिसाब उन्हें देना था। यह कायक्रम अजाम नही पाता है। जो ताकत होनी चाहिए थी वह जाती रही। व्यवस्था इस कायक्रम की प्रतिक्रिया से डरती थी, इसलिए सरकारी अनुमति नही मिली। मुक्ति के दार्शनिक सात्र ने जिस प्रकार इस शताब्दी को देखा है, एक आम फ्रासवासी नही देख सकता।

सात्र फिर भी लगे रहे। अन्तिम दिना मे वे अपने मित्र पियरे विक्टर की सहायता से 'पावर एण्ड फ्रीडम' नाम्क पुस्तक पर काम कर रहे थे।

सात्र को यह विश्वास हो गया था कि 'अनेक मे एक' बनकर रहने का गतव्य वे प्राप्त कर चुके हैं।

वे कहते हैं

"मैंने एक जीवन जिया, मैंने लिखा। मुझे किसी बात का पश्चाताप

नही।"

प्रश्नकर्त्ता पूछता है

"इसका मतलब जिन्दगी आप पर मेहरबान रही ?"

वे उत्तर देते हैं

"यदि पूरे जीवन को देखू तो कहूगा, जी हा, मुझे किसी बात की शिकायत नही। जिन्दगी ने मुझे यह सब कुछ दिया, जिसे मैं चाहता था। लेकिन मैंने यह भी अनुभव किया है कि जो कुछ भी मिला वही सब कुछ नही था इसके लिए हम-आप कर भी क्या सकते हैं ?"

वे हसे। कमरे मे एक ठहाका गूजा।

'इस हसी को कायम रखिएगा बस।"

इतना कहकर सात्र खामोश हो गए। वार्ता का समय समाप्त हो चुका था।

1983 के मार्च के महीने मे यह शब्दो का मसीहा महाप्रयाण कर गया।

OOO

सदर्भ सूची

WORKS BY SARTRE

(A) PHILOSOPHY

1936 L'Imagination (Presses Universitaires) Imagination (University of Michigan, 1962)

1937 "La transcendance de I'Ego," Recherches Philosophiques VI (1936-1937) Transcendence of the Ego (Noonday, 1957),

1939 Esquisse d une theorie des emotions (Hermann) The Emotions, Outline of a Theory (Philosophical Library, 1948)

1940 L'Imaginaire, psychologie phenomenologique de l'imagination (Gallimard) Psychology of Imagination (Philosophical Library, 1948)

1943 L'Etre et le Neant (Gallimard) Being and nothingness (Philosophical Library, 1956)

1960 Critique de la raison dialectique, I (Gallimard)

(B) *FICTION*

1938 La Nausee (Gallimard) Nausea (New Directions, 1949)

1939 Le Mur (Gallimard) The wall and Other Stories (New Directions, 1948)

1945-49 Les Chemins de la liberte (Roads to Freedom) I L'Age de raison, II Le Sursis, III La Mort-

dans l'âme (Gallimard) Published by Knopf Age of Reason (1947), The Reprieve (1947), Troubled Sleep (1951)

(C) DRAMA

1943 Les Mouches (Gallimard) In No Exit and The Flies (Knopf 1947)

1944 Huis-clos (Gallimard) In No Exit and The Flies (Knopf 1947)

1946 Morts sans sepulture (Gallimard) The Victors, in Three plays (Knopf, 1949)

1947 Les Jeux sont faits (Nagel) The Chips Are Down (Lear, 1948)

1948 Les Mains sales (Gallimard) Dirty Hands, in three plays (Knopf, 1949)

1949 L Engrenage (Nagel) In the Mesh (Dakers, 1954)

1951 Le Diable et le Bon Dieu (Gallimard) In the Devil and the Good Lord and Two Other Plays (Knopf 1960) Published in England as Lucifer and the Lord (Hamilton, 1952)

1954 Kean (Gallimard) Kean in the Devil and the Good Lord and Two Other Plays (Knopf 1960)

1955 Nekrassov (Gallimard)

1960 Les Sequestres d Altona (Gallimard)

(D) ESSAYS AND AUTOBIOGRAPHICAL WORKS

1946 Descartes (Trait) Introduction and Selected texts

1947 L Existentialisme est un humanisme (Nagel) Existentialism (Philosophical Library, 1947)
1947 Situations I (Gallimard) Selections in Literary and Philosophical Essays (Philosophical Library, 1957)
1947 Baudelaire (Gallimard) Baudelaire (Horizon, 1949)
1947 Reflexions sur la question juive ed Paul Morihien (Gallimard) Anti Semite and Jew (Schocken, 1948)
1948 Situations II (Gallimard) Contains articles published in Qu'est-ce que la litterature ?
1948 Qu'est-ce que la litterature ? (Gallimard) What is Litterature ? (Philosophical Library, 1947)
1948 Visages (Seghers)
1949 Situations III (Gallimard) Selections in Literary and Philosophical Essays (Philosophical Library, 1957)
1949 Entretiens sur la politique (in collaboration with David Rousset and Gerard Rosenthal) (Gallimard)
1952 Saint-Genet, comedien et martyr (Gallimard) Saint Genet, Actor and Martyr (Braziller, 1964)
1964 Les Mots (Gallimard) The Words (Braziller, 1964)